'कौल-कल्पतरु' चण्डी

महा-पर्व नवरात्र

विशेषाङ्क

चित्रकार :
श्रीरामप्रसाद जी, काशी
सन् १९३३

'ज्ञान-कर्म-भक्ति' द्वारा जगत्-स्वरूपा भगवती श्रीदुर्गा के
जानने योग्य नौ साधना-मय-स्वरूप

प्रथमं शैल-पुत्रीति, द्वितीयं ब्रह्म-चारिणी। तृतीयं चन्द्र-घण्टेति, कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ।।
पञ्चमं स्कन्द-मातेति, षष्ठं कात्यायनी तथा । सप्तमं काल-रात्रीति, महा-गौरीति चाष्टमम् ।।
नवमं सिद्धि-दात्रीति, नव-दुर्गाः प्रकीर्तिताः।।

महा-पर्व 'नवरात्र'-विशेषाङ्क

नव-रात्र-व्रत-पूर्वक महा-पूजा
श्रीदुर्गोत्सव -विवेक
'नवरात्र'-महिमा और 'नवरात्र'-पूजन
'नवरात्र'-अर्चा की प्राचीनता
'नवरात्र'-महोत्सव की भावना
नव-चण्डी-विधान
श्रीचण्डी-पूजा
शारदीय नवरात्र-रहस्य
नव-पत्रिका-पूजन
'नवरात्र' में 'कलश'- स्थापन
श्रीदुर्गा-विधान
श्रीदुर्गा-पूजा की विशिष्ट विधियाँ
'कलश' एवं 'जयन्ती' का माहात्म्य
भगवती दुर्गा का मानसिक पूजन
भगवती श्रीदुर्गा का षोडशोपचार पूजन
श्रीदुर्गा-स्तवन प्रयोग-विधि
श्रीवन-दुर्गा-विधान
'श्रीदुर्गे! स्मृतेति'-मन्त्र की साधना
श्रीमहा-नवार्ण-मन्त्र की साधना-विधि
श्रीशूलिनी सुमुखीकरण स्तोत्र
श्रीदुर्गा-पूजाङ्ग-होम-विधि
श्री बृहत् महा-सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्रम्
'सप्तशती'-पाठ की महत्त्व-पूर्ण विधियाँ
'कालिका'-पुराणानुसार 'नवरात्र'-पूजा-पद्धति
कुमारी-पूजा, देवी-नैवेद्य
शरत् -पूर्णिमा : 'लक्ष्मी-इन्द्र-कुबेर-पूजन'

महा–पर्व

नवरात्र

विशेषाङ्क

नवरात्र-महिमा

नवरात्र-पूजन

नवरात्र-रहस्य

नव-चण्डी-विधान

एवं

श्रीदुर्गा-पूजा की विशिष्ट विधियाँ

* * *

सम्पादक

रमादत्त शुक्ल

ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा–वाणी आध्यात्मिक शोध–संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ०९४५०२२२७६७

प्रकाशक :
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६
दूर-भाष : (०५३२)-२५०२७८३

पञ्चम संशोधित एवं संवर्धित सचित्र संस्करण
महा-पर्व नवरात्र, शुभ-कृत् २०६६ वि० (१९ सितम्बर,२००९)
सर्वाधिकार सुरक्षित

'सप्तशती'-सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें

- मन्त्रात्मक सप्तशती
- अद्भुत सप्तशती
- सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती)
- हवनात्मक अद्भुत सप्तशती
- सप्तशती के विविध प्रकार
- सम्पुटित श्रीदुर्गा सप्तशती
- लघु चण्डी
- शत-चण्डी-विधान
- विशुद्ध चण्डी
- श्री रुद्र-चण्डी
- सप्तशती-सूक्त-रहस्य
- सप्तशती-तत्त्व

♦ सप्त-दिवसीय श्रीदुर्गा सप्तशती ♦

अनुदान : १८०-०० रु०

मुद्रक :
परा-वाणी प्रेस
अलोपी देवी मार्ग
प्रयाग-राज (उ०प्र०)-२११००६

महा–पर्व

नवरात्र विशेषाङ्क

अनुक्रम

'नवरात्र' में नव-शक्तियों की साधना

'ध्यान' एवं 'प्रणाम-मन्त्र' (सचित्र)

[१] नवरात्र १

[२] नव-रात्र-व्रत-पूर्वक महा-पूजा ३

[३] श्रीदुर्गोत्सव-विवेक ५

[४] नवरात्र-महिमा और नवरात्र-पूजन ९

[५] नवरात्र-अर्चा की प्राचीनता १९

[६] नवरात्र-महोत्सव की भावना २४

[७] नवरात्र-व्रत तथा कुमारी-पूजन २६

[८] नव-चण्डी-विधान २९

[९] वासन्ती-पूजा ३३

[१०] वासन्तीय नवरात्र ३५

[११] श्रीचण्डी-पूजा ३६

[१२] 'नवरात्र'-पूजा की महिमा ३९

[१३] श्री शारदीय नव-रात्र ४१

[१४] शारदीय नवरात्र-रहस्य ४५

[१५] शारदीय महा-पूजा-महोत्सव ४९

[१६] 'ऋग्वेद' में शारदीय दुर्गा-पजा ५१

[१७] शारदीय महोत्सव ५३

[१८] श्रीमद्-देवी-भागवत में शारदीय नवरात्र ६५

[१९] नव-पत्रिका-पूजन ६९

[२०] शारदीय नव-रात्र में कलश-स्थापन ७१
[२१] श्रीदुर्गा-विधान ७१
[२२] विशेष कड़ाही-पूजन ९७
[२३] श्रीदुर्गा-पूजा की विशिष्ट विधियाँ ९९
[२४] आओ, माँ शारदा की आराधना करें! ११७
[२५] 'कलश' एवं 'जयन्ती' का माहात्म्य १२१
[२६] भगवती दुर्गा का मानसिक पूजन १२३
[२७] श्रीदुर्गा-अष्टाक्षर-मन्त्र का 'जप' १२६
[२८] भगवती श्रीदुर्गा का षोडशोपचार पूजन १२९
[२९] श्रीदुर्गा-स्तवन प्रयोग-विधि १३१
[३०] सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवन-दुर्गा-विधान १३४
[३१] 'श्रीदुर्गे! स्मृतेति'-मन्त्र की साधना १३९
[३२] श्रीमहा-नवार्ण-मन्त्र की साधना-विधि १४५
[३३] श्रीशूलिनी सुमुखीकरण-स्तोत्र १४७
[३४] 'श्रीदुर्गा-हवन' में सात आहुतियों का निषेध १५०
[३५] संक्षिप्त श्रीदुर्गा-पूजाङ्ग होम-विधि १५१
[३६] श्रीबृहत् महा-सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्रम् १५३
[३७] सप्तशती-पाठ की दो महत्त्व-पूर्ण विधियाँ १५५
[३८] कालिका-पुराणानुसार 'नवरात्र'-पूजा-पद्धति १५७
[३९] कुमारी-पूजा १८१
[४०] चैत्रादि मासों, प्रतिपदादि-तिथियों एवं रवि-वारादि दिनों में देवी-नैवेद्य १८२
[४१] 'शरत्-पूर्णिमा' में 'लक्ष्मी-इन्द्र-कुबेर-पूजन' १८३

***

दो शब्द

'नवरात्र' में नव-शक्तियों की साधना

'नवरात्र' से ९ रात्रियों का प्रयोजन नहीं है। नव-शक्तियों से युक्त होने से 'नव-रात्र' कहा जाता है–'नव-शक्तिभिः संयुक्तं नवरात्रं तदुच्यते।' इस प्रकार नवरात्र में साधक ज्ञान-कर्म-भक्ति द्वारा नव-शक्तियों से युक्त होते हैं। नव-शक्तियों से युक्त होने हेतु 'महा-काल संहिता' में 'तीन कल्प' बताए हैं–

१. उत्तम कल्प : इसमें 'अष्टादश-भुजा उग्र-चण्डा दुर्गा' (महा-लक्ष्मी) का प्रबोधन आश्विन 'कृष्णा नवमी' के मध्य काल में 'करवाल' (खड्ग) में कर '३२ अक्षरवाले मन्त्र' से 'महा-माया' की पूजा 'आवरणार्चन'-सहित 'अमावास्या' तक की जाती है। फिर 'शुक्ला प्रतिपदा' में 'घट' स्थापित कर उसके निकट या ऊपर उस 'करवाल' को प्रतिष्ठित कर उसमें पूर्व-वत् पूजा करते हुए प्रति-दिन 'नौ दुर्गाओं' की पूजा करने का नियम है। इन 'नव-दुर्गा' के नाम निम्न प्रकार हैं- १. रुद्र-चण्डा, २. प्रचण्डा, ३. चण्डी (चण्डोग्रा), ४. चण्ड-नायिका, ५. चण्डा, ६. चण्ड-वती, ७. चण्ड-रूपा, ८. अति-चण्डिका, ९. उग्र-चण्डा।

२. मध्यम कल्प : इसमें 'षोडश-भुजा भद्रकाली दुर्गा' (महा-काली) का 'प्रबोधन' आश्विन 'कृष्णा चतुर्दशी' में 'यन्त्र' या 'मूर्ति' (प्रतिमा) में कर 'अमावास्या' तक प्रति-दिन पूजन कर 'शुक्ला प्रतिपदा' के प्रातः-काल में 'घट' स्थापित कर उसके ऊपर या निकट उक्त 'यन्त्र' या 'प्रतिमा' को प्रतिष्ठित कर 'शुक्ला नवमी' तक '९ दिनों' पर्यन्त उनका एवं पृथक्-पृथक् '९ दुर्गाओं' का अर्चन कर 'दशमी' में 'विसर्जन' करने की विधि है। इस 'कल्प' में पूजनीया 'नव-दुर्गा' के नाम इस प्रकार हैं– १. शैल-पुत्री, २. ब्रह्म-चारिणी, ३. चन्द्र-घण्टा, ४. कूष्माण्डा, ५. स्कन्द-माता, ६. कात्यायनी, ७. काल-रात्रि, ८. महा-गौरी, ९ सिद्धि-दात्री।

३. तृतीय कल्प : इसमें 'दश-भुजा कात्यायनी दुर्गा' (महा-सरस्वती) का 'प्रबोधन' आश्विन 'शुक्ला षष्ठी' के सायं-काल में 'बिल्व-शाखा' में कर, 'शुक्ला सप्तमी' में उस 'शाखा' को घर में लाकर स्थापित कर उनका 'शुक्ला नवमी' तक '३ दिनों' पर्यन्त अर्चन कर 'दशमी' में 'विसर्जन' करते हैं। इस 'कल्प' में 'मध्यम कल्पोक्त' 'नव-दुर्गा' का ही पूजन किया जाता है।

'मध्यम' अर्थात् 'भद्रकाली दुर्गा-कल्प' के सम्बन्ध में 'लिङ्ग-पुराण' के अनुसार आश्विन 'कृष्णा एकादशी' में उपवास कर 'द्वादशी' में 'एक-भुक्त' (एक बार भोजन करनेवाला) बनकर 'त्रयोदशी' में 'भुक्त-योगी' होकर 'चतुर्दशी' में 'यन्त्र' या 'मूर्ति' में 'प्रबोधन' करना चाहिए।

'यामल तन्त्र' के अनुसार 'प्रतिपदा' में ही 'कलश' की स्थापना होनी चाहिए। इस उक्ति के अनुसार उक्त 'तीनों कल्पों' में 'कलश' की स्थापना 'प्रतिपदा' में ही होती है, किन्तु 'पूजा' का विधान पृथक् रहता है।

नव-दुर्गाओं के ध्यान : १. 'उग्र-चण्डा-कल्प' की 'नव-दुर्गाओं' का उल्लेख आगम में इस प्रकार है–

रुद्र-चण्डा प्रचण्डा च, चण्डोग्रा चण्ड-नायिका। चण्डा चण्डवती चैव, चण्ड-रूपाति-चण्डिका।
नवमी चोग्र-चण्डा च, कथिताऽऽगम-कोविदैः ।।

इन '९ दुर्गाओं' के 'ध्यान' क्रमशः निम्न प्रकार हैं-

१. रुद्र-चण्डा दुर्गा का ध्यान

खड्गं वज्रं शरं चक्रमंकुशं च तथैव च । वर-त्रिशूलं पात्रं च, दक्षिणेन विराजते ।।
खेटकं च तथा घण्टां, धनुश्चाभय-पाशकं । तर्जनीं दैत्य-केशं च, विन्दु-मुद्रां च वामके ।।
स-सिंह-महिषारूढां, रोचना-रूप-शोभितां । ध्यायतां च महा-देवीं, रुद्र-चण्डि! नमोऽस्तु ते ।।

२. प्रचण्डा दुर्गा का ध्यान

खड्गं शक्तिं शरं चक्रं, वज्रं च वरदं तथा । त्रिशूलं च तथा पात्रं, दक्ष-हस्तेषु विभ्रती ।।
खेटकं दर्पणं चैव, धनुश्चाभय-घण्टिकां । तर्जनीं दैत्य-केशं तु, बिन्दु-मुद्रां च वामके ।।
सिंह-महिषमारूढाऽरुणाभा-रूप-सन्निभा । एवं रूपां महा-देवीं, चण्डोग्रायै नमोऽस्तु ते ।।

३. चण्डोग्रा दुर्गा का विधान

खड्गं दण्डं शरं चक्रं, वज्रं वर-त्रिशूलकं । पान-पात्रं तथा ध्याये, दक्ष-हस्तेषु विभ्रतीम् ।।
खेटकं तु पाश-धनु-गदां घण्टां च तर्जनीं । दैत्य-केशं विन्दु-मुद्रां, वाम-हस्ते च धारिणीम् ।।
सिंह-महिषमारूढां, कृष्ण-वर्णाङ्ग-भूषणां । एवं ध्यात्वा महा-देवीं, चण्डोग्रायै नमोऽस्तु ते ।।

४. चण्ड-नायिका दुर्गा का ध्यान

खड्गं च रत्न-ज्वालां तु, शर-चक्रं च वज्रकं । अंकुशं च त्रिशूलं च, पात्रं विभ्रती दक्षिणे ।।
खेटकं तर्जनी-धनुर्गदा-घण्टां च पाशकं । दैत्य-केशं विन्दु-मुद्रां, वाम-हस्तेषु शोभिता ।।
सिंहासन-स्थिता देवी, महा-महिष-गामिनी । धूम्र-वर्णा महा-देवी, नमस्ते चण्ड-नायिके! ।।

५. चण्डा दुर्गा का ध्यान

श्वेत-वर्णा त्रि-नेत्रा च, यौवनी च सु-रूपिणी । खड्गं पाशं शरं वज्रं, चक्रं वर-त्रिशूलिनी ।।
पात्रं दक्षिण-हस्तेषु, रत्नालङ्कार-भूषिता । खेटकांकुश-धनुषं, गदां घण्टां तु तर्जनीम् ।।
दैत्य-केशं विन्दु-मुद्रां, वाम-हस्तेषु विभ्रती । एवं रूपा तु सा देवी, श्रीचण्डायै नमोऽस्तु ते ।।

६. चण्ड-वती दुर्गा का ध्यान

श्याम-वर्णां महा-देवीं, सिंह-महिष-गामिनीं । खड्गं ध्वजे शरं चक्रं, वज्रं च वरमेव च ।।
त्रिशूलं पात्रं हस्तेषु, दक्षिणेन च धारिणीं । खेटकं पाशं धनुषं, गदां घण्टां स-तर्जनीम् ।।
दैत्य-केशं विन्दु-मुद्रां, वाम-हस्तेषु धारिणीं । सर्व-रत्नाङ्ग-चण्डीं तु, चण्ड-वतीं नमोऽस्तु ते ।।

७. चण्ड-रूपा दुर्गा का ध्यान

सिंहासनां महिषस्थां, पीत-वर्णां गुण-प्रभां । खड्गं गदां शरं वज्रं, चांकुशं वरदं तथा ।।
त्रिशूलं पात्रं दक्षे तु, नानालङ्कार-भूषितां । खेटकं चक्रं धनुषं, घण्टा पाशं च तर्जनीम् ।।
दैत्य-केशं विन्दु-मुद्रां, वाम-हस्तेषु विभ्रतीं । त्रि-नेत्रां यौवनां देवीं, नमस्ते चण्ड-रूपिणि! ।।

८. अति-चण्डिका दुर्गा का ध्यान

श्वेत-वर्णा त्रि-नेत्रा च, हरि-महिष-गामिनी । कला षोडश-संयुक्ता, नाना-रत्न-विलम्बिता ।।
खड्गं-त्रिशूलं वाणं च, चक्राह्लादनमंकुशं । वरदं पाश-पात्रं च, दक्षिणेन विराजिता ।।
खेटकं दैत्य-केशं च, धनुर्गदां च घण्टिकां । पाशं तर्जनी-विन्दुं च, वाम-हस्तेषु धारिणी ।।
एवं ध्यात्वा महा-देवि!, अति-चण्डि ! नमोऽस्तु ते ।।

९. उग्र-चण्डा दुर्गा का ध्यान

उग्र-चण्डां महा-देवीं, ध्याये भगवतीं शिवां । तप्त-चामीकरां विविध-पुष्प-माल्य-शोभिताम् ।।
दिव्य-वस्त्र-परीधानां, महिषासन-गामिनीं । किरीट-कुण्डलाकारैः, केयूरैर्मणि-नूपुरैः ।।
रत्न-माल्य-विचित्रैश्च, हार-मालोप-शोभितां । सर्वालङ्कार-संयुक्तां, तडित्-कोटि-सम-प्रभाम् ।।
खड्गं शरस्तथा चक्रं, वज्रांकुश-धरां शुभां । वरदां डमरु-हस्तां, शूल-पात्र-सुशोभिताम् ।।
पाशं तर्जनी-हस्तां च, खट्वाङ्गं केश-पाशकं । विन्दु-मुद्रां तथा सिद्धि-सिंहासनोपरि-स्थिताम् ।।
अधः स्थित्वा शिरश्छिन्नं, महिषं च महा-बलं । तद्-ग्रीवा-निर्गत-दैत्य-महा-बल-पराक्रमम् ।।
भेदयन्तीं त्रिशूलेन, विधृतास्यां शिरोरुहाम् ।।

२. शेष 'कल्पों' की 'नव-दुर्गाओं' का उल्लेख निम्न प्रकार मिलता है–

प्रथमं शैल-पुत्री च, द्वितीयं ब्रह्म-चारिणी । तृतीयं चन्द्र-घण्टेति, कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ।।
पञ्चमं स्कन्द-मातेति, षष्ठं कात्यायनीति च । सप्तमं काल-रात्रिश्च, महा-गौरीति चाष्टकम् ।।
नवमं सिद्धिदा प्रोक्ता, नव-दुर्गाः प्रकीर्तिताः ।।

इन '९ दुर्गाओं' के 'ध्यान' क्रमशः निम्न प्रकार हैं–

१. शैल-पुत्री दुर्गा का ध्यान

वन्दे वाञ्छित-लाभाय, चन्द्रार्ध-कृत-शेखरां । वृषारूढां शूल-धरां, शैल-पुत्रीं यशस्विनीम् ।।

२. ब्रह्म-चारिणी दुर्गा का ध्यान

दधाना कर-पद्माभ्यामक्ष-माला-कमण्डलू । देवी प्रसीदतु मयि, ब्रह्म-चारिण्यनुत्तमा ।।

३. चन्द्र-घण्टा दुर्गा का ध्यान

पिण्डज-प्रवरारूढा, चण्ड-कोपास्त्रकैर्युता । प्रसादं तनुते मह्यं, चन्द्र-घण्टेति विश्रुता ।।

४. कूष्माण्डा दुर्गा का ध्यान

सुरा-सम्पूर्ण-कलशं, रुधिराप्लुतमेव च । दधाना हस्त-पद्माभ्यां, कूष्माण्डा शुभदाऽस्तु मे ।।

५. स्कन्द-माता दुर्गा का ध्यान

सिंहासन-गता नित्यं, पद्माञ्चित-कर-द्वया । शुभदाऽस्तु सदा देवी, स्कन्द-माता यशस्विनी ।।

६. कात्यायनी दुर्गा का ध्यान

चन्द्र-हासोज्ज्वल-करा, शार्दूल-वर-वाहना । कात्यायनी शुभं दयाद्, देवी दानव-घातिनी ।।

७. काल-रात्रि दुर्गा का ध्यान

एक-वेणी जपाकर्ण-पूरा नग्ना खरास्थिता । लम्बोष्ठी कर्णिका-कर्णी, तैलाभ्यक्त-शरीरिणी ।।
वाम-पादोल्लसल्लोह-लता-कण्टक-भूषणा । वर्धन्-मूर्ध-ध्वजा कृष्णा, काल-रात्रिर्भयङ्करी ।।

८. महा-गौरी दुर्गा का ध्यान

श्वेते वृषे समारूढा, श्वेताम्बर-धरा शुचिः। महा-गौरी शुभं दद्यान्, महा-देव-प्रमोददा ।।

९. सिद्धिदा-दुर्गा का ध्यान

सिद्ध-गन्धर्व-यक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि । सेव्य-माना सदा भूयात्, सिद्धिदा सिद्धि-दायिनी ।।

'वङ्गीय शरदोत्सव' की 'नव-दुर्गा'-

'वङ्ग-प्रदेश' में **'शारदीय नवरात्र'** के अवसर पर विशेष विधि-पूर्वक **'श्रीदुर्गोत्सव'** मनाया जाता है। वहाँ अनेक संस्थाओं द्वारा **'भगवती दुर्गा'** के भव्य स्वरूपों की अनूठी प्रतिमाएँ बनवाकर प्रतिष्ठित की जाती हैं और सविधि उनकी पूजा की जाती है। इस अवसर पर **'नव-दुर्गा'** का पूजन प्रति-वर्ष भिन्न-भिन्न देवी-मूर्तियों द्वारा किया जाता है, जो भक्तों के लिए विशेष उल्लास-दायक एवं उद्-बोधक होता है। यथा-

१. देवी महा-माया : योग-निद्रा-रूपी सृष्टि के प्रारम्भ में चारों ओर जल-ही-जल था। उसी के मध्य में **'अनन्त नाग'** पर **'विष्णु'** निद्रित थे। **'अनन्त'** नाग के फण **'विष्णु'** के ऊपर छत्राकार विराजित थे। **'विष्णु'** के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्षःस्थल को आवृत्त किए **'देवी'** शून्य में अवस्थित थीं। **'ब्रह्मा'** की हत्या करने को उद्यत **'मधु'** और **'कैटभ'** नामक दो दानव और **'महा-माया'** के स्तव में तत्पर **'ब्रह्मा'**!

२. देवी अम्बिका : 'धूम्र-लोचन' असुर का वध करती हुईं **'सिंह-वाहिनी दश-भुजा अम्बिका'**।

३. देवी जया : 'दश-भुजा, सिंह-वाहिनी, गज-सैन्य' से परिवेष्टिता **'देवी जया'** अपने **'चक्र'** द्वारा सिंह पर चोट करते हुए **'दानव सुषेण'** का मस्तक काट रही हैं।

४. देवी रक्त-दन्तिका : 'भयङ्कर शरीरवाली, कराल-वदना, रक्त-पान' करती हुई **'देवी रक्त-दन्तिका वैप्रचित्त'** दानव का वध करती हैं।

५. देवी महिषासुर-मर्दिनी : मध्य में **'सिंह-वाहना दश-भुजा दुर्गा'**··· **'लक्ष्मी, गणेश, कार्तिकेय'** और **'सरस्वती'** से परिवेष्टिता।

६. देवी रुद्राणी : 'शिव' के अंश से उद्भूता उन्हीं के समान **'जटा-धारिणी, व्याघ्र-चर्मावृता, चन्द्र-कला-शोभिता, त्रिशूल एवं कमण्डलु-धारिणी, सर्प-माला-भूषिता देवी रुद्राणी'** सह-योद्धा **'गजानन'** को **'अमरासुर'** के वध के लिए प्रेरित करती हुई।

७. देवी क्षेमङ्करी : 'वृद्धा'-स्वरूपा, **माथे पर जटा, मुख विस्फारित**, शरीर **'शिरा-मय'** और **'मांस-हीन'**। दानव **'सुबल'** को देवी **'क्षेमङ्करी'** स्पर्श द्वारा निहत करती हुई।

८. देवी भगवती : रथासीन **'उग्रसेन'** को पाश-बद्ध कर **'दश-भुजा'** **देवी भगवती** अस्त्र से मारती हुई।

९. देवी शाक्री : गजारूढ़ा, हाथ में वज्र और अंकुश, गन्धर्व-सिद्ध-चारणों और भूत-प्रेतों से वेष्टिता देवी **'शाक्री' (इन्द्राणी)**।

इस प्रकार **'नवरात्र'** में साधक **'श्री दुर्गा'** के अनन्त विभूति-वैभव की अनुभूति के लिए विविध प्रकार के स्वरूपों का **ध्यान** एवं **पूजन** करते हैं।

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग **- ऋतशील शर्मा**

ध्यान एवं प्रणाम-मन्त्र

चतुर्भुजी श्रीदुर्गा
अष्ट-भुजी श्रीदुर्गा
दश-भुजी श्रीदुर्गा
नव-दुर्गा
महा-काली
महा-लक्ष्मी
महा-सरस्वती

प्रकाशक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-६

सिंहस्था शशि - शेखरा मरकत - प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः।
शङ्खं चक्र - धनुः - शराँश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।।
आमुक्तांगद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा ।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला ।।

।। श्री चतुर्भुजा-दुर्गायै नमः।।

विद्युद्-दाम-सम-प्रभां मृग-पति-स्कन्ध-स्थितां भीषणाम् ।
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्-हस्ताभिरासेविताम् ।।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम् ।
विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे।।

।। श्री अष्ट-भुजा-दुर्गायै नमः ।।

कात्यायन्याः प्रवक्ष्यामि, मूर्तिं दश-भुजां तथा। त्रयाणामपि देवानामनुकारण-कारिणीम्॥
जटा-जूट - समायुक्तामर्धेन्दु - कृत - शेखराम्। लोचन - त्रय-संयुक्तां, पद्मेन्दु - सदृशाननाम्॥
अतसी-पुष्प-वर्णाभां, सुप्रतिष्ठां प्रलोचनाम्। नव-यौवन-सम्पन्नां, सर्वाभरण-भूषिताम्॥
सुचारु-दशनां तद्-वत्, पीनोन्नत-पयोधराम्। त्रिभङ्ग-स्थान-संस्थानां, महिषासुर-मर्दिनीम्॥
त्रिशूलं दक्षिणे दद्यात्, खड्गं चक्रं क्रमादधः। तीक्ष्ण-वाणं तथा शक्तिं, वामतोऽपि निबोधत॥
खेटकं पूर्ण - चापं च, पाशमंकुशमूर्ध्वतः। घण्टां वा परशुं वाऽपि, वामतः सन्निवेशयेत्॥
अधस्तान्महिषं तद्-वद्, वि-शिरस्कं प्रदर्शयेत्। शिरच्छेदोद्भवं तद्-वद्, दानवं खड्ग-पाणिनम्॥
हृदि शूलेन निर्भिन्नं, निर्यदन्त्र - विभूषितम्। रक्त-रक्ती - कृताङ्गश्च, रक्त - विस्फारितेक्षणम्॥
वेष्टितं नाग - पाशेन, भ्रुकुटी - भीषणाननम्। स-पाश-वाम-हस्तेन, धृत-केशं च दुर्गया॥

वन्दे वाञ्छित-लाभाय, चन्द्रार्ध-कृत-शेखरां ।
वृषारूढां शूल-धरां, शैल-पुत्रीं यशस्विनीम् ।।

।। श्री शैल-पुत्री-दुर्गायै नमः ।।

दधाना कर-पद्माभ्यामक्ष-माला-कमण्डलू ।
देवी प्रसीदतु मयि, ब्रह्म-चारिण्यनुत्तमा ।।

।। श्री ब्रह्म-चारिणी-दुर्गायै नमः ।।

पिण्डज-प्रवरारूढा, चण्ड-कोपास्त्रकैर्युता ।
प्रसादं तनुते मह्यं, चन्द्र-घण्टेति विश्रुता ।।

।। श्री चन्द्र-घण्टा-दुर्गायै नमः ।।

सुरा-सम्पूर्ण-कलशं, रुधिराप्लुतमेव च ।
दधाना हस्त-पद्माभ्यां, कूष्माण्डा शुभदाऽस्तु मे ।।

।। श्री कूष्माण्डा-दुर्गायै नमः ।।

सिंहासन-गता नित्यं, पद्माञ्चित-कर-द्वया ।
शुभदाऽस्तु सदा देवी, स्कन्द-माता यशस्विनी ।।

।। श्री स्कन्द-माता-दुर्गायै नमः ।।

चन्द्र-हासोज्ज्वल-करा, शार्दूल-वर-वाहना ।
कात्यायनी शुभं दयाद्, देवी दानव-घातिनी ।।

।। श्री कात्यायनी-दुर्गायै नमः ।।

एक-वेणी जपाकर्ण-पूरा नग्ना खरास्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिका-कर्णी, तैलाभ्यक्त-शरीरिणी ।।
वाम - पादोल्लसल्लोह - लता - कण्टक - भूषणा।
वर्धन्-मूर्ध-ध्वजा कृष्णा, काल-रात्रिर्भयङ्करी।।

।। श्री काल-रात्रि-दुर्गायै नमः ।।

श्वेते वृषे समारूढा, श्वेताम्बर-धरा शुचिः।
महा-गौरी शुभं दद्यान्, महा-देव-प्रमोददा ।।

।। श्री महा-गौरी-दुर्गायै नमः ।।

सिद्ध - गन्धर्व - यक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि ।
सेव्य-माना सदा भूयात्, सिद्धिदा सिद्धि-दायिनी ।।

।। श्री सिद्धिदा-दुर्गायै नमः ।।

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघान् छूलं भुशुण्डीं शिरः।
शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रि-नयनां सर्वाङ्ग - भूषावृताम् ।।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा-कालिकाम् ।
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं - कैटभम्।।

।। श्री महा-काल्यै नमः ।।

अक्ष-स्त्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकाम् ।
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म-जलजं घण्टां सुरा-भाजनम् ।।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम् ।
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महा-लक्ष्मीं सरोज-स्थिताम् ।।

।। श्री महा-लक्ष्म्यै नमः ।।

घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम् ।।
गौरी-देह-समुद्भवां त्रि-जगतामाधार-भूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनु-भजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ।।

।। श्री महा-सरस्वत्यै नमः ।।

नवरात्र

❖ 'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल

श्रीमद्-देवी-भागवत में 'नवरात्र-व्रत'

'नवरात्र-व्रत' हिन्दुओं का बड़ा प्राचीन धार्मिक अनुष्ठान है। इसका महत्त्व सदा रहा है और आज भी यह पूर्व-वत् लोक-प्रिय बना हुआ है। **'नवरात्र-व्रत'** का स्पष्ट उल्लेख **'श्रीमद्-देवी-भागवत'** में आया है। उसमें इस व्रत के एक उपाख्यान में लिखा है कि **सीता जी की पुनर्प्राप्ति** और **शत्रु पर विजय** पाने पर **भगवान् रामचन्द्र** ने इसका अनुष्ठान किया था। इससे प्रकट होता है कि **भगवान् रामचन्द्र** के बहुत पहले से इसका प्रचार रहा है।

'श्रीमद्-देवी-भागवत' में **महर्षि व्यास** ने **'नवरात्र-व्रत'** के अनुष्ठान का विधान **जनमेजय** को बताया है। उस स्थल पर उन्होंने कहा है कि **वसन्त ऋतु** और **शरद् ऋतु** में कितने ही लोग बीमार पड़ते हैं और कितने ही मर भी जाते हैं। ये दोनों ऋतुएँ **यम-दंष्ट्रा** कहलाती हैं। इनमें अपने अहित की बार-बार सम्भावना है। इसी से लोग इस अवसर पर **सर्व-दुःख-विनाशिनी** और **ऐश्वर्य-सम्पत्-प्रदा भगवती दुर्गा** की आराधना करते हैं।

यह पूजा वसन्त के **चैत्र शुक्ल** की प्रथम नौ-तिथियों में और शरद् में **आश्विन शुक्ल** की प्रथम नव-तिथियों में की जाती है। प्रत्येक आस्तिक गृहस्थ लगातार **नौ दिनों का व्रत** करता है। वह **ब्रह्मचर्य** के साथ **एकाहारी** रह कर बड़े भक्ति-भाव से **दुर्गा का स्मरण** करता है। यही नहीं, लोग किसी साफ-सुथरी विस्तृत जगह में एक मण्डप में **भगवती की प्रतिमा** स्थापित करते हैं, जहाँ **भगवती का अर्चन** बड़े भक्ति-भाव से होता है। **भगवती दुर्गा** की ठीक-ठीक शास्त्रीय विधि से पूजा का यह क्रम नौ दिनों तक बराबर चलता रहता है।

नवरात्र-व्रत हेतु अमावास्या-युक्त प्रतिपदा का निषेध

'नवरात्र' का व्रत— **चैत्र** और **आश्विन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा** से आरम्भ होता है, परन्तु यदि **प्रतिपदा अमावास्या-युक्त** होती है, तो दूसरे दिन से व्रत का आरम्भ होता है। **द्वितीया** के दिन यदि **प्रतिपदा** मुहूर्त भर भी हो, तो **व्रत का आरम्भ द्वितीया** से करे। शास्त्र में ऐसा ही विधान है।

व्रतारम्भ के दिन सवेरे **घट-स्थापन** कर **देवी का आवाहन करके पूजन** करे और यह पूजा **नवमी** तक बराबर होती रहे। व्रत करनेवाला इन नवों दिन तक एक बार भोजन करता है। रात्रि में भूमि में शयन करता है। **नित्य कुमारी-भोजन** और उन्हें वस्त्रादि दान करता है। बलि-सहित देवी की वह नित्य तीन बार पूजा करता है। **प्रातः, सन्ध्या** और **अर्द्ध-निशा** में पूजन होता है।

'नवरात्र-व्रत' का विस्तृत विधान

प्रतिपद् के दिन किसी शुद्ध सम-भूमि में **१६ हाथ लम्बा स्तम्भ ध्वजा से युक्त** स्थापित करके लम्बा-चौड़ा **मण्डप** बनाए। कुशल ब्राह्मण द्वारा **देवी का पूजन** उस स्थान में कराए एवं देवी के प्रसन्नार्थ वहाँ **नित्य 'चण्डी-पाठ'** या **'देवी-भागवत'** का पाठाचरण हो। इसके लिए ५, ३ या १ ब्राह्मण नियुक्त करे। **बेदी** पर **सिंहासन** स्थापित कर उस पर **चतुर्भुजा** या **अष्टादश-भुजी,** सब आयुधों तथा वस्त्राभरणों से युक्त, **देवी की**

प्रतिमा स्थापित करे। यदि प्रतिमा का अभाव हो, तो उस **सिंहासन** पर पूजनार्थ **नवाक्षर मन्त्र** तथा उसके पृष्ठ-भाग में **पञ्च-पल्लव-सम्मिलित कुम्भ** स्थापित करे।

'नवरात्र-व्रत' का माहात्म्य

'भविष्योत्तर' में **'नवरात्र-व्रत'** का माहात्म्य है। उसमें लिखा है कि दिन में एक बार भोजन करे और सो भी अपनी पत्नी का पकाया हुआ। इस प्रकार व्रत-पूर्वक लोगों को स्थान-स्थान, गाँव-गाँव, घर-घर **जगदम्बा की पूजा** करनी चाहिए। **'नवरात्र'** के पूजा-व्रत का अधिकार सब किसी को है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, म्लेच्छ सभी इसे कर सकते हैं। व्रत करनेवाला **तीनों काल देवी का पूजन** कर **गुरूपदिष्ट मन्त्र का जप** और **सप्तशती-स्तोत्र का पाठ** करे। वह भूमि पर ही शयन करे।

'देवी-पुराण' में लिखा है कि **'नवरात्र'**-व्रती को प्रति-दिन **कुमारिका को भोजन** कराकर वस्त्र-आभूषण प्रदान करने चाहिए। इसके अतिरिक्त देवता को मांस और चावल की **बलि** भी देनी चाहिए। दो वर्ष की कन्या से लेकर १० वर्ष तक की **कन्या की पूजा** का विधान है।

'स्कन्द-पुराण' में लिखा है कि एक की वृद्धि से प्रति-दिन **कुमारी-पूजन** करे। इस क्रम से **कुमारी-पूजा** करने से विशेष कल्याण होता है। **कुमारी-पूजन** प्रातः-काल ही करना चाहिए। जहाँ तक हो सके, एक ही जाति की कन्याओं का पूजन करे। यदि **'नवरात्र'** में प्रति-दिन यथा-विधि **देवी-पूजन** न कर सके, तो केवल **अष्टमी** को ही पूजन करे।

'ब्रह्म-पुराण' में लिखा है कि दक्ष के यज्ञ को विनष्ट करनेवाली **भद्र-काली** की पूजा **अष्टमी** को करे, क्योंकि इसी तिथि में सहस्रों योगिनियों के साथ उनका आविर्भाव हुआ था। अतएव लोगों को उनके इस जन्म-दिन पर व्रत-पूर्वक वस्त्र, धूप, दीप, माला, चन्दन, तरह-तरह के मांसों और शाकों, होम, ब्राह्मण-भोजन, विल्व-पत्र, विल्व-फल, चन्दन, घृत आदि से उनका विधि-पूर्वक अर्चन करना चाहिए। यदि **अष्टमी— मूल नक्षत्र-युक्त** हो, तो उसे **'महा-नवमी'** समझना चाहिए। इस अवसर पर **मुण्ड-मालिनी चामुण्डा** का पूजन कर उन्हें महिषादि की बलि प्रदान करे।

'देवी-भागवत' में **'नवरात्र'** के सम्बन्ध में एक उपाख्यान है— कोशल-देश में सुशील नामक एक धन-हीन दुखी वैश्य रहता था। उसका कुटुम्ब बड़ा था। कई एक लड़के थे। वह बड़ा धार्मिक था। बड़ी कठिनाई से जो कुछ वह पाता, उससे देवता, पितरों और अतिथियों की पूजा-अर्चा करता और जो बचता, उसे अपने आश्रितों को अर्पण करता और इनसे जो बचता, उसे खुद खाता। उसने एक दिन एक ब्राह्मण से पूछा कि ''हे भू-देव, कौन-सा उपाय किया जाए, जिससे दारिद्र्य दूर हो? मैं धनी नहीं होना चाहता। मैं तो केवल यह चाहता हूँ कि मेरे पास इतना हो जाए, जिससे मैं अपनी मान-मर्यादा की रक्षा कर सकूँ।''

ब्राह्मण ने कहा— ''अगर तुम अपना दारिद्र्य दूर करना चाहते हो, तो **'नवरात्र' का व्रत** करो। इस व्रत के करने से **ज्ञान** और **मोक्ष** तक प्राप्त होता है। यह **शत्रु-नाशक** भी है। इससे **सुख** और **सन्तान की वृद्धि** होती है। प्राचीन काल में **राम** ने **सीता** के विरह से दुखी होकर इस व्रत का अनुष्ठान किया था।''

उक्त ब्राह्मण का उपदेश सुनकर सुशील ने उससे ही **व्रत की दीक्षा** ली और यथा-विधि **'नवरात्र-व्रत'** किया, जिसके पूर्ण होने पर **देवी माहेश्वरी** ने सुशील को दर्शन देकर उसे समृद्धि-पूर्ण किया।

'नवरात्र' की व्रत-पूजा का ऐसा ही माहात्म्य है।

* * *

नव-रात्र-व्रत-पूर्वक महा-पूजा

❖ 'राज-गुरु' पण्डित हरिदत्त शास्त्री

महा-माया का वरदान-रूपी आदेश है—

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।
तस्यां ममैतन् माहात्म्यं, श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः।।
सर्वा - बाधा-विनिर्मुक्तो, धन-धान्य-सुतान्वितः।
मनुष्यो मत्-प्रसादेन, भविष्यति न संशयः।।

अर्थात् जो लोग **नित्य-पूजा, नैमित्तिक पूजा, काम्य-पूजा** तो करते ही हैं, साथ ही शरत्-काल में **'नवरात्र-व्रत'-पूर्वक 'महा-पूजा'** भी करते हैं और **सप्तशती-पाठ या श्रवण** करते हैं, महा-माया की कृपा से उनकी सब विघ्न-बाधाएँ दूर हो जाती हैं और वे धन-धान्य-सन्तान-सम्पन्न होकर सदा सुखी रहते हैं।

भारतवर्ष में इस **'महा-पूजा'** का घर-घर में प्रचार था, तभी सर्वा-बाधा-रहित सुखी भारत था। जब से यह **'महा-पूजा'** कम होती गई, वैसे ही सङ्कट बढ़ने लगा। **'महा-पूजा'** ही भोग-मोक्ष-दायिनी है।

पूजा दो प्रकार की होती है— **१ बाह्य-पूजा** और **२ आभ्यन्तर अन्तर्पूजन।** शारदीय समय में रात-दिन की समानता से बाह्य संसार की **इड़ा-पिङ्गला** का साम्य होने से सारे संसार की **सुषुम्णा** का स्वतः विकाश हो जाता है। समष्टि के सञ्चालन के अनुसार व्यष्टि में भी सङ्कल्प-मात्र से उस समय वह सञ्चार सुलभ हो जाता है। **तन्त्र**-शास्त्रीय उपासना का उत्कर्ष **षट्-चक्र-भेदन**-पूर्वक **सुषुम्णा** के विकाश— **कुल-कुण्डलिनी** के विकाश पर निर्भर है। **भूत-शुद्धि** और **तत्त्व-शुद्धि** इसी के लिए की जाती है। **इड़ा चन्द्र, पिङ्गला सूर्य**—इन दोनों का साम्य-भाव ही **सुषुम्णा** का विकाश है। शरद-काल में रात्रि-दिवस के बराबर होने से विश्व की **सुषुम्णा** का विकाश होने से इस समय में **'महा-पूजा'** होती है। यह **'महा-पूजा'** मुख्यतः **'नवरात्र'** में होती है। इन नौ दिनों को नौ दिन न कह कर **'नवरात्र'** कहते हैं। यही **'महा-पूजा'** का सङ्केत है।

'दिन' काल के उस विभाग को कहते हैं, जिसमें इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों पर लगी रहती हैं और **'रात'** उस विभाग को कहते हैं, जिस समय इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों से निवृत्त होकर अन्तर्मुखी हो जाती हैं। इसलिए इस काल को **'नवरात्र'** कहा है। इन नौ दिनों में **मौन-व्रत**-पूर्वक प्रत्येक इन्द्रिय को अन्तर्मुखी कर उस महा-शक्ति का एक-मात्र तन्त्र-शास्त्रानुसार **''तज्जपस्तदर्थ-भावनम्''**—उसके जप, अर्थात् उस **परा-शक्ति** में मन्त्र के द्वारा भावना कर **'नवरात्र'-व्रत** का पालन किया जाता है। इसी **'नवरात्र'-काल** की अष्टमी को **'महाऽष्टमी'** कहते हैं। **'महाऽष्टमी'** को भक्ति-श्रद्धा-सम्पन्न होकर षोडशोपचारों से **महा-माया का पूजन** करे।

'नवरात्र' में **अम्बा-मख—शत** या **सहस्र-'चण्डी'** या नित्य एक पाठ 'चण्डी' **(श्रीदुर्गा-सप्तशती)** का करे। पहले दिन १ अध्याय, दूसरे दिन २ अध्याय, तीसरे दिन १, चौथे दिन ३, पाँचवें दिन २, छठे दिन १, सातवें दिन २, आठवें दिन १ अध्याय—इस प्रकार १३ अध्यायों के पाठ का भी नियम है। **नवमी** को नवाक्षर से मधु-क्षीर-रक्त-पुष्प का **हवन, कुमारी-पूजनादि** करे। यह **'नवरात्र'-पूजन** और **व्रत—'महा-पूजा'** प्रवृत्ति तथा निवृत्ति दोनों मार्गों के लिए है। प्रवृत्ति-मार्ग में **सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्ति** तथा **धन-धान्य-सुत-विजय** होती है। निवृत्ति-मार्ग में **'सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां**

भवति मुक्तये'—मोक्ष-लक्ष्मी का विकाश होता है।

पूजा का सङ्केत मात्र यहाँ लिखा है। अपने-अपने **पूजोपचार** स्व-सम्प्रदाय के अनुसार करने चाहिए। इस **व्रत** का बड़ा माहात्म्य है। **कुण्डलिनी के विकाश** का यही काल है। व्रती को **एकान्त मौन-व्रत, महा-माया का पूजन, अनन्य चिन्तन** करना चाहिए। **'कुलार्णव'** में— **'पुष्पाञ्जलि-नमस्कारावष्ट-त्रिंशत् समीरितम्'**—३८ उपचारों का वर्णन है, किन्तु कम-से-कम १८ उपचारों से अवश्य पूजन करे। **'फेत्कारिणी तन्त्र'** में लिखा है—

आसनावाहनं चार्घ्यं, पाद्यमाचमनं तथा।
स्नानं वासोपवीतिं च, भूषणानि च सर्वशः।।
गन्धं पुष्पं तथा दीपं, धूपोऽन्नं चापि तर्पणम्।
माल्यानुलेपनं चैव, नमस्कारो विसर्जनम्।।
अष्टादशोपचारैस्तु, मातृ - पूजां समाचरेत्।।

अर्थात् १ आसन, २ आवाहन, ३ अर्घ्य, ४ पाद्य, ५ आचमन, ६ स्नान, ७ वस्त्र, ८ उपवीत (जनेऊ), ९ आभूषण, १० गन्ध, ११ पुष्प, १२ धूप, १३ दीप, १४ तर्पण, १५ पुष्प-माला, १६ सुगन्ध-लेप, १७ नमस्कार और १८ विसर्जन— ये **१८ उपचार** हैं।

'नवरात्र-व्रत' समाप्त कर **दशमी** को **'शमी'**-वृक्ष का पूजन करे। **'ज्योतिर्निबन्ध'** में **'शमी-पूजन'** का समय इस तरह बताया है—

'ईषत् सन्ध्यामतिक्रान्ते, किञ्चिदुद्भिन्न-तारकाः।
विजयो नाम कालोऽयं, सर्व-कामार्थ-साधकः।।'

ग्राम के बाहर **ईशान-कोण** में **'शमी'**-वृक्ष का पूजन करे। पूर्व में **गणेशादि का पूजन** कर निम्न मन्त्र से **शमी का पूजन** करे—

अमङ्गलानां शमनीं, दुष्कृतस्य च हारिणीम्।
दुःस्वप्न-नाशिनीं धन्यां, प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम्।।

तब **'समयाचार'** के अनुसार चार दिशाओं का पूजन करे। फिर **नीलकण्ठ पक्षी** का दर्शन कर निम्न मन्त्र से उसे नमस्कार करे—

नील-कण्ठो मणि-ग्रीवः, स्वस्तिश्चापराजितः।
अशोकश्च विशोकश्च, नन्दनः पुष्टि-वर्द्धनः।।

प्रस्थान-पूजन निम्न मन्त्र से करे—

या यात्रा शङ्करस्य त्रिपुर-विदहने खाण्डवे चार्जुनस्य।
या यात्रा राघवस्य जल-निधि-तरणे सेतु-बन्धे समुद्रे।।
या यात्रा वायु-सूनोरौषधि-गमने च
लक्ष्मणे शक्ति - भिन्ने।
सा यात्रा सिद्धि - दात्री भवतु
मम गृहे सिद्धि-सौख्य-प्रदात्री।।

व्रत के दिनों में भूमि पर शय्या रखे। प्रातः-काल **प्रातः-स्मरण, गुरु-पादुका-स्तोत्र-पाठ,** स्नानादि **नित्य-कर्म** करे। पूजा-स्थान में **घट-स्थापन** कर **अखण्ड दीपक** जलाकर, शुद्ध रक्त-वस्त्र पहने और चैलाजिन-कुशोत्तम **आसन** पर बैठकर **प्राणायाम** कर **पूजन** और **जप, पाठ, हवन** करे। अन्त में **पुष्पाञ्जलि, अपराध-क्षमापन-स्तोत्र, दुर्गा-कीर्तन** करे। सात्त्विक आहार, मिताहार या निराहार करे।

प्रति-दिन **भूत-शुद्धि, बहिर्मातृका, अन्तर्मातृका, षोढा-न्यास** से स्वयं को देवता बनाए, क्योंकि **'देवो भूत्वा देवं यजेत्।'** अपने शरीर को न्यासादि से शुद्ध कर **देव-स्वरूप** बना लेने पर ही देवता के पूजन का अधिकार होता है।

'नवरात्र'-पूजन और **व्रत**—**'महा-पूजा'** प्रवृत्ति तथा निवृत्ति दोनों मार्गों के लिए है। प्रवृत्ति-मार्ग में **सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्ति** तथा **धन-धान्य-सुत-विजय** होती है। निवृत्ति-मार्ग में **'सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां भवति मुक्तये'—मोक्ष-लक्ष्मी का विकाश** होता है।

श्रीदुर्गोत्सव-विवेक

❖ 'कविराज' पण्डित रामकृष्ण शर्मा

जैसा कि श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास, तन्त्रागमों में पढ़ा है, सद्-गुरु-जनों से सुना है, वैसा ही लिखने का प्रयास यहाँ करता हूँ। जिसको अपने परिवार के उच्च शिखर पर पहुँचने की, अपनी सन्तति को अलौकिक प्रतिभा-युक्त देखने की अभिलाषा है और जिसे सर्वदा सुखी जीवन बिताने की सदिच्छा है, उसके हित के लिए वर्ग-चतुष्टय-दायिनी जगन्माता के **'नव-रात्र-महोत्सव'** का विवरण लिखता हूँ।

'शक्ति-सङ्गम तन्त्र' में श्रीपार्वती श्रीशिव जी से प्रश्न करती हैं— 'हे देवेश! मैं **'नव-रात्र' के विधान** को सुनने की इच्छा रखती हूँ।'

श्रीशिव जी ने कहा—

नव-शक्तिभिः संयुक्तं, नव-रात्रं तदुच्यते।
एकैव देव-देवेशि! नवधा परि-तिष्ठिता।।

अर्थात् **नव-रात्र— नव-शक्तियों से संयुक्त** है। **एक-एक तिथि में एक-एक शक्ति के पूजन का विधान** है।

'मार्कण्डेय पुराण' में लिखा है कि—**'प्रथमं शैल-पुत्री'** इत्यादि, जिसका आशय यह है कि (१) **शैल-पुत्री**, (२) **ब्रह्म-चारिणी**, (३) **चन्द्र-घण्टा**, (४) **कूष्माण्डा**, (५) **स्कन्द-माता**, (६) **कात्यायनी**, (७) **काल-रात्रि**, (८) **महा-गौरी** और (९) **सिद्धि-दात्री**— इन **'नव-दुर्गाओं'** का **'नव-रात्र'** में पूजन होता है। इनके पूजन से अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है।

'नव-रात्र' वर्ष में चार बार आते हैं— (१) चैत्र, (२) आश्विन, (३) आषाढ़ और (४) माघ में। **'देवी-भागवत'** में लिखा है—

चैत्रे आश्विने तथाषाढे, माघे कार्यो महोत्सवः।
नव - रात्रे महाराज! पूजा कार्या विशेषतः।।

शयन और बोधन— दो प्रकार के **'नव-रात्र'** होते हैं। **'शयन'** चैत्र में तथा **'बोधन'** आश्विन में। चारों ही नव-रात्रों में दुर्गा जी की उपासना का माहात्म्य है। आश्विन के **'नव-रात्र'** की विशेष महिमा है। **'मार्कण्डेय-पुराण'** में लिखा है—

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।

आश्विन, चैत्र, आषाढ़ और माघ— इन चारों मासों की **शुक्ला प्रतिपदा** से **नवमी** तक **'नव-रात्र'** के पूजन का विधान शास्त्रों में दिया है। **आश्विन** और **चैत्र** के नव-रात्रों का विशेष प्रचार इसलिए हो गया है कि इस समय ग्रीष्म तथा शीत-काल के आने से विशेष ज्वर की उत्पत्ति का कोप होता रहता है। अतएव उसकी शान्ति के निमित्त इन दोनों ऋतुओं में **'नव-रात्र'** को लोग विशेष रूप से मानते हैं। **शरत्** व **बसन्त—** इन दो ऋतुओं में विशेष **'नव-रात्रार्चन'** इसलिए भी है कि ये दोनों ऋतुएँ सर्व-प्राणियों के लिए **'यम-दंष्ट्रा'** (काल के गाल में भेजनेवाली बीमारी का घर) कही गई हैं। इस लोक में **शरत्** और **बसन्त** ऋतुएँ प्राणियों के लिए वास्तव में बड़ी कठिनाई पैदा कर देती हैं। अतः जिन्हें अपने कल्याण की आकांक्षा हो, उन्हें बड़े यत्न के साथ इन ऋतुओं में **'नव-रात्र'** का **'व्रत'** तथा **'पूजन'** अवश्य करना चाहिए।

'नव-रात्र' के एक दिन पूर्व अर्थात् **अमावास्या** को पूजा की सब सामग्री इकट्ठी करे। उस दिन एक बार भोजन करे व शुद्ध चौरस भूमि पर यथा-प्रमाण **'मण्डप'** बनाए। शुद्ध

मृत्तिका और गोबर से भूमि को लीपे। उसके मध्य में सुन्दर चौकोर **'बेदी'** बनाए। रङ्ग-बिरङ्गे तोरण, झण्डियों, पताकाओं, केले और आम के पत्तों से तथा विविध फूल-मालाओं से मण्डप को सुसज्जित करे। वेद-वेदाङ्ग के वेत्ता, संयमी, शुद्ध आचार-विचारवाले, देवी के तत्त्व को जाननेवाले ब्राह्मणों को **अमावास्या** के दिन निमन्त्रंण दे।

प्रतिपदा के दिन किसी नदी, नाले, बावली, कूप या घर में ही विधि के साथ **'स्नान'** करे। प्रातः-काल के समय पहले अपनी नित्य-क्रिया करे। फिर ब्राह्मणों का वरण करे। उन्हें अर्घ्य-पाद्यादि प्रदान करे। अपनी शक्ति के अनुसार उन्हें धोती, दुपट्टा, भूषण, आसन, माला, गोमुखी, पूजन-पात्र, पादुका आदि प्रदान करे। जहाँ तक हो सके, धन की कंजूसी न करे।

ब्राह्मणों के सन्तुष्ट होने से सर्व-कार्य सिद्ध हो जाते हैं। श्रीदेवी की प्रसन्नता के लिए, **'दुर्गा-सप्तशती'** या **'देवी-भागवत'** के पाठ के लिए ९, ५, ३ या १ ब्राह्मण विहित हैं—

नव-पञ्च-त्रयश्चैको, देव्याः पाठे द्विजा स्मृताः।

वेदी पर सिंहासन रखकर रेशमी वस्त्र बिछाकर दुर्गाजी की **'मूर्ति'** की स्थापना करे। यदि मूर्ति-स्थापन न कर सके, तो उसी आसन पर **'श्रीदुर्गा-यन्त्र'** अथवा **'श्रीदुर्गा का चित्र'** स्थापित करे। वेदी के समीप शास्त्रोक्त रीति से **'पञ्च-पल्लव'** से संयुक्त तीर्थ-जलों से, वेद-मन्त्रों से पूर्ण **'कलश'** का स्थापन करे। **'कलश'** को श्वेत वस्त्र, नारियल और रक्त वस्त्र से ढँककर उसमें रत्न या स्वर्ण डाले। अपने सम्मुख पूजा-सामग्री रखे। **'पुण्याह-वाचन'** करके **'गण-पति'** तथा **'नव-ग्रहों'** आदि का यथा-शक्ति पूजनादि करने से पहले **'सङ्कल्प'** करे। देवताओं का पूजन करे। घर में गाना-बजाना, मङ्गलाचार करे। **हस्त नक्षत्रवाली नन्दा (प्रतिपदा) तिथि** में पूजन करना बहुत श्रेष्ठ है। **'शक्ति-सङ्गम तन्त्र'** में लिखा है—

निराहारी फलाहारी, त्वेक-भक्त-दृढ-व्रतः।
नक्त-भुजं हविष्यासी, यथा-शक्तिः समाचरेत्॥

अर्थात् निराहार या फलाहार करे अथवा एक समय रात्रि में हविष्यान्न भोजन करे। शास्त्रों में ये वचन भी हैं कि—

अमा-युक्ता न कर्तव्या, प्रतिपत् कालिकार्चने।
अष्टम्यन्तं समाचर्य, ततोऽष्टम्यां तु होमयेत्।
नवम्यां पारणं कुर्यात्, दशम्यां तु विसर्जनम्॥

अर्थात् **अमावास्या से युक्त प्रतिपदा** में आरम्भ न करे। **प्रतिपदा** से पाठ आरम्भ करे। **'नव-रात्र-पूजन'** में अनेक कल्प हैं, परन्तु विशेषतः **प्रतिपदा से नवमी** तक ही क्रम प्रचलित है। घृत की **अखण्ड ज्योति** का पूजन करे। जिस **'मन्त्र'** का जप करे अथवा **'दुर्गा-पाठ'** करे, उसे नित्य एक जैसे क्रम से करे। जप या पाठ में प्रति-दिन वृद्धि करता जाय, ह्रास न करे। **'तन्त्र'** में लिखा है—

अष्टमी सर्व-कार्याणां, कर्त्री भवति निश्चितम्।
होम-पूजाऽऽदिकं तत्र, कुर्याद् यत्नेन पार्वति!॥

अर्थात् अष्टमी के दिन होम-पूजादि का विशेष महत्त्व है। यदि **'नव-रात्र'** के पूर्व-दिन अर्ध-रात्रि को जप और पूजन-पाठ आदि करे, तो और भी अधिक फल होता है। अष्टमी अथवा नवमी के दिन कन्या-पूजन, कन्या-भोजन, ब्राह्मण-भोजनादि कराकर समाप्ति करे। इस विधि से जो भी **'नव-रात्रार्चन'** करेगा, उसके सर्वाभीष्ट पूर्ण होंगे। भगवती दुर्गाजी ने स्वयं कहा है— 'मेरे मन्त्र से जो मुझे प्रेम से स्मरण करेगा अथवा हवन करेगा, उसे मैं दर्शन दूँगी।'

दुर्गा, गौरी, काली— सब एक ही हैं। **'दुर्गा'**-शब्द के जप मात्र से भगवती प्रसन्न होती

हैं। **'कलौ चण्डी-महेश्वरी'**— के अनुसार शास्त्रों में व आप्त वचनों से **'दुर्गा'**-नाम की बहुत महिमा है। **'रुद्रयामल तन्त्र'** में शिव जी पार्वती से कहते हैं कि— 'हे कान्ते! **'दुर्गा'**-नाम की महिमा मैं कहाँ तक वर्णन करूँ! इस नाम का निरन्तर जप करने से दरिद्र को धन मिलता है। सन्तान-हीन को सन्तान मिलती है। ज्ञानेच्छु को ज्ञान होता है, अल्पायु चिरायु होता है, भय-भीत भय से छूटता है, भूत-प्रेत-पिशाचादि बाधाओं से पीड़ित अथवा रोगी-जन इस **'दुर्गा'**-नाम से सुखी हो जाते हैं। जो भी सहस्र बार इस **'दुर्गा'**-नाम को जपता है, उसे सर्वाभीष्ट-सिद्धि मिलती है —

न दुर्गा-नाम-सदृशं, नामास्ति जगती-तले।

अर्थात् इस पृथ्वी में **'दुर्गा'**-नाम के समान फल-दायक दूसरा नाम नहीं है। **'दुर्गा'**-शब्द का अर्थ शास्त्र-कारों ने इस प्रकार लिखा है—**दुःखेन गम्यते अस्यां, दुःखेन गीयते स्तूयते, दुर्ग-नामासुर-बधाद् वा।**

अर्थात् इस दुर्गा का जानना भी कष्ट से होता है अथवा दुःख से गायन की जाती है, दुःख से स्तुति की जाती है अथवा दुर्गासुर का नाश करने से ही **'दुर्गा'**-नाम प्रसिद्ध हुआ अथवा दुर्ग नामक दैत्य के मारने पर, महा-विघ्न और कष्ट के आने पर, महा-भय व रोग को दूर करनेवाली जो है, उसे **'दुर्गा'** कहते हैं। लिखा है—

भूतानि दुर्गा भुवनानि दुर्गा।
स्त्रियो नरश्चापि पशुश्च दुर्गा।।
यद्यद्धि दृश्यं खलु सैव दुर्गा।
दुर्गा-स्वरूपादपरं न किञ्चित्।।

अर्थात् सकल भूत (जीव), सारे भुवन, सभी स्त्री या पुरुष और पशु— सभी **'दुर्गा'** के स्वरूप हैं। सर्व-व्यापिनी **'दुर्गा'** सर्वत्र व्यापक हैं। हमारे सम्मुख जो-जो दृश्य हैं, सकल **'दुर्गा'** ही हैं। **'दुर्गा'** के स्वरूप से भिन्न कोई भी और कुछ नहीं है। सर्वत्र सर्व-वस्तु को **'दुर्गा'**-रूप में जो ध्यान करेगा, उसे ब्रह्म-स्वरूपा शिवा ब्रह्म-ज्ञान करा देती हैं।

'शारदीय नव-रात्र' की विशेष महिमा शास्त्रों में लिखी है। निर्णय-सिन्धु, निर्णयामृतादि ग्रन्थों में आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से **'नव-रात्र'** का आरम्भ होना बताया है। उदय-व्यापिनी ही ग्राह्या है। इसी दिन विधि से **'घट-स्थापन'** करे और पूजन करे। **'घट-स्थापन'** के सम्बन्ध में विशेष वचन है —

वैधृतौ पुत्र-नाशस्तु, चित्रायां धन-नाशनम्।
तस्मिन्न स्थापयेत् कुम्भं, चित्रायां वैधृतौ तथा।।

अर्थात् **'वैधृति'**-योग में **'घट-स्थापन'** करने से पुत्र का और **'चित्रा'** में धन का नाश होता है। अतः इनमें **'घट-स्थापन'** नहीं करना चाहिए। **'नव-रात्र'** में **अखण्ड दीप-दान** की बहुत महिमा है। लिखा है—

अखण्ड - दीपकं देव्याः, प्रीतये नव-रात्रकम्,
प्रज्वालयेदहो - रात्रमेक - चित्त - धृतो व्रतः।
चण्डी-सप्तशतीं कृत्वा, प्राप्नोति चित्त-वाञ्छितम्।।

अर्थात् **'नव-रात्र'** में दिन-रात **'अखण्ड दीप-ज्योति'** देवी की प्रसन्नता-कारक होती है। शुद्ध दृढ़ चित्त से प्रेम से **'अखण्ड दीप'** स्थापित करे। लिखा भी है—

मूले तु स्थापने देव्याः, पूर्वाषाढासु पूजनम्।
उत्तरासु बलिर्देया, श्रवणेन विसर्जयेत्।।

अर्थात् **'मूल नक्षत्र'** में देवी की स्थापना करे, **'पूर्वाषाढ़'** में पूजन करे, **'उत्तराषाढ़'** में बलि दे और **'श्रवण'** में विसर्जन करे। **'काली-विलास-तन्त्र'** में भी लिखा है—

आर्द्रायां बोधयेद् देवीं, मूलेनैव प्रवेशयेत्।
पूर्वोत्तराभ्यां सम्पूज्य, श्रवणेन विसर्जयेत्।।

अर्थात् आश्विन कृष्णा अष्टमी या नवमी में जब **'आर्द्रा'** नक्षत्र हो, तभी दुर्गाजी को बाजे आदि से जगाए। **'मूल'** में विशेष पूजन करके **'पूर्वा'** या **'उत्तरा'** में भी पूजन करके हवनादि करे। **'श्रवण'** में विसर्जन करे।

आर्क्ष यः परित्यज्य, दुर्गा-देवीं प्रपूजयेत्।
विफला तस्य सा पूजा, कदाचिन्न फल-प्रदा॥

जो मानव **'आर्द्रा'** में श्रीदुर्गा जी की पूजा नहीं करता, उसे **'नवरात्र'** में पूजा आदि फल नहीं देते —

सा पूजा राक्षसी-पूजा, दुर्गा-पूजा कथं भवेत्?

अर्थात् वह पूजा राक्षसी-पूजा समझी जाती है, **दुर्गा-पूजा** नहीं। दुर्गा भगवती की महिमा कहाँ तक लिखूँ! ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रादि देवों ने इन्हीं की उपासना से सिद्धि पाई है। आज भी जो-जो इस भू-तल में हैं, सभी इस शक्ति की उपासना से ही शक्तिमान् हैं—

पूर्व-जन्म-कृतैः पुण्यैः, ज्ञात्वैनं पर-दैवतम्॥

अर्थात् पूर्व-जन्म के पुण्य-सञ्चय से भगवती की उपासना का सौभाग्य प्राप्त होता है, इसके स्तोत्र-पाठादि करने तथा कराने की रुचि होती है। जब तक पाप के संस्कार रहते हैं, तब तक माता के चरणों में प्रणाम करने की रुचि नहीं होती। पाप दूर होने पर मनुष्य दृढ़-व्रती होकर माता के चरणों में लगता है—

ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां, क्षयात् पापस्य कर्मणाम्।

पाप-कर्म का नाश होने पर ही मनुष्य को मोक्ष का मार्ग सूझता है। माता की शरण होने पर ही मोक्ष-प्राप्ति होती है।

सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां भवति मुक्तये।

अर्थात् माता की प्रसन्नता ही मोक्ष-दायिनी होती है। यह शिव-शक्त्यात्मक योग भोग-मोक्ष का द्वार है। हे साधक-वृन्द! अज्ञान-अन्धकार में भटकते हुए क्यों तुम पुनः-पुनः जन्म-मृत्यु के घात-प्रतिघात से, रोग-शोक मोह-अनुताप की पीड़ा से तप्त होकर व्यथित हो रहे हो? क्यों आधि-व्याधि चिन्ता में डूब रहे हो? आओ, **श्रीदुर्गा माता की शरण** लो, जिससे तुम्हारा ऐहिक तथा पारलौकिक उद्धार हो।

'नवरात्र' में 'नव-दुर्गाओं का पूजन'

'शक्ति-सङ्गम तन्त्र' में श्रीपार्वती श्रीशिव जी से प्रश्न करती हैं— 'हे देवेश! मैं **'नव-रात्र' के विधान** को सुनने की इच्छा रखती हूँ।'

श्रीशिव जी ने कहा—

नव-शक्तिभिः संयुक्तं, नव-रात्रं तदुच्यते।
एकैव देव-देवेशि! नवधा परि-तिष्ठिता॥

अर्थात् **नव-रात्र— नव-शक्तियों से संयुक्त** है। **एक-एक तिथि में एक-एक शक्ति के पूजन का विधान** है।

'मार्कण्डेय पुराण' में लिखा है कि—**'प्रथमं शैल-पुत्री'** इत्यादि, जिसका आशय यह है कि (१) **शैल-पुत्री**, (२) **ब्रह्म-चारिणी**, (३) **चन्द्र-घण्टा**, (४) **कूष्माण्डा**, (५) **स्कन्द-माता**, (६) **कात्यायनी**, (७) **काल-रात्रि**, (८) **महा-गौरी** और (९) **सिद्धि-दात्री**— इन **'नव-दुर्गाओं'** का **'नव-रात्र'** में पूजन होता है। इनके पूजन से अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है।

नवरात्र-महिमा और नवरात्र-पूजन

❖ 'कुल-सङ्ग-शेखर' पण्डित देवीप्रसाद घिल्डियाल

शरद् ऋतु में **आश्विन शुक्ल-पक्ष** में भारत के कोने-कोने में हिन्दू-मात्र के घर में जगदम्बा का **'नव-रात्र'**-पूजन सोत्साह होता है। सभी सम्प्रदायों के अनुयायी अपनी कुल तथा सम्प्रदाय-परम्परागत पद्धतियों के अनुसार अपनी श्रद्धा, भक्ति माँ के चरणों में चढ़ाते हैं। शाक्तों के लिए तो **'शारदीय नव-रात्र'** महा-पर्व है और उनमें भी कौल-मार्गावलम्बियों के लिए तो यह पर्व अत्यन्त ही महीयान है।

भारतीय शब्द-कोष में **'धर्म'**-शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। भारतीय का तो सोना, उठना, घर-गृहस्थी का कार्य करना, यहाँ तक कि शौच, लघु-शङ्का इत्यादि तक कार्य सभी **'धर्म'** ही है। देव-पूजन तो उस विराट् **'धर्म'** के अन्तर्गत एक अत्यन्त ही लघु कार्य है। अन्य संस्कृतियों में तो देव-पूजन, भक्ति तथा उसकी पद्धति के निमित्त एक विशिष्ट नाम तथा परिभाषा है जैसे अंग्रेजी का 'इज्म', अरबी-फारसी का 'मजहब'। अब यहाँ पर उक्त शब्दों का कोई पर्याय-वाची शब्द न होने के कारण **'धर्म'** को केवल देव-पूजा तथा तत्सम्बन्धित कार्य-व्यवहारों के ही अर्थ में प्रयुक्त किया जाएगा।

प्रत्येक **'धर्म'** का अपना-अपना इतिहास है। इसी प्रकार प्रत्येक **धार्मिक उत्सव** का भी अपना-अपना इतिहास होना स्वाभाविक है। सर्व-साधारण में **'नव-रात्र'**-पर्व का इतिहास इस जन-श्रुति के रूप में सुना जाता है कि—

''भगवान् रामचन्द्र ने रावण पर विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में जगदम्बा का **'नव-रात्र-मख'** किया था और रावण का वध आश्विन शुक्ल-पक्ष की दशमी को करके श्री रामचन्द्र भगवान् ने लङ्का को विजय किया था। इस कारण आश्विन शुक्ल दशमी को **'विजय-दशमी'** कहते हैं। इस विजय के उपलक्ष्य में उन्होंने प्रति-वर्ष आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से शुक्ल-नवमी पर्यन्त जगदम्बा का पूजन करके दशमी के दिन पूजा-विसर्जन की परिपाटी चला दी।''

हो सकता है, **'नव-रात्र'-पूजन** का शब्दशः यही इतिहास हो, यद्यपि इन पंक्तियों के लेखक को इसे देखने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ है, परन्तु शब्दशः ऐसा इतिहास न होने पर भी इसकी पुष्टि पुराणों से होती है। **'श्रीमद्देवी-भागवत'** के तृतीय स्कन्ध के अध्याय ३, श्लोक २८ से ६१ में निम्न-लिखित कथानक **'नवरात्र' के पूजन** के सम्बन्ध में दिया गया है—

''जब **रावण सीता जी** को हर कर ले गया और खोज करने पर **श्रीरामचन्द्र जी** को यह वृत्त ज्ञात हुआ, तो उन्होंने क्रुद्ध होकर **रावण-वध** की प्रतिज्ञा तो कर डाली, परन्तु उस प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के निमित्त युद्धोद्योग करने पर उन्हें चिन्ता हुई की **रावण** तो अजेय बली है, उसका किस उपाय से वध किया जा सकेगा? जब **श्रीरामचन्द्र जी** इस प्रकार चिन्ता-मग्न थे, उसी समय आकाश से वीणा बजाते हुए **देवर्षि नारद** उनके पास आ उपस्थित हुए। **श्री रामचन्द्र जी** ने **देवर्षि** का अर्घ्य-पाद्य से स्वागत किया। देवर्षि ने उनको खिन्न देखकर उनका कुशल-मङ्गल पूछते हुए उनसे कहा कि—

'हे राघव! आप क्यों इतने शोकार्त और

चिन्तित होते हैं? हमें ज्ञात है कि **रावण** ने सीता का हरण किया है। आपका जन्म **रावण के वध** के ही निमित्त हुआ है और उक्त वध का कारण रावण द्वारा **सीता-हरण** बनाया गया है! इस कारण आप धैर्य धरिए। अब मैं आपको **रावण-वध** का उपाय बतलाता हूँ कि आप श्रद्धा-युक्त होकर आश्विन के महीने में जगदम्बा का **'नव-रात्र'— व्रत** करें। एक-भुक्त रह कर **जगदम्बा का विधि-पूर्वक पूजन, जप, होम** करें और मेध्य पशुओं की बलि दें। यह व्रत **ब्रह्मा, विष्णु** तथा **शिव** ने भी पूर्व-काल में किया है।'

नारद जी के ऐसा कहने पर **श्रीरामचन्द्र जी** ने प्रश्न किया— 'वे **देवी** कौन है? उनका क्या प्रभाव है? किस प्रकार उनकी उत्पत्ति हुई और उनके इस **व्रत** का क्या विधान है? यह कृपा कर मुझे बतलाइए।'

नारद जी ने उत्तर दिया— 'हे **राम!** सुनिए, यह **आद्या शक्ति** सदा नित्य है, सनातनी है और पूजा किए जाने पर सब कामनाओं को पूर्ण करनेवाली तथा दुःख-नाशिनी है। वह ब्रह्मादिक सभी प्राणियों की कारण है। उस शक्ति के बिना कोई हिलने में भी समर्थ नहीं है। वही **विष्णु** की पालन-शक्ति, **ब्रह्मा** की सृजन-शक्ति तथा **रुद्र** की संहार-शक्ति है। वह अचिन्त्या **परा-शक्ति** है और **मङ्गल-दायिनी** है। इस त्रिभुवन में छोटी-बड़ी, भली-बुरी—जो कुछ भी वस्तु है— उस सबकी जो यह शक्ति है, उसकी उत्पत्ति किस प्रकार हो सकती है?

वह **निर्गुण शिवा** सर्गादि में, जब कि **ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, दिवाकर, इन्द्र, देव, असुर, पृथ्वी, पर्वत** — कुछ भी न थे, **परात्पर पुरुष** से विहार करती रहती है और पश्चात् वही **सगुण** होकर त्रैलोक्य का निर्माण करती है, जिसमें प्रथम वह **ब्रह्मादिक का सृजन** करती है और **शक्ति** देती है। उनको जान लेने पर जीव संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है। वह **परमा विद्या** है, वेदों की **आद्या** है, **वेद-कारिणी** है। ब्रह्मादिकों ने गुण-कर्म-विभागों के अनुभव से उसके असंख्य नाम गाए हैं। उनको कहाँ तक बतलाया जाए! **अ-कार से क्ष-कार** तक वर्णों के भिन्न-भिन्न योग करने से संख्यातीत शब्द बनते हैं, वे सभी उसके नाम हैं।'

तब **रामचन्द्र जी** ने आश्विन मास में यह व्रत विधि-पूर्वक किया। फिर **अष्टमी** को मध्य-रात्रि में प्रति-पूजित होकर **भगवती** ने **राम-लक्ष्मण** को वरदान दिया कि **कपि-सन्य** की सहायता से वे **रावण** पर विजय प्राप्त करेंगे और समर में वे **भगवती की शक्ति** से सम्पन्न रहेंगे। इस प्रकार वर देकर **भगवती** अन्तर्ध्यान हो गई और तब **राम** ने उस व्रत को **दशमी** के दिन **विजया** का पूजन कर तथा अनेक दान देकर व्रत पूरा करके **रावण-विजय** को प्रयाण किया। और तब—

कपि-पति की सैन्य से युक्त, अनुज को साथ लेकर, श्रीपति **भगवान् रामचन्द्र** ने **परा-शक्ति से प्रत्यक्ष स्वरूप प्रेरणा** पाकर तथा पूर्ण-काम होकर, समुद्र पर सेतु बाँधकर देव-शत्रु **रावण का वध** किया। उनकी यह कीर्ति सारे संसार में गाई जाती हैं।''

हमारे यहाँ उक्त पर्व के ऐतिहासिक महत्त्व को ही लेकर आध्यात्मिक विद्या के विद्वान् चुप नहीं हो गए। उन्होंने विभिन्न प्रकार के साधकों के निमित्त भिन्न-भिन्न प्रकार के **'नव-रात्र'-विधान** तथा समय बतलाए हैं, जिनमें से कुछ जो इन पंक्तियों के लेखक को ज्ञात हैं, इस लेख में बताए जाएँगे।

'दुर्गा-सप्तशती' के १२ वें अध्याय में कथित है—

"शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।"

इस उक्ति की **'महा-पूजा'** का ही सम्वर्धित तथा परिष्कृत रूप **'शारदीय नव-रात्र'** का महोत्सव है — यह **शारदीय नव-रात्र** तो सारे भारतवर्ष में मनाया जाता है, परन्तु हिन्दुओं की कुछ शाखाएँ तथा भारत के कतिपय भागों में **चैत्र मास में 'वासन्तिक नव-रात्र'** का महोत्सव भी **'शारदीय नव-रात्र'** के ही समान धूम-धाम से होता है। हमारे पर्वतीय प्रदेश में तो **'शारदीय नव-रात्र'** से अधिक महत्त्व **चैत्र के 'नवरात्र'** को दिया जाता है। देव-कार्य के निमित्त जगदम्बा ने चैत्र-मास में पर्वत-राज हिमालय के घर जन्म लिया था। हम पर्वतीय उन्हीं गिरि-राज की प्रजा हैं। इस कारण हम लोग बड़े उत्साह तथा श्रद्धा से **चैत्र में अम्बा-यज्ञ का विधान** कर **पर्वत-राज-पुत्री का जन्मोत्सव** मनाते हैं।

चैत्र-मास के 'नव-रात्र'-पर्व के पीछे भी एक इतिहास है—

व्यास जी ने **राजा जनमेजय** से कहा कि— "हे राजन्! जब **सती** ने अपने शरीर को अग्नि में जला दिया, तो **शिव** भ्रान्त होकर इधर-उधर भटकते हुए एक स्थान पर स्थित हुए। प्रपञ्च तथा मान से रहित होकर अपने मन को उन्होंने समाधिस्थ कर दिया और वहाँ पर **भगवती के स्वरूप पर ध्यान** लगाकर समय बिताने लगे। **जगदम्बा सती** के इस प्रकार शरीर त्याग करने के फल-स्वरूप त्रैलोक्य चराचर-सहित सौभाग्य-रहित हो गया और सारा जगत् सागर, द्वीप, पर्वतादि सहित शक्ति-हीन हो गया। सबके हृदयों का आनन्द शुष्क हो गया और वे उदास तथा चिन्ता-जर्जर सदा दुःख-सागर में मग्न रोग-ग्रस्त हो गए। ग्रह तथा देवताओं के व्यवहार में वैपरीत्य उत्पन्न हो गया।

उसी समय **तारक** नाम का महाऽसुर **ब्रह्मा** से वर प्राप्त कर त्रैलोक्य का अधिपति हो गया। **ब्रह्मा** से उसने यह वर प्राप्त किया कि उसका वध **शिव जी** के औरस पुत्र के हाथ से होगा। कारण कि **शिव जी** की धर्म-पत्नी तो हैं नहीं और धर्म-पत्नी के अभाव में उनका औरस पुत्र कैसे हो सकेगा? **तारकासुर** के अत्याचार से देवता अत्यन्त त्रस्त हो गए और उन्हें कोई उपाय नहीं सूझा, जिससे **शिव जी** का औरस पुत्र होना सम्भव हो?

इस प्रकार **देव-गण** चिन्तातुर होकर **बैकुण्ठ-धाम** में **विष्णु भगवान्** के समीप पहुँचे और उनसे सब वृत्तान्त कहा। **विष्णु भगवान्** ने उनको उत्तर दिया कि "अरे, तुम सब क्यों चिन्तातुर हो रहे हो? **काम-कल्प-द्रुमा शिवा भुवनेश्वरी,** जो **मणि-द्वीप** में निवास करती है, वह तो **सदा चैतन्य** है, हमने उसकी उपेक्षा की है। अतः **जगन्माता** ने यह सब नाटक हमारे शिक्षण के निमित्त रचा है। माँ द्वारा बच्चे का ताड़न उसके लालन के ही **निमित्त** होता है, उसमें माता का अकारुण्य नहीं है। **जगदम्बा** ही हमारे गुण-दोषों पर नियन्त्रण रखनेवाली है। बच्चे से पग-पग पर अपराध होते ही रहते हैं। माता के अतिरिक्त अन्य कौन इन अपराधों को सहता है? अतएव आप लोग उस **पराम्बा** की शरण में निर्व्याज चित्त-वृत्ति से जाओ। वह आपका कार्य-विधान करेगी।"

इस प्रकार देवताओं से कह **विष्णु जी** भी स्वयं स-पत्नीक **गिरि-राज हिमालय** में पहुँचे और वहाँ **अम्बा-यज्ञ** की विधि से अनुष्ठान किया और **हल्लेखा (ह्रीं) बीज** से अतीन्द्रिय होकर **परा-शक्ति का पूजन** किया। तब अकस्मात् **चैत्र नवमी शुक्रवार** को उन देवताओं के समीप श्रुति-बोधित अनिर्वचनीय प्रकाश-पुञ्ज प्रकट हुआ, जिसके चतुर्दिक, चारों वेद मूर्तिमान

होकर स्तुति कर रहे थे। वह **पर-तत्त्व** करोड़ों सूर्य के प्रकाश के समान उज्ज्वल, करोड़ों चन्द्रमाओं के समान सु-शीतल, कोटि विद्युत्-पुञ्ज के समान आदि-मध्यान्त-हीन था। वह स्त्री-पुं-नुपुंसक कुछ भी नहीं था। उसके प्रकाश से देवताओं की आँखें बन्द हो गईं। फिर धैर्य धारण करके जब देवताओं ने आँखें खोलीं, तो उन्होंने अपने समक्ष दिव्य आभा-युक्त मनोहर स्त्री-मूर्ति देखी, जो अत्यन्त मनोहर अङ्गोंवाली एक नव-यौवना कुमारी थी।

वह कुमारी उन्नत कुचोंवाली थी, जिनके समीप कमल-कलियाँ भी लज्जित होती थीं। उनसे मधुर ध्वनि करनेवाली घुँघरुओं से युक्त करधनी धारण कर रखी थी। केतकी-प्रसून के समान शुभ्र-वर्णवाली उसकी कुन्तल -राशि भौरे के रङ्ग के समान थी। उसके सुन्दर नितम्ब थे। कर्पूर-मिश्रित-ताम्बूल-राग-रञ्जित उसका मुख था। उसने सुवर्ण ताटङ्क धारण कर रखे थे और मस्तक पर अष्टमी का अर्ध-चन्द्र सुशोभित था। उसके सिर पर चन्द्र-किरणों से प्रकाशित रत्न-मुकुट था। कुन्द-कली के समान उसके दन्त थे और उसने मोतियों की माला धारण कर रखी थी। उसके केश-पाश में मल्लिका तथा मालती की मालाएँ ग्रथित थीं। वह त्रिलोचना थी और उसके ललाट पर केशर का तिलक था। वह चतुर्भुजा थी, जिनमें पाश, अंकुश, वर तथा अभय शोभा दे रहे थे। दाड़िमी-कुसुम-प्रभा रक्त-वस्त्र पहिने हुई थी। **सर्व-देव-नमस्कृता भगवती** सब श्रृङ्गार किए हुई थी। वह सबकी कामनाओं को पूर्ण करनेवाली, सबकी माता, सबको मोहित करनेवाली थी।

ऐसी प्रसाद-सुमुखी, स्मित-वदना, अव्याज-करुणा-मूर्ति **माँ** को देखकर देवता प्रेम से गद्गद् हो गए। उनकी आँखों में प्रेमाश्रु भर आए और उनकी वाणी मूक हो गई। किञ्चित् धैर्य धारण करके उन्होंने **'देव्यथर्व-शीर्ष'** से माँ की स्तुति की। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर **जगदम्बा** ने उनके दुःख का कारण पूछा। **देवताओं** ने कहा कि "माँ! तुम तो सब जानती हो। फिर पूछती क्यों हो?" अस्तु उन्होंने **तारकासुर** का सारा वृत्त बताकर कहा कि "शिव की पत्नी है नहीं, तो शिव का औरस पुत्र कहाँ से हो?" जगदम्बा ने कहा—

मम शक्तिस्तु या गौरी, भविष्यति हिमालये।
शिवाय सा प्रदेया स्यात्, वः कार्यं तु विधास्यति।।

(देवी-भागवत्, स्कन्ध ७, ११, ६३-६४)

"गौरी नाम की मेरी शक्ति हिमालय के घर में उत्पन्न होगी, उसका विवाह तुम शिव से करो। वह तुम्हारा कार्य करेगी।"

इस प्रकार **चैत्र का 'नव-रात्र'**-पर्व वर्ष-वर्ष मनाया जाने लगा।

'शक्ति-सङ्गम तन्त्र (तारा-खण्ड) के अनुसार **चैत्र** तथा **आश्विन** मासों में **'नव-रात्र'**-व्रत करना कहा गया है—

नव-शक्तिभिः संयुक्तं, नव-रात्रं तदुच्यते।

नौ शक्तियों से युक्त होने के कारण इस व्रत को **'नव-रात्र'**-व्रत कहते हैं। ये **एक ही शक्ति के नौ स्वरूप** हैं।

'नव-रात्र' दो हैं— (१) **'शयन'** तथा (२) **'बोधन'**। **'चैत्र'**-मासीय **'शयन'** तथा **'आश्विन'**-मासीय **'बोधन'** कहलाता है। जो इन दोनों व्रतों को करता है, वह सर्व-सिद्धियों को प्राप्त करता है। इन व्रतों को यथा-शक्ति निराहारी, फलाहारी, एक-भक्त, हविष्याशी, नक्त-भोजी तथा दृढ़-व्रती रहकर करना चाहिए। यह साधारण नियम है।

शुक्ल पक्ष की **प्रतिपदा** से **अष्टमी** तक यह व्रत कहा गया है। **नवमी** को **पारण** तथा **दशमी** को **विसर्जन** करना चाहिए। **प्रतिपदा** को

'कलश'-स्थापन करना चाहिए। **अमा-युक्त प्रतिपदा** अग्राह्य है।

इसी प्रकरण में **गौड़, काश्मीर** तथा **केरल**-क्रमों के अनुसार किस प्रकार **'नव-रात्र'**-व्रत किया जाना चाहिए तथा भिन्न-भिन्न सिद्धियों के लाभार्थ किस विधान तथा सामग्री द्वारा इन **'नव-रात्र'**-पर्वों पर पूजन किया जाता है और किन-किन मन्त्रों के जप-पुरश्चरणादिक किए जाते हैं, उनको बताया गया है। जिज्ञासु इन्हें **'शक्ति-सङ्गम तन्त्र'** से जान सकते हैं।

'दुर्गोपासना-कल्पद्रुम' में **'दुर्गा-कल्प'** उद्धृत किया गया है, जिसमें **'नव-रात्र'**-व्रतों का विवरण है। यथा—

'हे राजन्! सुनिए, मैं आपसे **उत्तम चण्डिका-क्रम** कहूँगा। आश्विन के शुक्ल-पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ करके यथा-क्रम करे।'

इससे आगे फिर तैलाभ्यङ्ग स्नान, पुण्याह-वाचन, कलश-पूजा, पीठ-पूजा इत्यादि जो सभी करते हैं, उसका क्रम इस 'कल्प' में दिया हुआ है, जिसके आधार पर **'नव-रात्र'**-मख की सहस्त्रशः पद्धतियाँ बनी हुई हैं।

इस प्रकार **जगदम्बा-अर्चन** तथा **दुर्गा-सप्तशती का पाठ नवमी**-पर्यन्त करके **दशमी** को **विसर्जन** करे।

'दुर्गोपासना-कल्पद्रुम' ने एक प्रकार का **'नव-रात्र'**-विधान भी बतलाया है कि **शुक्ला षष्ठी** से आरम्भ करके **शुक्ला चतुर्दशी** तक सर्व-कार्य-फलार्थियों को **नव-दुर्गा-विधान** करना चाहिए। **नौ दिनों** तक नित्य आदि से अन्त तक **चण्डिका के चरित-त्रय का साङ्गोपाङ्ग जप** करे।

'काल-रात्रि-विधान' नामक एक अन्य प्रकार का **'नव-रात्र'-विधान** भी कहा है—

कृष्णा-षष्ठीं समारभ्य, नव-दुर्गा-विधान-वत्।
यो यथा कुरुते जाप्यं, काल-रात्रिरुदाहृता।।

अर्थात् **कृष्ण-पक्ष की षष्ठी** से आरम्भ करके **कृष्णा चतुर्दशी** तक किया गया **'नव-रात्र'**-विधान **'काल-रात्रि-विधान'** कहलाता है।

उपर्युक्त दो विधानों के निमित्त कोई भी मास विहित या निषिद्ध नहीं है, इसी कारण **चैत्र** तथा **आश्विन** के **'नव-रात्र'** को छोड़कर जो पूजन किए जाते हैं, वे अन्तिम दो विधानों से ही हुआ करते हैं। हमारे पर्वतीय देशों में **शारदीय** तथा **चैत्री 'नव-रात्र'**-पूजन के अतिरिक्त **श्रावण** तथा **पितृ-पक्ष** को छोड़कर अन्तिम दो विधान प्रत्येक मास में किसी-न-किसी ग्राम में होते ही रहते हैं।

अल्मोड़ा जिले में **भाद्र-पद** के **शुक्ल-पक्ष** में बड़ी धूमधाम से **'नव-रात्रोत्सव'** मनाया जाता है। **भाद्र-पद की शुक्ला प्रतिपदा** से आरम्भ होकर **नवमी**-पर्यन्त **'नव-रात्र'**-व्रत करके **भाद्र-पद** की **शुक्ला दशमी** को विसर्जन होता है।

नवरात्र-पूजन

या चण्डी मधु-कैटभ-प्रदलिनी,
या माहिषोन्मूलिनी।
या धूम्रेक्षण-चण्ड-मुण्ड-मथिनी,
या रक्त-बीजाशिनी।।
शक्तिः शुम्भ-निशुम्भ-दैत्य-दलिनी,
या सिद्धि-लक्ष्मी परा।
सा देवी नव-कोटि-मूर्ति-सहिता,
मां पातु विश्वेश्वरी।।

शरद् ऋतु के **आश्विन** की **शुक्ल-पक्ष** की **प्रतिपदा** से सारा भारत-वर्ष **श्रीचण्डिका-माहात्म्य** के पाठ से मुखरित हो उठता है। हिन्दू-मात्र, चाहे वे किसी सम्प्रदाय के हों, इस समय अपनी भक्ति, श्रद्धा, प्रार्थना जगन्माता के चरणों में प्रस्तुत करते हैं। इनमें धनी, निर्धन, स्वस्थ, रोगी, सबल, निर्बल— सभी प्रकार के व्यक्ति

होते हैं। इन सबकी प्रार्थनाओं से वायु-मण्डल एक अनिर्वचनीय भाव-युक्त शब्द से गूँज उठता है, जिसका अर्थ केवल भावना से ही समझा जा सकता है, तर्क से नहीं।

वैसे तो माँ की सेवा के निमित्त कोई एक निर्धारित दिन; ऋतु अथवा काल नहीं है। माँ तो **सभी दिनों, सभी ऋतुओं** और **सभी मुहूर्तों में पूजनीया** है, परन्तु उसने अपनी सन्तान को कुछ विशेष आदेश (**श्रीदुर्गा-सप्तशती,** अध्याय १३) दिए हैं—

''**चण्डी-स्तव** के पाठ से जो मुझे नित्य तुष्ट करता है, मैं निस्सन्देह उसकी समस्त बाधाओं का नाश करती हूँ तथा जो फिर **शरद् ऋतु** में मेरी **वार्षिकी महा-पूजा** करता है और पूजा में भक्ति-युक्त होकर मेरे इस माहात्म्य को सुनता है, वह मनुष्य सब बाधाओं से विनिर्मुक्त होकर मेरे प्रसाद से धन-धान्य तथा सन्तान-युक्त होता है।''

श्रीचण्डी का इस प्रकार **मख, पूजन** तथा **पठन** क्यों होता है? इसके पीछे क्या-क्या पौराणिक आख्यान हैं? इस पूजन व **चण्डी- माहात्म्य** का क्या कोई ऐतिहासिक या राष्ट्रीय महत्त्व है? इन सब बातों का विवेचन इस लेख में करना मेरा उद्देश्य नहीं है। मेरा उद्देश्य साधक-वर्ग का ध्यान इसके साधना-विषयक अर्थ की ओर आकृष्ट करना है। मेरी साधारण बुद्धि में **श्रीचण्डी का महत्त्व** साधना-विषयक ही है।

श्रीचण्डी-माहात्म्य की पूर्व-पीठिका है कि **सुरथ** नाम का एक राजा शत्रुओं से आक्रान्त हो गया और अपने ही सेवकों के विश्वास-घात के कारण शत्रुओं ने उसे जीत कर उसका राज्य, कोष इत्यादि छीन लिया और वह अपनी रक्षा के निमित्त गहन वन में भाग आया। इसी प्रकार **समाधि** नाम का एक बनिया भी अपने पुत्र-दारादिक से निरस्त होकर वन में आ गया। उन्होंने उक्त वणिक् का धन छीन कर उसे घर से निकाल दिया था। ये दोनों वन में मिल पड़े और एक दूसरे से अपने-अपने दुःख का निवेदन कर सुमेधा ऋषि के पास अपने दुःख का कारण पूछा और यह भी पूछा कि 'यह किस प्रकार दूर हो?' इस जिज्ञासा के उत्तर में ऋषि ने **'श्रीदेवी-माहात्म्य'** का उपदेश किया है।

'श्रीदेवी-माहात्म्य' तीन आवरणों में है, जैसा इस लेख के आदि मङ्गलाचरण के श्लोक में दिखाया गया है। प्रथम **मधु-कैटभ-वध,** द्वितीय **महिषासुर-वध,** तृतीय **शुम्भ-निशुम्भ-वध।** यथार्थ में यह सारा-का-सारा केवल **अन्तर्यजन** है और **जीव को पाश-मुक्त करने के लिए उसके अन्तर्मन के देवासुर-संग्राम का वर्णन** किया गया है और बताया गया है कि वह **माँ (पराऽहन्ता)** की सहायता से इस संग्राम में विजय प्राप्त कर सकता है। **बाह्य पूजन** तो, जिसे **दुर्गा-पूजा** के अवसर पर किया जाता है या किसी अन्य समय में, गौण है। वह तो छात्र का पाठ याद करने का अभ्यास मात्र है।

उक्त **पराऽहन्ता** का दर्शन **ऋग्वेद** के **देवी-सूक्त** में भली प्रकार प्राप्त होता है। **देवी-सूक्त**— ऋग्वेद-संहिता के दशम मण्डल में है। इसके आठ मन्त्र हैं। इसकी ऋषि **वाक् आम्भृणी** हैं। इस मन्त्र की देवता **सर्व-व्यापिनी सच्चिदानन्द-स्वरूपिणी आदि-शक्ति** हैं। इसके छन्द **'त्रिष्टुप्'** तथा **'जगती'** बतलाए गए हैं। इस मन्त्र की स्फुरणा **आम्भृण ऋषि की पुत्री** को हुई थी। उनका नाम **'वाक्'** था। **'वाक्'—वाणी, सरस्वती** को कहते हैं। **'देव्यथर्व-शीर्ष'** में लिखा है—

देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्व-रूपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप-सुष्टुतैतु॥

अर्थात्—देवताओं ने देवी वाणी (वैखरी) को उत्पन्न किया। उसे प्राणी बोलते हैं। कामधेनु-स्वरूपिणी आनन्द-दायिनी वाग्-देवी हमारे सम्मुख प्रकट हों।

अब इस दृष्टि-कोण से **'देवी-सूक्त'** पर विचार कीजिए। इस सूक्त की स्फुरणा **वाग्-देवी** को हुई है। तात्पर्य यह कि स्वयं जगदम्बा ने ही संसार को ज्ञान दिया है।

शक्ति का अर्थ भावान्तर में **सक्रियता** है। सक्रियता से **स्पन्दन** और उससे **ध्वनि** उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यही ध्वनि देवी **'वाक्'** है। इस प्रकार **परा-प्रकृति** हमारे समक्ष आविर्भूत हुई है। **'श्रीदेवी-भागवत'** के आदि में मङ्गलाचरण-श्लोक इसी बात को स्पष्ट शब्दों में प्रतिपादित करता है। यथा—

सृष्टौ या सर्ग-रूपा जगदवन-विधौ पालिनी या च रौद्री। संहारे चापि यस्या जगदिदमखिलं क्रीडनं या पराख्या।। पश्यन्ती मध्यमाथो तदनु भगवती वैखरी वर्ण-रूपा। साऽस्माद् वाचं प्रसन्ना विधि-हरि-गिरिशाराधिताऽलङ्करोतु।।

इसी प्रकार **'देवी-भागवत'** के प्रथम स्कन्ध के आदि में **गायत्री** भी है—

ॐ सर्व-चैतन्य-रूपां तामाद्यां च धीमहि बुद्धिं या नः प्रचोदयात्।

इसका अर्थ है—सृष्टि-स्थिति-संहार करनेवाली **वाग्-देवी,** जो परा-पश्यन्ती-मध्यमा तथा वैखरी वाणी के रूप में सारे जगत् में भासमान है, जिसे ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर वन्दन करते हैं, हमारा मङ्गल करें। हम सर्व-चैतन्य-रूपा उस **आद्या विद्या का चिन्तन** करते हैं, जो हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करनेवाली है।

स्वयं जगदम्बा ने अपना स्वरूप **'देवी-सूक्त'** में इस प्रकार बतलाया है—

"मैं रुद्र, वसु, आदित्य, विश्वेदेवाओं में सञ्चरण करती हूँ। मैं मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि तथा अश्विनी-कुमारों का भरण या धारण करती हूँ। मैं सोम, त्वष्टा, पूषा, भग, देवताओं को धारण करती हूँ। यजमानों द्वारा देवताओं के निमित्त किए हुए यज्ञ के फल को मैं ही धारण करती हूँ। मैं निखिल ब्रह्माण्ड की ईश्वरी हूँ, सब निधियों (भौतिक तथा आध्यात्मिक) को देनेवाली हूँ। अपने को जाननेवाली, ज्ञान देनेवाली, सब पूजे जानेवालों में मैं प्रथमा हूँ। मैं ही सर्वत्र सब जीव-देहों में विराजमान हूँ। बहु-भावों में व्यवस्थित हूँ, जिनकी देवता आराधना करते हैं। मेरे ही द्वारा प्राणी भोजन खाता-पचाता है, देखता है, श्वास लेता है, सुनता है। जो अन्तर्यामी-रूपिणी घट-घट-वासिनी 'मुझ' **(चित्-शक्ति)** को नहीं जानते, वे ज्ञान-हीन संसार में बहुत दुःख उठाते हैं।

अतएव हे श्रुत (बहु-श्रुत) ! मैं दुर्लभ उपदेश देती हूँ, सुनो। देवताओं तथा मनुष्यों के अपने-अपने अभीष्ट-सिद्ध्यर्थ सेवित मन्त्रों, विद्याओं तथा स्तवनों को मैं ही कहती हूँ। जिसे बड़ा बनाना चाहती हूँ, उसे बड़ा बना देती हूँ। किसी को सुमेधा (उत्तम प्रज्ञावाला) ऋषि बना देती हूँ। मैं सर्व-श्रेष्ठ जगत्-पिता को प्रसव करती हूँ। मैं ही प्रकृति-रूप भुवनों में प्रविष्ट हूँ। मैं ही वायु के समान प्रबल प्रेरक होकर इस सृष्टि का आरम्भ करती हूँ, स्वर्ग तथा मर्त्य-लोक से परे भी मैं विद्यमान हूँ। यही मेरी महिमा है।"

यह **'देवी-सूक्त'** का स्थूल अर्थ है। ब्रह्म-ज्ञानी विद्वज्जन तो इसके एक-एक मन्त्र की व्याख्या में बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिख सकते हैं। इस **सूक्त** का एक-एक शब्द विचित्र अर्थों से भरा पड़ा है, जिनको वही चिन्मयी समझाने की

कृपा करे, उनकी ही समझ में वे अर्थ आ सकते हैं। **तुलसीदास जी** ने **'राम-चरित-मानस'** में **महर्षि वाल्मीकि** के मुख से **भगवान् श्रीराम (तारा)** के प्रति ऐसा ही कुछ कहलाया है—

जग पेखन तुम्ह देख निहारे,
विधि-हरि-शम्भु नचावनि-हारे।
तेउ न जानहिं मरम तुम्हारा,
अउर तुम्हहिं को जाननि-हारा।
सोई जानइ जेहि देहु जनाई,
जानत तुम्हहिं तुम्हहिं हो जाई।

'देवी-सूक्त' को व्यास जी ने **'श्रीदेवी-माहात्म्य'** के रूप में **'मार्कण्डेय-पुराण'** में रखा। **'सूक्त'** का अर्थ साधारण जन-समाज की बुद्धि के निमित्त अगम्य था। साधारण मनुष्य को तो उसके **'अहम्'**-शब्द पर ही आश्चर्य होगा। इसी लक्ष्य से **व्यास जी** ने **'देवी-सूक्त'** की व्याख्या कथानक के रूप में कर दी।

'श्रीदेवी-माहात्म्य' की पूर्व-पीठिका का वर्णन पहिले किया जा चुका है। **सुरथ-समाधि** पर जो कुछ बीती है, यह यत्-किञ्चित् परिवर्तन के साथ सभी पर बीतती है। उसी को उदाहरण-स्वरूप मान कर यह कथा कही गई है। जब मनुष्य पर विपत्ति आती है, तभी उसके हृदय में उसके अज्ञात कारणों का अन्वेषण करने की जिज्ञासा उठती है और इस खोज-ढूँढ़ में यदि उस पर **माँ की कृपा** होती है, तो उसे **सद्-गुरु की प्राप्ति** होती है, जैसे **सुरथ** तथा **समाधि** हो हुई। **सद्-गुरु** उसको फिर उपरि-कथित **देवी-सूक्त** की व्याख्या करके **आत्म-दर्शन** कराते हैं और फिर उसके सब दुःख दूर हो जाते हैं।

'देवी-सूक्त' में तो प्रथम पुरुष का प्रयोग है, अतएव सामान्य बुद्धिवाले को उसे हृदयङ्गम करना कठिन हो जाता है क्योंकि वह तो द्वैत-भावापन्न है। इसीलिए **'देवी-माहात्म्य'** में उसी प्रथम पुरुष **'अहम्'** को उत्तम पुरुष **'सा'** कह करके बताया गया है।

राजा सुरथ का प्रश्न भी बड़ा महत्त्व-पूर्ण है। वे **सुमेधा ऋषि** से प्रश्न करते हैं—'भगवन्, जिस बात से अनभिज्ञ होने के कारण मेरे चित्त में अत्यन्त क्लेश है, वही मैं आपसे जानना चाहता हूँ। उसको मुझे समझाइए। मैं यह समझ तो रहा हूँ कि यह सब अज्ञान का चक्कर है, परन्तु फिर भी मुझे अपने गत-राज्य तथा राज्याङ्गों पर ममता हो रही है। हे मुनि-सत्तम! ऐसा क्यों है? इस वैश्य को पुत्र, भृत्य, दारा ने निष्कासित कर दिया है। स्वजनों ने त्याग दिया है। फिर भी इसकी उन पर ममता बनी हुई है। इस प्रकार हम दोनों महा-दुःखित हो रहे हैं। स्पष्ट-तया दोष-पूर्ण दिखाई देनेवाले विषय पर हमारा हृदय ममता कर रहा है! महा-भाग! क्या कारण है कि हम दोनों ज्ञान-वान् होकर भी मोह-युक्त होकर विवेकान्ध हो गए हैं और इस प्रकार की मूढ़ता कर रहे हैं?'

पाठक! देखिए, कितनी स्पष्ट है यह जिज्ञासा। प्रत्येक विचार-शील व्यक्ति इस प्रकार की स्थिति में पड़कर यही सोचता है। इस जिज्ञासा का उत्तर **सुमेधा ऋषि** देते हैं कि 'यह सब जगदम्बा की प्रेरणा से होता है, जिसे ऋग्वेद ने 'अहम्' कहा है।' देखिए **'देवी-सूक्त'** : **'यं कामये तमुग्रं कृणोमि...'** इत्यादि।

जिज्ञासा के उत्तर में सद्-गुरु ने **'देवी-माहात्म्य'** का उपदेश किया, जिसके फल-स्वरूप **राजा** तथा **वैश्य** के हृदय में **आत्म-शक्ति का स्फुरण** हुआ और उस स्फुरण के कारण एक को मिला अपना **गत-राज्य** तथा दूसरे को मोक्ष। — इससे सिद्ध है कि **'श्रीदेवी-माहात्म्य' भोग** तथा **मोक्ष** दोनों वस्तुएँ देनेवाला है।

अब यहाँ पर एक विचारणीय प्रश्न और उठता है कि इस उपदेश के पात्र क्षत्रिय तथा वैश्य ही क्यों छाँटे गए, ब्राह्मण या शूद्र क्यों नहीं? माँ की दृष्टि में सब समान हैं। सिद्धान्ततः प्रत्येक मनुष्य समान है, फिर भेद क्यों किया गया? इसका बड़ा सरल उत्तर है। मनुष्य होने के नाते तो सभी बराबर हैं, परन्तु उनकी अवस्थाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। कोई शिशु है, तो कोई किशोर— कोई युवा है, तो कोई वृद्ध। अपनी अवस्था के कारण उनकी विवेचना-शक्ति स्वभावतः न्यूनाधिक होती है। इसी प्रकार कोई लिखना-पड़ना भी नहीं जानता और कोई है विश्व-विद्यालय का स्नातक। इसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को भी समझना चाहिए। 'ब्राह्मण' तो स्वयं ब्रह्म-वेत्ता है। उसे उपदेश देने की आवश्यकता नहीं। इसीलिए उसे **सुमेधा ऋषि** के रूप में उपदेशक बनाया गया है। 'शूद्र' वह है, जिसमें इस उपदेश को हृदयङ्गम कर सकनेवाला विवेक नहीं है। अतएव इस उपदेश के पात्र 'क्षत्रिय' तथा 'वैश्य' छाँटे गए।

'क्षत्रिय' तथा 'वैश्य' दोनों **कर्म-मार्गी** हैं। 'क्षत्रिय' में रजो-गुण विशेष है। वह लड़-भिड़ कर अपना मार्ग प्रशस्त करता है। 'वैश्य' में रजो-गुण कम, तमो-गुण अधिक है। उसमें लोभ प्रधान है। वह स्वार्थ-वाह होने से लाभ ही वाला काम करता है, चाहे उससे संसार को पीड़ा क्यों न पहुँचे। अपने को हानि में रखनेवाला काम वह कभी नहीं करेगा, चाहे उससे संसार का अत्यधिक हित होता हो। अतएव उसे परिणाम में अपने कर्मों पर पश्चात्ताप होता है और वह संसार से विरक्त हो जाता है, जैसे समाधि वैश्य। जब उसकी **आत्म-शक्ति** जागृत हुई, तो उसे अपने जीवन की गत घटनाएँ स्मरण हो आईं कि उसने किस प्रकार दूना-चौगुना ब्याज लेकर और मुनाफा खाकर व्यापार किया। सुकाल में क्रय किया हुआ सस्ता अन्न उसने दुष्काल में तिगुने-चौगुने दामों में बेचा। क्रय-शक्ति के अभाव में अधिकांश भूखे मर गए। इनकी याद आने से उसके हृदय में संसार से घृणा हो गई।

'गीता' के उपदेश को पूर्ण-रूपेण कार्यान्वित **'देवी-माहात्म्य'** ने ही किया। **'गीता'** स्वयं न कर सकी। यद्यपि **'गीता'** ने **'ज्ञान-योग'** तथा **'कर्म-योग'** दोनों को श्रेयस्कर बताया है, परन्तु उदाहरण केवल **'कर्म-योग'** का ही दे पाई अर्थात् अर्जुन को युद्ध-रत किया, परन्तु **'देवी-माहात्म्य'** ने तो दोनों उदाहरण—**'ज्ञान-योग'** का **'समाधि'** तथा **'कर्म-योग'** का **'सुरथ'**— सामने रख दिए हैं।

अब उपरि-कथित अर्थ को समझते हुए **'देवी-माहात्म्य'** का पाठ तथा जगदम्बा का **'नव-रात्रि-महा-पूजन'** यदि किया जाए, तो निस्सन्देह **अभ्युदय** तथा **निःश्रेयस,** जिसकी भी सिद्धि चाहोगे, वह मिलेगी।

जगदम्बा के **'नव-रात्रि'-पूजन** भिन्न-भिन्न ऋतुओं तथा मासों में भी **तन्त्रों** ने बताए हैं, परन्तु उनमें विशिष्ट **शारदीय आश्विन शुक्ल पक्ष** तथा **वासन्ती चैत्र शुक्ल पक्ष** के **'नव-रात्र'** हैं। सर्व-श्रेष्ठ **शारदीय महा-पूजा** ही है क्योंकि स्वयं माता ने उक्त पूजा के निमित्त हमको आज्ञा दी है।

'नव-रात्रि'-विधान बहुत लम्बा-चौड़ा भी है और संक्षिप्त भी। लम्बा-चौड़ा विधान **सकाम 'नव-रात्रि'-पूजन** में ही करना चाहिए। जो पूजन केवल भक्त्यर्थ किया जाता है, उसमें लम्बे-चौड़े कर्म-काण्ड की आवश्यकता नहीं है। जहाँ तक तन्निमित्तक साधना का प्रश्न है, वह अपने **गुरु-परम्परागत क्रम** से करना ही प्रशस्त है। **'नवरात्र की संक्षिप्त पूजा'** का निम्न-लिखित विवरण लेखक के स्वानुभव द्वारा प्राप्त जानकारी से दिया जाता है—

शुक्ला प्रतिपदा को साधक नित्य-कर्म करके स-पत्नीक तैलभ्यङ्ग स्नान करके पञ्च-रङ्गी मृत्तिकाओं से चित्रित कदली-तोरण तथा आम्र-पल्लवों के वन्दन - वारों तथा पुष्प-मालाओं से सज्जित **'पूजा-मण्डप'** बनाए।

उक्त **'पूजा-मण्डप'** का **दिग्-बन्धन** करे। दिग्-विदिक् तथा द्वार-देशों के अधिष्ठातृ देवताओं का पूजन करके पत्नी-सहित **श्रीजगदम्बा के 'नव-रात्र'-पूजन का सङ्कल्प** करे।

फिर **दीप-स्थापन, गणपत्यादि पञ्चाङ्ग-पूजन** करके **मृत्तिका की वेदिका** बनाकर उस पर **'कलश'-स्थापन** करे और **'कलश'** में श्रीजगदम्बा का **श्रीमहाकाली-श्रीमहालक्ष्मी-श्रीमहासरस्वती** के स्वरूपों में आवाहन करे।

त्रि-शक्ति-स्वरूपिणी जगदम्बा की यथा-रुचि **मृत्तिका-मूर्ति** बनाए। यथा-रुचि से तात्पर्य यह है कि जगदम्बा की जिस आकृति पर साधक का विशेष प्रेम हो— वैसे साधारणतया **श्रीमहिष-मर्दिनी** की ही मूर्ति बनाई जाती है।

'वेदिका' पर यवों को विकीर्ण करके मूर्ति स्थापित कर उसमें **प्राण-प्रतिष्ठा** करे। विहित विधान से जगदम्बा का **षोडशोपचार-पूजन** करे। फिर ब्राह्मण का वरण करके उसके द्वारा नित्य एक आवृत्ति **'श्रीदेवी-माहात्म्य'** को भक्ति-पूर्वक सुने। **कुमारी का पूजन नित्य** करे, परन्तु **'कलश'-स्थापन** तथा **'मण्डप'**-करण इत्यादि प्रारम्भिक कर्म केवल **प्रतिपदा** को ही होगा।

रात्रि में जगदम्बा का **गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन** करे, **आरार्तिक** करे और यथा-शक्ति, बन्धु-बान्धव तथा भक्तों के सङ्ग **जगदम्बा का कीर्तन** करे।

दशमी को **होम, ब्राह्मण-भोज** इत्यादि करके सायं - काल कीर्तन के साथ भाई-बान्धवों को साथ लेकर जगदम्बा की प्रतिमा का जल में **विसर्जन** करे। वीर-कल्प-वाले साधक रात्रि में **पञ्च-तत्त्व से पूजन** करते हैं।

विशेष विधान पुस्तकों की भरमार से सभी को सुलभ हो गए हैं, परन्तु सर्वोत्तम विधान वही है, जो गुरु-मुख से प्राप्त होता है। मैं पहिले ही निवेदन कर चुका हूँ कि **'श्रीदेवी-माहात्म्य'** का उपदेश **भोग** तथा **मोक्ष** की प्राप्ति के लिए किया गया है और **'नव-रात्रि'-पूजन** भी इसी निमित्त किया जाता है। अतएव इस पूजन तथा **'देवी-माहात्म्य'** का अर्थ हृदयङ्गम करके **भगवती की आराधना** करनी चाहिए।

'नवरात्र'

'नव-रात्र' दो हैं— (१) **'शयन'** तथा (२) **'बोधन'**। **'चैत्र'**-मासीय **'शयन'** तथा **'आश्विन'**-मासीय **'बोधन'** कहलाता है। जो इन दोनों व्रतों को करता है, वह सर्व-सिद्धियों को प्राप्त करता है। इन व्रतों को यथा-शक्ति निराहारी, फलाहारी, एक-भक्त, हविष्याशी, नक्त-भोजी तथा दृढ़-व्रती रहकर करना चाहिए। यह साधारण नियम है।

शुक्ल पक्ष की **प्रतिपदा** से **अष्टमी** तक यह व्रत कहा गया है। **नवमी** को **पारण** तथा **दशमी** को **विसर्जन** करना चाहिए। **प्रतिपदा** को **'कलश'**-स्थापन करना चाहिए। **अमा-युक्त प्रतिपदा** अग्राह्य है।

नवरात्र-अर्चा की प्राचीनता

❖ 'कुल-शिरोमणि' धन शमशेर जङ्गबहादुर राणा

रम्भ-कल्प, नील-लोहित-कल्प, श्वेत-वाराह कल्प में

महिषासुर का उद्भव और वध

दुर्गा-पूजा की तीन विधियाँ

१ कात्यायनी, २ भद्र-काली और ३ उग्र-चण्डा-कल्प।

'महा-काल-संहिता' में **'महिषासुर-मर्दिनी'** के प्रसङ्ग में लिखा है कि— सत-युग में जब **त्रिपुरासुर दानव** ने सम्पूर्ण ब्रह्मादि देवों को व्यथित किया और दुःखित देव उस दानव का वध अनेक उपाय करने पर भी नहीं कर सके, तो अन्त में निराश होकर उन सबने **देवी का स्मरण** किया। स्मरण करते ही सम्पूर्ण देवताओं को प्रत्यक्ष दर्शन देकर भगवती बोलीं—

"त्रिपुरासुर के वध के लिए **'शारदीय अर्चा'** के अतिरिक्त अन्य साधन नहीं है। मेरी **'शारदीय पूजा'** विधि-वत् करने से उस दैत्य को तुम लोग मार सकोगे। मेरी **'शारदीय-पूजा'** को जो लोग नहीं करते, वे नरक-गामी होते हैं। जो लोग इसे भक्ति-युक्त होकर करते हैं, उनको दारा-सुतादि-वित्त, आरोग्य, उन्नति, विविध भोग से परिपूर्ण कर देती हूँ।"

शारदीय और **वासन्ती नवरात्र-अर्चा** में अल्प-मात्र भी भेद नहीं है, ऐसा सर्व-निगमादि ग्रन्थों में लिखा है। यह **'शारदीय-अर्चा'** की प्रथा कब से प्रारम्भ हुई, इस विषय में लिखा है कि **त्रेता-युग** में जब **राम** और **रावण** का भारी युद्ध हुआ था, उस समय **रावण— 'कालिका' का परम भक्त** होने के कारण **श्रीरामचन्द्र जी** से मारा न गया। तब बहुत चिन्तित होकर, सम्पूर्ण देव-गण को साथ लेकर स्वयं **ब्रह्मा जी** हिमालय पर जाकर, **'कालिका'** की स्तुति करने लगे— "कालिके! आपके उपासक राम और रावण का लङ्का में घोर युद्ध हो रहा है। उन दोनों की अस्त्र-शिक्षा, युद्ध-कुशलता आप जाकर देखिए।"

इस प्रकार अकाल-बोधिता होकर **'कालिका', ब्रह्मा जी** के साथ शुक्ल-प्रतिपदा में उस रण-क्षेत्र में पहुँच गईं। **राम-रावण** निराहार होकर, सात दिन तक 'दिव्यास्त्र'-प्रयोग करते रहे। इतने उपाय करने पर भी काल्युपासक **रावण** को **श्रीरामचन्द्र जी** मार नहीं सके। **रावण** भी श्रीविष्णु - स्वरूप **रामचन्द्रजी** का कुछ कर नहीं सका। अपने भक्त **रावण** के बाहु-बल को देखकर **श्रीकालिका** अति हर्षित हुईं। **रावण** के ऊपर **श्रीकालिका** का विशेष अनुग्रह देखकर सम्पूर्ण देव-गण-संयुक्त **ब्रह्माजी** अति नम्र-भाव से दिव्य-स्तुति करने लगे।

ब्रह्मा जी की स्तुति से सन्तुष्ट होकर **श्रीकालिका** बोलीं—"वत्स! तुम्हारी स्तुति से मैं प्रसन्न हूँ। अपने अनुकूल वर माँगो।"

सम्पूर्ण देव-गण अति हर्षित होकर नम्र भाव से प्रार्थना करने लगे— **"हे कालिके!** आपका परम भक्त होने पर भी दुष्ट **रावण** के ऊपर कृपा न कर, हमारे ऊपर दया करके श्रीविष्णु-स्वरूप **रामचन्द्र** को शक्ति प्रदान कीजिए। हम लोगों की धर्म-रक्षा, यज्ञार्थी मुनियों की निर्विघ्न तपश्चर्या और चातुर्वर्ण धर्म के लिए यह दुष्ट रावण शस्त्र-पूत होकर मर जाए। **हे देवि,** आज **प्रतिपदा** से लेकर **नवमी-**पर्यन्त आपकी तीनों लोकों में भारी पूजा होगी। जब **नवमी** में विश्व-कण्टक **रावण का नाश**

होगा, प्रभूत बलि द्वारा हम आपको प्रसन्न करेंगे। **दशमी** के दिन विविध वाद्यों-सहित नाच-गाना, जल-कर्दम-केलि, अश्लील-वेश-वचन, शस्त्रास्त्र-रचना, रथ-द्विरद-वाहनादि की सजावट, नीराञ्जन, महोत्सवादि से सम्पूर्ण देव-गण और पृथ्वी पर मनुष्य-गण भी आपकी भारी पूजा करेंगे। जैसे इस समय आपका परम भक्त **रावण है**, वैसे ही **श्रीराम** सदैव आपके पाद-भक्त बनेंगे। आपका **'रामोपास्य मन्त्र'** भी पृथ्वी में प्रसिद्ध होगा, जिससे आप प्रसन्न रहेंगी।'

इस प्रकार **ब्रह्माजी** की स्तुति से अति प्रसन्न होकर **श्रीकाली रावण** से विमुख हो गईं। इसके बाद दिव्यास्त्र द्वारा **श्रीरामचन्द्र जी ने रावण** को मारा। तभी से **'शारदीय अर्चा'** की प्रथा चली आई है। इसी कारण **शारदीय** और **वासन्ती अर्चा** सबके लिए परमावश्यक मानी गई है।

इन दोनों पूजा-विधियों में **'वासन्ती पूजा'** एक ही प्रकार से होती है, किन्तु **'शारदीय पूजा'** में तीन प्रकार के मत हैं। **आश्विन-कृष्ण शिवर्क्ष नवमी** में प्रबोधन करके **आश्विन-शुक्ल-नवमी-पर्यन्त** पूजा करने का एक पक्ष है। **आश्विन-शुक्ला प्रतिपदा** में ही प्रबोधन करके, तन्त्र-पौराणिक क्रम से नौ दिन पर्यन्त पूजा करने का दूसरा पक्ष है और **आश्विन-शुक्ला षष्ठी-तिथि** में सायं-काल में बेल की शाखा में देवी का प्रबोधन करके **सप्तम्यादि तीन दिन** तक पूजा करने का तीसरा पक्ष है।

इन तीनों में सिद्धान्त-पक्ष क्या है? कहा है कि **'रम्भ-कल्प'** में **रम्भासुर** के लड़के **'महिषासुर'** का **अष्टादश-भुजी 'उग्र-चण्डी'** द्वारा वध हुआ।

'नील-लोहित-कल्प' में देवताओं को व्यथित करनेवाला, यज्ञादि का विनाशक **महिषासुर** फिर पैदा हो गया। उसको देखकर श्रीमहामाया ने **षोडश-भुजा 'भद्र-काली'**-स्वरूप लेकर **श्वेत-करवाल** से उसे मार डाला।

'श्वेत-वाराह-कल्प' में **जैगिषव्य ऋषि** द्वारा पूर्व-जाति-नाश का स्मरण होकर यह फिर पैदा हो गया। दो बार स्त्री द्वारा अपने वध का स्मरण करते हुए त्रिविध भक्ति से इसने **श्रीकाली की आराधना** की, जिससे प्रसन्न होकर **श्रीकाली** प्रत्यक्ष दर्शन देकर बोलीं कि— "तुम्हारी आराधना से मैं प्रसन्न हूँ। तुम मनोगत वर माँगो।"

इस पर दानव बोल उठा कि—**"कालिके!** वर पीछे माँगूँगा, अभी रहने दीजिए। पहले यह तो बताइए कि दो बार आपने मुझको मारा। अघोर और भीषण आकृति धारण करके मुझे मारा। **हे कालिके!** इस जन्म में कौन-सी आकृति धारण करके मुझको मारोगी?"

दानव का ऐसा वचन सुनकर किञ्चिद् विहस्य **भगवती काली** मधुर वचन बोलने लगीं— "हे दैत्येन्द्र! मेरी भीषण आकृति को देखकर तुम्हें क्या लाभ? लाभ के बदले तुम भय-भीत हो जाओगे। तदपि तुम उस आकृति को देखना चाहते हो, तो देखो।"

इतना कहकर अपनी सुन्दर आकृति को छिपाकर, अग्नि-ज्वाला से कराल-वदन, अष्टादश-भुजा से युक्त, दिव्य-शस्त्रास्त्र से युक्त, मुण्ड-माला से भयङ्कर, विदीर्ण सृक्क-युगल, भयङ्कर दंष्ट्रा से अति भीषण, चञ्चल, विद्युत्-समान रसना, भयङ्कर नाद करनेवाले **उग्र-चण्डा-रूप** को दिखाया, जिसे वह देख नहीं सका। तब अञ्जली-पुट करके **महिषासुर** बोलने लगा कि—**"हे कालिके!** आपकी तीनों लोकों को त्रास करनेवाली ऐसी भयानक आकृति को मैं देख नहीं सकता। इस आकृति को छिपाइए।"

इतना कहने पर भयानक आकृति को छोड़कर **कालिका** ने सुन्दर आकृति को धारण किया। फिर भी **कालिका** के इस द्वितीय **'षोडश-भुजी भद्रकाली'**-स्वरूप को भी देखकर वह पूर्व-वत् भयभीत हो गया। दानव को भय-भीत देखकर **श्रीकाली** ने अपने प्राकृतिक सुन्दर रूप को ग्रहण कर लिया। दानव भी उस सहज सौम्य स्वरूप को देख कर सविनय बोलने लगा— **"हे कालिके!** ऐसी-ऐसी भीषण आकृति धारण करनेवाली आपके साथ मैं किस तरह युद्ध कर सकूँगा? गरुड़ के साथ सर्प का, दावाग्नि के साथ पतङ्ग का, सिंह के साथ मृग का, वायु के साथ वृक्षों का, सर्प के साथ मेढकों का जैसा समर होगा। आपके साथ मेरा युद्ध होना सर्वथा असम्भव है। हो ही नहीं सकता। अस्तु, आज तक जो हुआ, सो हुआ। अब मेरे मनोरथ के अनुकूल आपसे प्राप्त जो **'वर-त्रय'** हैं, उनको कृपया दीजिए।"

भगवती की स्वीकृति पाकर **महिषासुर** ने वर माँगे— **"हे भगवति!** पहला वर तो यह दीजिए कि देवताओं की रक्षा के लिए इस जन्म में सौम्य-आकृति धारण करके मेरा वध कीजिए। दूसरा वर यह दीजिए कि मैं सजीव होकर आपकी मुख-छवि को देखता रहूँ। मेरे शिर पर आपका वाम-पादाम्बुज सदैव रहे। तीसरा वर मैं यह चाहता हूँ कि कोई भी यज्ञ हो, उसका भाग मुझे भी मिले।"

दैत्य-राज के ये वचन सुनकर सस्मित-भाव से देवी बोलीं— **"दैत्येन्द्र!** मेरे यथार्थ वचन को सुनो। **'रम्भ-कल्प'** में हिमालय में तुम्हारे पिता **'रम्भासुर'** ने कठिन तपस्या कर **श्रीशङ्कर जी** को प्रसन्न कर यह वर माँगा कि यदि आप मुझसे सन्तुष्ट हैं, तो आप मेरे पुत्र बन जाएँ। **श्रीशङ्कर** ने भक्त के अधीन होकर अनुकूल वर दे दिया। इसी कारण महिषी के गर्भ से जन्म लेकर तुमने **शिवजी** के समान स्वरूप धारण किया है और तुम साक्षात् **शिव-स्वरूप** हो। तुमने मन्वन्तर-त्रय पर्यन्त तीनों लोकों को अपने अधिकार में रखा है। अब यहाँ बैठने का अधिकार तुम्हें नहीं है। मेरे लोक से अधः-स्थित 'पाताल' में तुम शीघ्र चले जाओ।"

इतना कह कर **श्रीकाली** अन्तर्ध्यान हो गईं। **श्रीकाली** के अन्तर्ध्यान होते ही वह दानव सब बातों को भूलकर पूर्व-वत् दुष्ट-भाव का बन गया अर्थात् यज्ञ, देव, ब्राह्मण आदि पर अत्याचार करने लगा। **श्रीकाली** के प्रति उस दानव का जो भक्ति-भाव था, वह भी भूल गया।

यही विवरण **'पुरश्चर्यार्णव'** में भी दिया है। इसीलिए **दुर्गोत्सव 'नवरात्र'** में **'दुर्गा-पूजा'** की तीन प्रकार की विधियाँ हैं— **१ कात्यायनी-कल्प, २ भद्र-काली-कल्प और ३ उग्र-चण्डा-कल्प।**

कात्यायनी (दश-भुजी दुर्गा) का ध्यान निम्न-लिखित प्रकार है—

कात्यायन्याः प्रवक्ष्यामि, मूर्तिं दश-भुजां तथा।
त्रयाणामपि देवानामनुकारण - कारिणीम्।।
जटा - जूट - समायुक्तामर्धेन्दु-कृत-शेखराम्।
लोचन - त्रय-संयुक्तां, पद्मेन्दु-सदृशाननाम्।।
अतसी-पुष्प-वर्णाभां, सु-प्रतिष्ठां प्रलोचनाम्।
नव - यौवन - सम्पन्नां, सर्वाभरण-भूषिताम्।।
सुचारु-दशनां तद्-वत्, पीनोन्नत-पयोधराम्।
त्रिभङ्ग-स्थान-संस्थानां, महिषासुर-मर्दिनीम्।।
त्रिशूलं दक्षिणे दद्यात्, खड्गं चक्रं क्रमादधः।
तीक्ष्ण-वाणं तथा शक्तिं, वामतोऽपि निबोधत।।
खेटकं पूर्ण - चापं च, पाशमंकुशमूर्ध्वतः।
घण्टां वा परशुं वाऽपि, वामतः सन्निवेशयेत्।।
अधस्तान्महिषं तद्-वत्, विशिरस्कं प्रदर्शयेत्।
शिरश्छेदोद्भवं तद्-वत्, दानवं खड्ग-पाणिनं।।

हृदि शूलेन निर्भिन्नं, निर्यदन्त्र-विभूषितम्।
रक्त-रक्ती-कृताङ्गश्च, रक्त - विस्फारितेक्षणम्।।
वेष्टितं नाग-पाशेन, भ्रुकुटी-भीषणाननम्।
स - पाश - हस्तेन धृत - केशं च दुर्गया।।

दश-भुजा कात्यायनी देवी तीनों देवों अर्थात् **ब्रह्मा, विष्णु** और **शिव** की जननी हैं। जटा-जूट से युक्ता, अर्ध-चन्द्र से विभूषिता, त्रि-नेत्रा, पद्म और **चन्द्र** के सदृश प्रसन्न मुखवाली, अतसी के फूल अथवा मरकत-समान वर्णवाली, प्रसन्न भाव से अवस्थिता, सुन्दर नेत्रवाली, नव-युवती, सभी आवरणों से भूषिता, सुन्दर तोंदवाली, बड़े स्तनवाली, त्रिभङ्ग-स्थान में रहनेवाली, महिषासुर की मर्दन करनेवाली, दाहिने हाथों में ऊपर त्रिशूल, फिर क्रमशः खड्ग, चक्र, शर और शक्ति हैं। बाँएँ हाथों में खेटक, धनुष, पाश, अंकुश और घण्टा अथवा परशु (फरसा) हैं। नीचे में छिन्न-शिर महिष है। कटे हुए धड़ से निकला, खड्ग हाथ में लिए असुर देवी के त्रिशूल से हृदय में विद्ध है। असुर की अँतड़ी निकली है, जिस कारण लहू के निकलने से असुर का पूर्ण शरीर लहू-लुहान है। उसकी लाल आँखें विस्फारित हैं। वह देवी द्वारा नाग-पाश में बद्ध है। उसकी भ्रुकुटी ऐसी हैं कि मुख-मण्डल भीषण दीखता है। देवी ने पाश-युक्त, वाम-हस्त से उसके केशों को पकड़ रखा है।

भद्र-काली (षोडश-मुखी दुर्गा) का ध्यान निम्न प्रकार है—

योग-निद्रा महा-माया, जगद्धात्री जगन्मयी।
भुजैः षोडशभिर्युक्ता, भद्र-कालीति विश्रुता।।
क्षीरोदस्योत्तरे तीरे, बिभ्रती विपुलां तनुम्।
अतसी-पुष्प-वर्णाभा, ज्वलत्-काञ्चन-कुण्डला।।
जटा - जूटमखण्डेन्दु - मुकुट - त्रय - भूषिता।
नाग-हारेण सहिता, स्वर्ण-हार-विभूषिता।।
शूलं खड्गं च शङ्खं च, चक्रं वाणं तथैव च।
शक्ति-वज्रौ च दण्डं च, नित्यं दक्षिण-बाहुभिः।।
बिभ्रती सततं देवी, विकाशि-नयनोज्वला।
खेटकं चर्म-चापं च, पाशं चांकुशमेव च।।
घण्टां च परशुं चैव, मुशलं वाम-पाणिभिः।
सिंहस्था नयनैः रक्त - वर्णैस्त्रिभिरभिज्वला।।
शूलेन महिषं भित्वा, तिष्ठन्ती परमेश्वरी।
वाम-पादेन चाक्रम्य, तत्र देवी जगन्मयी।।

महा-माया जगद्धात्री भगवती भद्र-काली अतसी के फूल के समान रक्त वर्णवाली, काञ्चन-कुण्डल-धारिणी, चन्द्रमा से युक्त जटा-जूट तथा मुकुट से सुशोभिता, नाग-हार तथा स्वर्ण-हार से अलंकृता, दाहिने हाथों में १ त्रिशूल, २ खड्ग, ३ शङ्ख, ४ चक्र, ५ वाण, ६ शक्ति, ७ वज्र, ८ दण्ड और बाँएँ हाथों में १ खेटक, २ चर्म (ढाल), ३ चाप, ४ पाश, ५ अंकुश, ६ घण्टा, ७ फरसा, ८ मूसल— सोलह शस्त्र-धारिणी, त्रिशूल से महिषासुर को भेद कर बाँएँ पैर से उसे आक्रान्त कर आसीना हैं।

उग्र-चण्डा (अष्टादश-भुजी दुर्गा) का ध्यान निम्न प्रकार है—

उग्र-चण्डां महा-देवीं, ध्याये भगवतीं शिवां।
तप्त-चामीकरां नाना-पुष्पोपहार-शोभिताम्।।
दिव्य-वस्त्र-परीधानां, महिषासन-गामिनीं।
किरीट-कुण्डलाकारैः, केयूरैर्मणि-नूपुरैः।।
रत्न-माल्य-विचित्रैश्च, हार-मालोप-शोभितां।
सर्वालङ्कार-संयुक्तां, तडित्-कोटि-सम-प्रभाम्।
खड्गं शरस्तथा चक्रं, वज्रांकुश-धरां शुभां।।
वरदां डमरु-हस्तां, शूल-पात्र-सुशोभिताम्।
पाशं तर्जनि-हस्तां च, खट्वाङ्गं केश-पाशकं।।
बिन्दु-मुद्रां तथा सिद्धि-सिंहासनोपरि-स्थिताम्।
अधः स्थित्वा शिरश्छिन्नं, महिषं च महा-बलं।।

तद् ग्रीवा-निर्गत-दैत्य-महा-बल-पराक्रमम्।
भेदयन्तीं त्रिशूलेन, विधृतास्यां शिरोरुहाम्॥

भगवती शिवा महा-देवी उग्र-चण्डा का मैं ध्यान करता हूँ। वे तपाए हुए स्वर्ण-जैसी कान्ति-वाली, विविध पुष्पों से सुशोभिता, दिव्य-वस्त्र-धारिणी, मुकुट, कुण्डलाकार केयूरों, मणि-जटित नूपुरों, विचित्र रत्न-मालाओं, हार-मालाओं एवं सभी प्रकार के अलङ्कारों से विभूषिता, करोड़ों बिजलियों जैसी तेजस्विनी हैं। हाथों में खड्ग, वाण, चक्र, वज्र, अंकुश, डमरु, त्रिशूल, पाश, खट्वाङ्ग, वर, पान-पात्र, तर्जनी, बिन्दु-मुद्रा आदि धारण किए हैं। सिद्धि-सिंहासन पर विराजमाना हैं। महा-पराक्रमी महिषासुर छिन्न-शिर होकर नीचे स्थित है और उसके गले से निकले हुए महा-बली पराक्रमी दैत्य के शिर के केशों को पकड़कर त्रिशूल द्वारा वे उसका भेदन कर रही हैं।

अपनी-अपनी गुरु-परम्परा के मत से **दुर्गोत्सव** की **'नव-रात्र'**- विधि पूर्वोक्त तीन प्रकार की होती है। प्रायः बहुत से लोगों में **'कात्यायनी-कल्प'** की ही दुर्गा-पूजा प्रचलित है क्योंकि यह सौम्य मूर्ति होने से इनकी पूजा आर्द्र और शुष्क पश्वाचार से भी हो सकती है। इनका प्रबोधन **आश्विन शुक्ला षष्ठी** में होता है। **'कालिका-पुराण'** में इस विषय में लिखा है कि—

बोधयेद् विल्व-शाखासु, षष्ठ्यां देवीं फलेषु च।
सप्तम्यां विल्व - शाखान्तामाहृत्य प्रति-पूजयेत्॥
पुनः पूजां तथाऽष्टम्यां, विशेषेण समाचरेत्।
जागरं च स्वयं कुर्याद्, बलि-दानं महा-निशि॥
प्रभूत-बलि-दानं च, नवम्यां विधि-वच्चरेत्।
जप-होम-समायुक्तो, भोजयेद् वै कुमारिकाः॥
ध्यायेद् दश-भुजां देवीं, दुर्गा-तन्त्रेण पूजयेत्।
विसर्जनं दशम्यां तु, कुर्याद् वै शाबरोत्सवैः॥

'भद्र-काली कल्प' में आश्विन कृष्ण-पक्ष की चतुर्दशी में प्रबोधन होता है। इस विषय में **'लिङ्ग-पुराण'** में लिखा है—

यदा तु षोडश-भुजां, महा-मायां प्रपूजयेत्।
दुर्गा-तन्त्रेण मन्त्रेण, विशेषं तत्र वै शृणु॥
कन्यायां कृष्ण-पक्षे तु, एकादश्यामुपोषितः।
द्वादश्यामेक-भक्तं च, नक्तं कुर्यात् परेऽहनि॥
चतुर्दश्यां महा-मायां, बोधयित्वा विधानतः।
गीत - वादित्र - निर्घोषैर्नाना-नैवेद्य-वन्दनैः॥
अयाचितं बुधः कुर्यादुपवासं परेऽहनि।
एवमेव व्रतं कुर्याद्, यावद् वै नवमी भवेत्॥

भद्र-काली की पूजा वीराचार और कुलाचार से ही करनी चाहिए। इनकी पूजा में **प्रतिपदा** से **नवमी** तक पृथक्-पृथक् **'नव-दुर्गा-रूप'** से पूजा करके **भद्र-काली** में समष्टि करते हैं। **'पुरश्चर्यार्णव'** में भी **'नव-दुर्गा'** की इस पूजा के विषय में लिखा है कि—

नव-शक्ति-समायुक्तं, 'नव-रात्र' तदुच्यते।
एकैव देव-देवेशि! नवधा परि-निष्ठिता॥
शयनं बोधनाख्यं च, 'नव-रात्रं' द्विधा भवेत्।
शयनं चैत्र - मासीयमाश्विनस्थं च बोधनम्॥

'नवरात्र'-अर्चा की विधियाँ

शारदीय और **बासन्ती नवरात्र-अर्चा** में अल्प-मात्र भी भेद नहीं है, ऐसा सर्व-निगमादि ग्रन्थों में लिखा है। अपनी-अपनी गुरु-परम्परा के मत से **दुर्गोत्सव** की **'नव-रात्र'**- विधि तीन प्रकार की होती है। प्रायः लोगों में **'कात्यायनी-कल्प'** की ही दुर्गा-पूजा प्रचलित है क्योंकि यह सौम्य मूर्ति है।

नवरात्र-महोत्सव की भावना

❖ 'कुल-ज्योति' स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

'नवरात्र'-महोत्सव भारत के विविध प्रान्तों में विविध प्रकार से मनाया जाता है, परन्तु सबका मुख्य उद्देश्य एक यही है कि **महा-माया** को प्रसन्न कर उससे मुक्ति प्राप्त करना।

यह **महोत्सव** वर्ष में दो बार आता है— **आश्विन** और **चैत्र** में। यह **शुक्ल-पक्ष** की **प्रतिपदा** को आरम्भ होता है और उसी पक्ष की **नवमी** को समाप्त होता है।

प्राचीन काल में **श्रीभगवती दुर्गा देवी** ने **महिषासुर** नाम के असुर को मार कर विजय प्राप्त की थी। अतः उसी के उपलक्ष्य में यह उत्सव मनाया जाता है। **श्रीललिता देवी** का **दैत्य भण्डासुर** और उसकी सेना के साथ नौ दिन और रात्रियों तक युद्ध हुआ। दसवें दिन सायं-काल युद्ध की समाप्ति हुई और **देवी** ने **असुरों पर विजय** प्राप्त की। अतः इसी के स्मरणार्थ **विजय-दशमी** का उत्सव दसवें दिन मनाया जाता है। यह दिन बड़ा शुभ माना जाता है। **विद्याभ्यास** आदि शुभ कार्य इस दिन आरम्भ किए जाते हैं। कुरु-क्षेत्र में कौरवों के सङ्ग युद्ध करने के पहले **अर्जुन** ने इसी **विजय-दशमी** के दिन **श्री देवी का पूजन-अर्चन** कर उनसे **विजय-प्राप्ति** का वर प्राप्त किया था।

दुर्गा के नौ अवतारों के उपलक्ष्य में भी यह महोत्सव नौ दिनों तक मनाया जाता है। इन्हीं दिनों में **भगवान् श्रीरामचन्द्र** ने भी **श्रीदुर्गा देवी का पूजन** किया था तथा उसी के प्रताप से उन्होंने **रावण का वध** कर विजय प्राप्त की थी।

यह हिन्दुओं का एक **महान् पर्व** है। इन दिनों में **देवी का पूजन, अर्चन, अनुष्ठानादि** विशेष रूप से करना चाहिए।

परम्परा से प्राप्त हमारे धार्मिक कृत्य, पूजन, व्रतादि के अनेक अभिप्राय हैं। साधारण **पूजा-भक्ति** के अतिरिक्त इनमें **आध्यात्मिक गुप्त रहस्य** भी भरे रहते हैं।

बाहरी रूप में तो यह **'नवरात्र'**-पूजन एक प्रकार का विजयोत्सव है, जो **दुर्गा देवी** के राक्षसों को मार कर उन पर विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में मनाया जाता है, परन्तु आध्यात्मिक साधन-मार्ग में साधक के लिए प्रत्येक तीन-तीन दिनों में क्रमशः **महा-काली, महा-लक्ष्मी** और **महा-सरस्वती का पूजन** करना अपना एक विशिष्ट महत्त्व रखता है। इसी में मनुष्य के लिए क्रमोन्नति कर **जीवत्व से शिवत्व** प्राप्त करने का सङ्केत है।

मनुष्य के जीवन का उद्देश्य है अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान कर **शिवत्व** प्राप्त करना। इसके लिए सर्व-प्रथम साधक को अपने दुर्गुणों, अपवित्रताओं तथा अमानुषिक भावों को दूर करना पड़ेगा। तत्पश्चात् उसको अपने भीतर सद्-गुणों व शुद्ध सात्त्विक विचारों को भरना पड़ेगा। इस प्रकार तमो-गुण के दूर होने तथा सतो-गुण की वृद्धि होने से ही मनुष्य के शुद्ध हृदय में ज्ञान का विकास होना सम्भव है। इस प्रकार की साधना में दृढ़ इच्छा-शक्ति और पूर्ण प्रयास की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में यों कहिए कि इसके लिए अनन्त शक्ति की आवश्यकता है। यह वही **मातृ-शक्ति** है! यह वही **ब्रह्म-शक्ति** है! यह वही **दुर्गा देवी** है! उसी मातृ-शक्ति की आराधना कर **परम-तत्त्व** की प्राप्ति करनी है।

अब विचार करना है कि किस प्रकार **'नव-रात्र'** के पहले तीन दिनों में मातृ-शक्ति की आराधना **दुर्गा** या **महा-भयङ्कर काली**-रूप में की जाती है। हम **दुर्गा देवी** से अपनी मलिनता, दुर्गुणों और दोषों को नष्ट करने की प्रार्थना करते हैं। वह **दुर्गा देवी** हमारे भीतर असुर-रूप जो आसुरी वृत्तियाँ हैं, उनसे संग्राम कर उनको समूल नष्ट करती है। वही हमें भयङ्कर आपत्तियों व अन्ध-कूपों से बचाती है। इस प्रकार पहले तीन दिनों का **महा-काली** का जो पूजन-विधान है, वह हमारे कुसंस्कारों, हमारी दुर्वासनाओं तथा आसुरी वृत्तियों के साथ संग्राम कर उन्हें नष्ट कर डालने की जो प्रथम स्थिति है, उसी का द्योतक है।

अब जब एक बार हमारी आसुरी वृत्तियों की इस प्रकार इतिश्री हो चुकी, तो हमें उसके स्थान में दैविक सम्पत् को भरना पड़ेगा अर्थात् **भगवान् श्रीकृष्ण** ने **'गीता'** के १६वें अध्याय में जो वर्णन किया है, उन सात्त्विक गुणों को प्राप्त करना पड़ेगा। यदि इन सद्-गुणों की वृद्धि यथार्थ रूप से न हुई, तो सम्भव है कि हमारी पुरानी आसुरी वृत्तियाँ फिर से हम पर आक्रमण करने में समर्थ हो जाएँ। अतः सावधानी-पूर्वक सद्-गुणों की वृद्धि करनी चाहिए। **'नव-रात्रि'** के अन्य तीन दिनों में जो **श्रीमहा-लक्ष्मी जी** का पूजन किया जाता है, वह इसी साधना-स्थिति का द्योतक है। वह महा-शक्ति अपने भक्तों को **दैवी सम्पत्-रूप अटूट द्रव्य** प्रदान करती है। वह **सम्पत्-दायिनी शक्ति** है। वह **तुष्टि** है। वह **पुष्टि** है।

अब जब साधक में आसुरी वृत्तियों का ह्रास होकर सात्त्विक गुणों की वृद्धि होती है, तो वह अधिकारी बन जाता है। वह **ब्रह्म-ज्ञान** प्राप्त करने के योग्य बन जाता है। इसी स्थिति से **ब्रह्म-ज्ञान-स्वरूपिणी महा-सरस्वती** का पूजन होता है। उनकी दिव्य वीणा मधुर ध्वनि करती है। मातृ-श्री का देदीप्यमान् श्वेत वस्त्रालङ्कार **आत्म-ज्ञान** का द्योतक है। अतः **'नव-रात्रि'** के अन्तिम तीन दिनों में **महा-सरस्वती** का पूजन **'नाद-ब्रह्म'** और **'आत्म-ज्ञान'** हेतु प्रशस्त है।

भगवती सरस्वती की कृपा से विशुद्ध ज्ञान के द्वारा जीव अपने **जीव-भाव** को त्याग कर **जीवन-मुक्ति** प्राप्त करता है। वह **'सत्-चित्-आनन्द'-स्वरूप** हो जाता है। यही अन्तिम लक्ष्य है। यही **जीव की विजय** है। यही **'नव-रात्रि'** के अन्तिम दसवें दिन की **विजय-दशमी** के महोत्सव का रहस्य है।

आध्यात्मिक मार्ग से उपर्युक्त तीनों स्थितियों को क्रमशः पार करने पर ही सफलता प्राप्त हो सकती है, अन्यथा नहीं।

अनेक अज्ञ साधक बिना दुर्गुणों को हटाए तथा बिना सद्-गुणों को प्राप्त किए ही एकाएक **ब्रह्म-ज्ञान** की प्राप्ति के लिए छलाँग मारते हैं, तथा साथ ही असन्तोष प्रकट करते हैं कि उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई। भला, सफलता प्राप्त हो, तो कैसे हो? जब तक **मन** से दुर्वासनाएँ दूर होकर **हृदय** पवित्र नहीं हो जाएगा, **'ब्रह्म-ज्ञान'** का विकाश होना असम्भव है। ऊसर भूमि में कभी भी अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता, चाहे उस पर कितना ही पानी क्यों न पड़े।

यदि हम उपर्युक्त प्रक्रिया के अनुसार **साधना** करें, तो हमें अवश्य सफलता प्राप्त हो सकती है। यही **एक-मात्र मार्ग** है।

* * *

नवरात्र-व्रत तथा कुमारी-पूजन

❖ पण्डित रघुवीर मिश्र शास्त्री

एतस्मादपरं किञ्चिद्, व्रतं नास्ति धरातले।
नवरात्राभिधं वैश्य! पावनं सुखदं तथा॥
आनन्दं मोक्षदं चैव, सुख-सन्तान-वर्धनम्।
शत्रु-नाश-करं कामं, नव-रात्र - व्रतं सदा॥

माँ की उपासना के लिए समय, ऋतु, पर्व और दिनों की पाबन्दी क्या? हर साँस में उसका नामोच्चार, हर समय उसकी ही चिन्तना हो, तभी मानव जीवन की सार्थकता तथा मानव होने की सफलता है, किन्तु ऐसा जन्म-जन्मान्तर के संस्कार तथा अम्बा-जगदम्बा की अनुकम्पा के बिना होना सम्भव कहाँ? जो साधक प्रति-श्वास के साथ माँ का स्मरण करते रहते हैं, वे धन्य हैं और ऐसे ही लोगों के रहने से यह धरा-धाम धन्य है।

निर्बल चित्तवालों के लिए ही **देव-देव महादेव** ने साधना के अनेक मार्गों का निरूपण किया है, जिससे मोह-ग्रस्त मानव माँ का अनुरागी बन माँ के चरणों पर अपने को न्योछावर कर दे। साधना के दो रूप हैं—१ **नित्य** तथा २ **नैमित्तिक।** प्रतिदिन चलनेवाली साधना **'नैत्यिक'** है तथा पर्व-पर्व पर की जानेवाली स-विशेष साधना **'नैमित्तिक'**। अतः ऐसी **नैमित्तिक साधनाओं** के अवसर शास्त्रों के द्वारा निर्धारित कर दिए गए हैं और इन्हें **'पर्व'** कहते हैं। **'नव-रात्र'** ऐसा ही एक पर्व है।

'नव-रात्र' शाक्तों का महा-पर्व है। इससे बढ़कर उनके लिए दूसरा पर्व नहीं। इस पर्व की व्यापकता इतनी है कि सर्व-सम्प्रदायों में इसकी प्रतिष्ठा है और इसका अनुष्ठान हिन्दू-मात्र के द्वारा सम्पन्न होता है। भारत का ऐसा कोई प्रान्त और नगर नहीं है, जहाँ **'नव-रात्र'** में **महिष-मर्दिनी माँ दुर्गा** की प्रतिमा बनाकर श्रद्धा-पूर्वक अर्चना न होती हो। इस पर्व का सम्बन्ध हमारे सांस्कृतिक उपाख्यानों के साथ है। आश्विन शुक्लाष्टमी को ही दक्ष-यज्ञ-विध्वंसिनी **माँ भद्र-काली** का अवतार और उनकी ध्वंसिनी लीला हुई थी। सीतान्वेषण के पूर्व **देवर्षि नारद** के उपदेश के द्वारा इस व्रत का अनुष्ठान **भगवान् राम** के द्वारा हुआ था और बाद में **रावण** के निधन पर **'विजया-दशमी'** का विजयोत्सव मनाया गया था। **चैत्र के नवरात्र** के समय ही **राजा सुरथ** को माँ का साक्षात्कार हुआ था और वर-दान की प्राप्ति हुई थी। अतः इन दोनों **'नव-रात्रों'** का बहुत प्रचार है तथा इसके समान कोई दूसरा **'व्रत'** नहीं है।

एतस्मादपरं किञ्चिद्, व्रतं नास्ति धरातले।
नव-रात्राभिधं वैश्य! पावनं सुखदं तथा॥
राज्य-भ्रष्टेन रामेण, सीता-विरहितेन च।
किष्किन्धायां व्रतं चैतत्, कृतं दुःखातुरेण वै॥

इस व्रत का आरम्भ **आश्विन शुक्ल प्रतिपदा** तथा **चैत्र शुक्ला प्रतिपदा** से और **नवमी** के कृत्यों के साथ इसकी समाप्ति होती है। **दशमी** को विसर्जन किया जाता है। इस व्रत के **उपवास, जप, होम, पाठ, बलि-दान** तथा **कुमारी-पूजन** अङ्ग हैं। इस अनुष्ठान को पूर्ण बनाने के लिए इन सभी अङ्गों का अनुष्ठान अनिवार्य है, किन्तु सभी अङ्गों को पूर्ण करने की शक्ति न हो, तो यथा-साध्य कार्यों को करना चाहिए।

'उपवास' का विधान कई प्रकार का है। **प्रतिपदा से नवमी** पर्यन्त **निर्जल व्रत** रखे। ऐसा

करने में यदि असमर्थ हो, तो रात्रि-आरती के बाद एक छटाँक गो-घृत प्राशन करे। ऐसा करने में भी यदि असमर्थ हो, तो रात्रि में फलाहार करे। नव दिनों तक फलाहार के ऊपर भी न रहा जाए, तो **सप्तमी से नवमी** तक अहो-रात्र उपवास रखे और **दशमी को पारण** करे।

'जप' में अपने **इष्ट-मन्त्र** तथा **नवार्ण-मन्त्र** का पुरश्चरण करे। कम-से-कम एक लक्ष का अनुष्ठान अवश्य करे और इसका दशांश **तर्पण, मार्जन** तथा **हवन** करे। अम्बा-प्रीत्यर्थ **'सप्तशती'** का विधान-पुरस्सर पाठ करे। **'देवी-भागवत'** का नवाह पाठ करने की बड़ी महिमा है। **नवाह-पाठ-यज्ञ** अश्वमेध यज्ञानुष्ठान से कम फल-श्रुति नहीं रखता। द्वापर में सर्व-प्रथम **वसुदेव जी** तथा **भगवान् श्रीकृष्ण** के द्वारा यह **नवाह-यज्ञ** सम्पन्न हुआ था। **'देवी भागवत'** में इसके **नवाह-पुरश्चरण** की महिमा बहुत बड़ी बताई गई है। **'स्कन्द-महा-पुराण' (मानस-खण्ड)** में इस विषय में **व्यास जी** कहते हैं—

पुराणानां तु सर्वेषां, श्रवणात् यत्-फलं लभेत्।
तस्माच्छत - गुणं पुण्यं, देवी-भागवताल्लभेत्।।
यथा सरित्सु प्रवरा, गङ्गा देवेषु शङ्करः।
काव्ये रामायणं यद्-वज्योतिष्मत्सु यथा रविः।।
आह्लादकानां चन्द्रश्च, धनानां च यथा यशः।
क्षमावतां यथा भूमिर्गाम्भीर्ये सागरो यथा।।
मन्त्राणां चैव सावित्री, पाप-नाशे हरि-स्मृतिः।
अष्टादश - पुराणानां, देवी - भागवतं तथा।।
येन केनाप्युपायेन, नव-कृत्वः शृणोति चेत्।
न शक्यं वक्तुं जीवन - मुक्तः सदा स एव हि।।

प्रतिदिन **अष्टमी** की मध्य-रात्रि में तथा **नवमी** तिथि को प्रभूत पशु-बलि करना चाहिए। वेदादि से प्रतिपादित यह हिंसा अहिंसा ही है। बलि किए गए पशुओं का **पशु-पाश-विमोचन** होता है। अतः इस कर्म में तमो-गुण की भावना नहीं रखनी चाहिए। **'गायत्री तन्त्र', 'मुण्ड-माला तन्त्र'** और अन्य तन्त्रों ने **बलि-दान** की प्रभूत महिमा बताई है। अतः जगदम्बा-प्रीत्यर्थ अवश्य ही इस अवसर पर पशु-बलि करे— बलि-दान प्रति-दिन तथा **महाऽष्टमी** की मध्य-रात्रि में एवं **नवमी** तिथि को करना चाहिए— **'महिषाजा-वराहानां, बलि-दानं विशिष्यते।'** इन पशुओं की बलि होनी चाहिए।

'कुमारी-पूजन' तो इस व्रत का प्राण है। इसके बिना सभी **जप-तप** व्यर्थ हैं। इस युग में जो कोई माँ की कृपा की अनुभूति प्राप्त करना चाहें, वे इसका अनुष्ठान करके अनुभव प्राप्त कर लें। अतः इस विषय पर कुछ विशेष लिखना अनुचित नहीं होगा।

'कुमारिकाएँ'— माँ के प्रत्यक्ष विग्रह हैं, अतः माँ की बुद्धि से इनका पूजन **चतुर्वर्ग-दायक** है। **'काम्य-कर्म'** भी इस पूजन के द्वारा सम्पन्न होता है। कोई भी ऐहिक फल इस अनुष्ठान के द्वारा प्राप्त हो सकता है, यदि प्रेम-पुरस्सर और विधि-पूर्वक इसका अनुष्ठान किया जाय।

तन्त्रों में भी **'कुमारी-पूजन'** का महत्त्व बताया गया है। **प्रतिपदा** से **नवमी** तक विभिन्न अवस्था की कुमारियों को **दुर्गा**-स्वरूप मानकर वृद्धि-क्रम-संख्या से भोजन कराए। वस्त्रालङ्कार, गन्ध-पुष्प से उनकी पूजा करके उन्हें भोजन कराया जाए। दो वर्ष की अवस्था से दश वर्ष तक अवस्थावाली 'कुमारिकाएँ' स्मार्त-रीति से पूजन योग्य मानी गई हैं। साधक अपने गन्तव्य मार्ग और साधना के अनुरूप किसी एक नियम का पालन करें।

दो वर्ष की आयुवाली **'कुमारी'**, तीन वर्ष की **'त्रि-मूर्ति'**, चार वर्ष की **'कल्याणी'**, पाँच वर्ष की आयुवाली **'रोहिणी'**, छः वर्ष की आयुवाली **'कालिका'**, सात वर्ष की आयुवाली **'चण्डिका'**, आठ वर्ष की **'शाम्भवी'**, नव वर्ष

की **'दुर्गा'** तथा दश-वर्ष की आयुवाली **'सुभद्रा'** संज्ञा से अभिहित हैं। 'स्मार्त-क्रम' में इससे अधिक अवस्था की **'कुमारी'** पूजा करने योग्य नहीं मानी जाती है— **'अत ऊर्ध्वं न कर्तव्या, सर्व-कार्य-विगर्हिता।'** 'निष्काम'-भाव से माँ की अर्चना करनेवालों को इन सभी कुमारियों का पूजन करना श्रेयस्कर है। **'काम्य-कर्म'** में अपनी कामना के अनुरूप जिस वय की **'कुमारी'** पूजने योग्य हों, उनकी पूजा करे और भोजन कराकर उन्हें तृप्त करे।

'तान्त्रिक-विधि' से इनकी पूजा अधिक उग्र होती है, किन्तु उसका विधान भी जटिल है। **'स्मार्त'**-रूप से पूजन करना सुलभ है। यहाँ **'स्मार्त-रीति'** से पूजन करने की विधि का उल्लेख किया जाता है और विभिन्न 'कुमारियों' के **'पूजन-मन्त्र'** भी दिए जाते हैं।

अपनी कामना के अनुसार तद्-योग्य आयुवाली 'कुमारियों' को निमन्त्रण देकर, उन्हें **पवित्र स्थान** पर **पवित्र आसन** पर चरण धुलाकर बिठाए। इसके बाद अपनी कामना का उल्लेख कर **'सङ्कल्प'**-वाक्य पढ़े। तब वस्त्रालङ्कार, पुष्प-माला, सुगन्धित तेल, चन्दन, सिन्दूर, काजल, पुष्प, सुगन्ध (इत्र) को 'कुमारी' को **'देवी-रूप'** मानता हुआ, अपनी **'कामना की सिद्धि के लिए'** कहकर अर्पण करे। इन सभी वस्तुओं के ग्रहण कराने के बाद, उन सभी वस्तुओं को उनसे धारण कराया जाए। इसके बाद पुष्पाक्षत, चन्दन और जल को उनके चरणों पर निम्नाङ्कित मन्त्रों में से **'कुमारी'** के रूप के अनुरूपवाला **'मन्त्र'** पढ़कर, **पूजन** करे और **प्रणाम** करे। इसके बाद भोजन पूर्ण श्रद्धा और पवित्रता से परोसे। भोजन करा चुकने के बाद मुँह-हाथ धुलाकर ताम्बूल, इलायची, पूंगी-फल आदि **दक्षिणा** के साथ अर्पण करे और प्रणाम कर **विसर्जन** करे।

'वीर'-साधक **'चक्रार्चन'** के बाद **'कुमारी'**-भोजन प्रथमा, द्वितीया, तृतीया तथा मुद्रा द्वारा कराए। **'स्मार्त-कल्प'** में **'पायस'**-भोजन का विशेष फल है। **'कुमारी-पूजन'** के **'स्मार्त-मन्त्र'** नीचे दिए जाते हैं—

कुमारी

ॐ कुमारस्य च तत्त्वानि, या सृजत्यपि लीलया।
कादीनपि च देवांस्तां, कुमारीं पूजयाम्यहम् नमः॥१

त्रिमूर्ति

ॐ सत्त्वादिभिस्त्रिमूर्तिर्या, तैर्हि नाना-स्वरूपिणी।
त्रिकाल-व्यापिनी शक्तिस्त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् नमः॥२

कल्याणी

ॐ कल्याण-कारिणी नित्यं, भक्तानां पूजिताऽनिशम्।
पूजयामि च तां भक्त्या, कल्याणीं पूजयाम्यहं नमः॥३

रोहिणी

ॐ रोहयन्ती च बीजानि, प्राग्-जन्म-सञ्चितानि वै।
या देवी सर्व-भूतानां, रोहिणीं पूजयाम्यहम् नमः॥४

काली

ॐ काली कालयते सर्वं, ब्रह्माण्डं स-चराचरम्।
कल्पान्त-समये या तां, कालिकां पूजयाम्यहं नमः॥५

चण्डिका

ॐ चण्डिकां चण्ड-रूपां तां, चण्ड-मुण्ड-विनाशिनीम्।
तां चण्ड-पाप-हारिणीं, चण्डिकां पूजयाम्यहं नमः॥६

शाम्भवी

ॐ अकारणात् समुत्पत्तिर्यन्मयैः परिकीर्तिता।
यस्यास्तां सुखदां देवीं, शाम्भवीं पूजयाम्यहं नमः॥७

दुर्गा

ॐ दुर्गात् त्रायति भक्तं या, सदा दुर्गति-नाशिनी।
दुर्ज्ञेया सर्व-देवानां, तां दुर्गां पूजयाम्यहम् नमः॥८

सुभद्रा

ॐ सुभद्राणि च भक्तानां, कुरुते पूजिता सदा।
अभद्र-नाशिनीं देवीं, सुभद्रां पूजयाम्यहम् नमः॥९

नव-चण्डी-विधान

❖ 'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

आश्विन और चैत्र के शुक्ल-पक्षों में हिन्दू लोग **जगज्जननी भगवती की पूजा** धूमधाम से करते हैं। यह पूजा नौ दिनों तक दिन-रात बराबर होती रहती है। रात्रि में विशेष पूजन होने के कारण इस पूजा का नाम **'नव-रात्र'** पड़ गया है। यह पूजा भक्त लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार सामान्य अथवा विस्तृत रूप से करते हैं, परन्तु करते सभी हैं। इसकी एक विशेष विधि **'मन्त्र-महार्णव'** में दी गई है। उसी को हम यहाँ ज्यों-का-त्यों हिन्दी में लिखते हैं—

शुक्ला प्रतिपदा के पूर्वाह्न में, तिल-तैल से स्नानादि कर नित्य-क्रिया-समापन-पूर्वक साधक सुसंस्कृत शुभ स्थान में, तोरणादि से अलंकृत और कदली के स्तम्भों से शोभायमान तथा सुगन्धित धूपादि एवं उज्ज्वल दीपकों से प्रकाशित अपने आसन पर, पूर्व-मुख होकर बैठे।

तदनन्तर **आचमन** और **प्राणायाम** कर देश-काल-सङ्कीर्तन-पूर्वक यह **'सङ्कल्प'** करे—

श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-प्रीत्यर्थं सकल-मनोरथ-फलावाप्त्यर्थं चतुर्विध-पुरुषार्थ-सिद्ध्यर्थं नव-चण्डी-विधानमहं करिष्ये।

इसके बाद **गणेशादि की पूजा** कर उक्त गृह की पूर्व दिशा में **भगवती का आवाहन** निम्न मन्त्र से करे— **'ॐ गजारूढे कादम्बरि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ।'**

फिर उन्हें किसी पीठासन पर प्रतिष्ठित कर गन्ध प्रदान करे—

'श्रीकादम्बरि! एष ते गन्धो नमः'।

तब **'श्रीकादम्बरि! इमानि ते पुष्पाणि वौषट्'** से पुष्प, **'ॐ कादम्बरि! एष ते धूपो नमः'** से धूप और **'ॐ कादम्बरि! एष ते दीपो नमः'** से दीप प्रदान करे।

इसके बाद किसी अन्य पात्र में विविध व्यञ्जनों के साथ घृत-शर्करा-युक्त पायस (खीर) सजाकर उसे भगवती के सम्मुख रखे और उस **नैवेद्य** को निम्न मन्त्र पढ़ते हुए भगवती को समर्पित करे —

'ॐ श्रीकादम्बरि! एष ते बलिः नमः'।

इस प्रकार बलि प्रदान कर **'क्षमस्व'** कहकर भगवती को प्रणाम करे।

अब उपर्युक्त क्रम ही से **आग्नेय कोण** में—**'ॐ अज-वाहने उल्के देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'** से उल्का-देवी का आवाहन कर पूजन करे और उन्हें बलि प्रदान करे। इसी क्रम से **दक्षिणादि** दिशाओं में क्रमशः **कराली, रक्ताक्षी, श्वेताम्बरा, हरिता, यक्षिणी, कङ्काली, सुर-श्रेष्ठा** और **सर्प-राज्ञी** देवियों का आवाहन-पूजन कर उन्हें 'बलि' प्रदान करे। यथा—

'ॐ महिषारूढे करालि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'— से दक्षिण में,

'ॐ प्रेत-वाहने रक्ताक्षि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'—से नैऋत्य में,

'ॐ श्वेत-कौलीर-वाहने श्वेताम्बरे देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ—से पश्चिम में,

'ॐ मृग-वाहने हरिता-देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'— से वायव्य में,

'ॐ सिंहासने यक्षिणि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'—से उत्तर में,

'ॐ वृष-वाहने कङ्कालि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'— से ईशान में,

'ॐ हंस-वाहने सुर-श्रेष्ठे देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'— से पूर्व-ईशान के मध्य में,

'ॐ अहि-वाहने सर्प-राज्ञि देवि! इहागच्छ इह तिष्ठ'— से निर्ऋति-वरुण के मध्य में बलि प्रदान करे।

तदनन्तर दशों दिशाओं में यथा-क्रम **इन्द्र आदि दिक्-पालों का पूजन** कर ग्रह-मण्डल में स्व-शाखोक्त विधि के अनुसार यथा - स्थान **नव-ग्रहों की पूजा** करे। इसके बाद चार हाथ की लम्बी-चौड़ी चतुरस्त्र वेदिका में **'सर्वतोभद्र'** या **'अष्ट-दल-मण्डल'** की रचना करे और उस पर शालि-पुञ्ज के ऊपर स्वर्णादि-निर्मित **कुम्भ** को स्थापित करे। यह **कुम्भ** नव तन्तुओं से वेष्ठित चन्दनादि द्रव्यों से लेपित, सु-धूपित और हिरण्य-सहित वज्र-मुक्ताफल-पद्मराग-नील-मरकत— इन पञ्च-रत्नों से समायुक्त हो।

अब **'मही द्यौः'** से भूमि का स्पर्श कर **'ओषधयः सं'** से धान्य-राशि को छुए और कलश को सूँघे। इस प्रकार **कलश-स्थापन** कर **'इमं मे गङ्गे'** से उसे शुद्ध जल से पूर्ण करे। फिर उस जल में कुंकुम, अगरु, कर्पूर, चन्दन-पङ्क और कुसुम छोड़े तथा कलश के मुख पर आम्र-पत्र रखकर उसके ऊपर जिस धातु का कलश हो, उसी का बना हुआ पात्र रखे। पात्र तण्डुल से भरा हो और उसमें नारिकेल भी रखा होना चाहिए। तदनन्तर **'पूर्णादर्वी'** से कलश को अभिमन्त्रित करे। फिर **'युवा सुवासा'** से उसे रक्त वस्त्र से वेष्ठित करे। स्वर्णादि-निर्मित **महिषघ्नी देवी की प्रतिमा** ताम्र-पात्र में रखकर घृत से उसे अभिषिक्त कर दुग्ध और जल की धारा से क्रमशः उसका **'अभिषेक'** करे। फिर स्वच्छ वस्त्र से मूर्ति को प्रोक्षित कर, आसन-मन्त्र से पुष्पादि आसन देकर, **कलश** के ऊपर स्थापित कर वहाँ उसकी प्रतिष्ठा करे। तब निम्न मन्त्र से उसमें **भगवती का आवाहन** करे—

एहि दुर्गे महा-भागे! रक्षार्थं मम सर्वदा।
आवाहयाम्यहं देवि! सर्व-कामार्थ-सिद्धये॥
अस्यां मूर्तौ समागच्छ, स्थितिं मत्-कृपया कुरु।
रक्षां कुरु सदा भद्रे, विश्वेश्वरि! नमोऽस्तु ते॥

उक्त प्रकार **आवाहन** कर निम्न मन्त्र से **पुष्प** समर्पित करे—

ॐ जयन्ती मङ्गला काली, भद्र-काली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री, स्वधा स्वाहा नमोऽस्तु ते॥

इसके बाद **उपचारों** से पूजन कर **'नवार्ण-यन्त्र'** की **आवरण-पूजा** करे और धूपादि-पूजन के पश्चात् निम्न मन्त्रों से **भगवती की प्रार्थना** करे—

ॐ महिषघ्नि महा-माये, चामुण्डे मुण्ड-मालिनि!
द्रव्यमारोग्य-विजयो, देहि देवि! नमः सदा॥
भूत-प्रेत-पिशाचेभ्यो, रक्षोभ्यश्च महेश्वरि!
देवेभ्यो मानुषेभ्यश्च, भयेभ्यो रक्ष मां सदा॥
सर्व-मङ्गल-माङ्गल्ये, शिवे सर्वार्थ-साधिके!
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि, नारायणि! नमोऽस्तु ते॥
रूपं देहि यशो देहि, भगं भगवति! देहि।
पुत्रान् देहि धनं देहि, सर्वान् कामान् प्रदेहि मे॥

इस प्रकार **प्रार्थना** कर **'मूल-मन्त्र'** का यथा-शक्ति **'जप'** करे। तदनन्तर पहले **नारायण** आदि को नमस्कार कर **कवच, अर्गला, कीलक**-पूर्वक **चरित-त्रय** का **रहस्य-त्रय** के सहित पाठ करे। यदि स्वयं ऐसा करने में असमर्थ हो, तो किसी ब्राह्मण को बुलाकर सादर उसका पूजन करे। फिर **'चण्डी-पाठार्थं त्वामहं वृणे'** इस मन्त्र से यज्ञ-सूत्र द्वारा वेष्ठित पूगी-फल को दक्षिणा-सहित उस ब्राह्मण के हाथ में प्रदान कर उससे **'जप'** कराए। **'जप'** के अन्त में **पुष्पाञ्जलि** देकर **नमस्कार** करे और पद्धति के अनुसार **'कुमारी-पूजा'** करे। तदनन्तर यथा-विधि गुरुदेव की पूजाकर **ब्राह्मणों** का पूजन करे और उन्हें

भोजन कराकर ताम्बूल तथा दक्षिणा से उनको सन्तुष्ट करे।

उक्त प्रकार **प्रतिपदा** में कार्य कर **द्वितीया** में इसका दुगना, **तृतीया** में तिगुना, **चतुर्थी** में चौगुना और इसी क्रम में वृद्धि करते हुए **कुमारी**-भोजन तथा **ब्राह्मण**-समाराधनादि कर्म **नवमी** तक करे। **नवमी** में ये कर्म इस प्रकार **प्रतिपदा** की अपेक्षा नौ गुना होंगे।

इसके बाद **नवमी** में किए गए **'जप'** का दशांश **'होम'** करे। **'होम'** की विधि इस प्रकार है— **नव-चण्डी** के सम्बन्ध में एक हाथ का अर्थात् चारों ओर से कुल चौबीस अंगुल का **'कुण्ड'** या **'स्थण्डिल'** बनाए और पायस-तिलादि आज्य द्रव्य तथा फल-पुष्पादि सामग्री एकत्र कर हाथ में कुश-जल ले देश-काल का सङ्कीर्तन करते हुए **'सङ्कल्प'** पढ़े। यथा—

'मया कृतस्य कारितस्य वा जपस्य साङ्गता-सिद्ध्यर्थं दशांशेन तिल-पायसादि-द्रव्यैर्होमं करिष्ये।'

तदनन्तर आगमोक्त विधि से पद्धति-मार्गानुसार **'अग्नि का संस्कार'** कर प्रधान होम करे। पूर्वोक्त न्यासों को कर वह्नि में **'पीठ-पूजा'** करे। फिर आवाहनादि मुद्राएँ दिखाता हुआ देवी का उस पर आवाहन करे। फिर षडङ्ग-न्यास कर भगवती का वहाँ षोडशोपचारों से **'पूजन'** करे। तब मूल-मन्त्र से **१११ आज्याहुतियाँ** देकर पायस, तिल, पलाश- पुष्प, सर्षप, पूगी-फल, लाजा, दूर्वांकुर, यव, बिल्व-फल, रक्त-गुग्गुल—इन द्रव्यों से या तिल-मिश्रित पायस ही से कवच, अर्गला, कीलक, रहस्यों के प्रत्येक श्लोक द्वारा **आहुति** प्रदान करे। फिर **'जप'** के दशांश से प्रति-श्लोक द्वारा सप्तशती-मन्त्रों द्वारा उक्त द्रव्यों या तिल-पायस की **आहुति** प्रदान करे।

अध्याय के समाप्त होने पर और **'उवाच'** के स्थलों पर पत्र, पुष्प, फलों द्वारा पद्धति-मार्गानुसार **हवन** करे। **'नवार्ण'** के **'जप'** का दशांश **'हवन'** करे। इस प्रकार **'होम'** कर नामों से स्रुव द्वारा आज्य-पायस की आहुतियाँ पद्धति-मार्गानुसार प्रदान करे। इसके बाद पुनः प्रधान होम करे और तब पद्धति-मार्गानुसार **'पूर्णाहुति'** दे।

अब शेष कर्म समाप्त कर मूल-मन्त्र से दशांश **'होम'** कर दुग्ध-मिश्रित जल या दुग्ध से **'तर्पण'** कर, उसके दशांश से **'मार्जन'** करे। तदनन्तर आचार्यादि का वस्त्र आदि से पूजन करे। इसके बाद द्वार-पालों और अन्य लोगों को **'दक्षिणा'** देकर **'कलश'** के जल से स-परिवार यजमान का वेदोक्त एवं पुराणोक्त मन्त्रों से **'अभिषेक'** करे।

तदनन्तर यजमान **'नव-ग्रहों की उत्तर-पूजा'** कर उनका **'विसर्जन'** करे और आचार्य के हाथ में उन्हें प्रदान कर **भगवती का पूजन** करे। फिर पद्धति-मार्गानुसार छागादि या नारिकेल की या पद्धति अनुसार **'बलि'** प्रदान करे।

इसके बाद स्नान कर अपने मस्तक पर तिलक धारण करे और **'खड्गिनी शूलिनी'** इस एक, **'शूलेन पाहि नो देवि'** इस चतुष्टय, **'नमो देव्यै'** इस पञ्चक, **'सर्व-स्वरूपे'** इन पाँचों से स्तुति कर भगवती को नमस्कार करे। फिर **'पुष्पाञ्जलि'** अर्पित कर निम्न मन्त्र से प्रार्थना करे—

रूपं देहि यशो देहि, भगं भगवति! देहि मे।
पुत्रान् देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे॥
महिषघ्नि महा-माये! चामुण्डे मुण्ड-मालिनि!
आयुरारोग्यमैश्वर्यं, देहि देवि! नमोऽस्तु ते॥

उक्त मन्त्र से प्रार्थना कर निम्न मन्त्र पढ़ भगवती के हाथ में जल समर्पित करे—

ॐ गुह्यति-गुह्य गोप्त्री त्वं,

गृहाणास्मत्-कृतं जपम्।

सिद्धिर्भवतु मे देवि!

प्रसादात् तव सुन्दरि!॥

फिर **'मूल-मन्त्र'** से पुष्प-द्वारा भगवती का उद्वासन कर नासा से उन्हें हृदय में लाकर प्रतिष्ठित करने की भावना करे। तब **'षडङ्ग'-न्यास** करे।

उपर्युक्त क्रम से **'नव-रात्र'** सम्पन्न कर दशमी में भगवती का **'विसर्जन'** करे। यथा—

उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि! शुभां पूजां प्रगृह्य च।
कुरुष्व मम कल्याणमष्टभिः शक्तिभिः सह॥

उक्त मन्त्र पढ़कर भगवती को उठाए और—

दुर्गे देवि जगन्मातः! स्थानं गच्छ पूजिते।
संवत्सरे व्यतीते तु, पुनरागमनाय वै॥
इमां पूजा मया देवि! यथा-शक्त्युप-पादितम्।
रक्षार्थं त्वं समादाय, व्रज स्व-स्थानमुत्तमम्॥

उक्त 'मन्त्र' पढ़कर स्वर्ण-मयी प्रतिमा आचार्य को प्रदान करे और निम्न श्लोक पढ़े—

त्रैलोक्य-मातर्देवि! त्वं सर्व-भूत-दयान्विते!
दानेनानेन सन्तुष्टा, सु-प्रीता वरदा भव॥

फिर **'मृण्मय-मूर्त्यादि-सर्वम् उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि!'** से उत्थापन कर उन सबको जल में प्रवाहित कर दे—

गच्छ गच्छ परं स्थानं, स्व-स्थानं देवि चण्डिके!
व्रज स्रोतोजलं वृद्ध्यै, स्थीयतां च जले त्विह॥

तदनन्तर **अग्नि की पूजा** कर **विभूति** ले और **'गच्छ गच्छ'** से **'विसर्जन'** कर दे। फिर **'सङ्कल्प'** करे। यथा—

'कृतस्य कर्मणः साङ्गता-सिद्ध्यर्थं यथा-शक्ति महा-लक्ष्मी-प्रीत्यर्थं ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।'

फिर **'यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, प्रमादात् कुर्वतां कर्म'** श्लोकों को पढ़कर **भगवान् विष्णु का स्मरण** करे। तब ब्राह्मणों से **'पूर्णतां'** कहलाकर सभी कर्म ईश्वर को अर्पण कर दे। अन्त में सु-ब्राह्मणों को भोजन कराकर हीन-दीनान्ध और दुखियों को अन्न देकर उन्हें ताम्बूल-दक्षिणादि से सन्तुष्ट करे और तब स्वयं भी सुहृदों के साथ भोजन करे।

उक्त **पूजन-विधान का माहात्म्य** इस प्रकार है—

नवमी - तिथि - पर्यन्तं, वृद्धि-पूजा-जपादिकम्।
एकाहारं व्रती कुर्यात्, सत्यादि - नियमैर्युतः॥
क्रीडन्ति विविधैर्भोगर्देव - लोके सु-दुर्लभे।
नाधयो व्याधयस्तेषां, न च शत्रु-भयं भवेत्॥
इन्द्र - ब्रह्मादयो देवास्तामायान्ति प्रसेवितुम्।
अपुत्रो लभते पुत्रं, निर्धनो धनवान् भवेत्॥
अविद्यो लभते विद्यां, स-कामश्च मनोरथान्।
व्याधयः संक्षयं यान्ति, शत्रवः क्षयमाप्नुयः॥
न तस्यास्ति भयं किञ्चिद्, राज-चोराग्नि-वातजं।

शाक्तों का महा-पर्व—'नवरात्र'

निर्बल चित्तवालों के लिए ही **देव-देव महादेव** ने साधना के अनेक मार्गों का निरूपण किया है, जिससे मोह-ग्रस्त मानव माँ का अनुरागी बन माँ के चरणों पर अपने को न्योछावर कर दे। साधना के दो रूप हैं— **१ नित्य** तथा **२ नैमित्तिक।** प्रतिदिन चलनेवाली साधना **'नैत्यिक'** है तथा पर्व-पर्व पर की जानेवाली स-विशेष साधना **'नैमित्तिक'**। अतः ऐसी **नैमित्तिक साधनाओं** के अवसर शास्त्रों के द्वारा निर्धारित कर दिए गए हैं। **'नव-रात्र'** ऐसा ही एक पर्व है।

वासन्ती-पूजा

❖ पण्डित भूपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय

हमारे भारतवर्ष में एक कहावत है— **''बारह महीने में तेरह पार्वण''** अर्थात् हिन्दुओं के बहुत से त्योहार होते हैं। छोटे-बड़े देव-देवी की पूजा, व्रत सभी महीनों में लगे ही रहते हैं।

वसन्त-ऋतु के आरम्भ से ही देखा जाता है कि एक के बाद एक त्योहार होता ही रहता है। पण्डितों का कथन है कि **वसन्त**-काल में सभी के हृदय में रस का सञ्चार होता है, सभी उमङ्ग से भरे रहते हैं। इसी कारण देव-देवी की पूजा इत्यादि में वे प्रसन्न रहते हैं। साथ ही बुरे कर्मों से नर और नारी को बचाने के लिए भी इन उत्सवों का प्रयोजन है। **वैशाख** का पूरा महीना **कुमारी कन्याओं** के लिए व्रत करने का महीना है। **कन्याएँ** ठीक पथ पर रहें, इसलिए **वैशाख** के महीने में प्रातः-काल ही **कन्याएँ** व्रत करती हैं। उनकी माँ, दादी इत्यादि ये व्रत करवाती हैं।

किसी के मत से **फाल्गुन** और **चैत्र वसन्त**-ऋतु है और किसी के मत से **चैत्र** और **वैशाख। वैशाख** का दूसरा नाम **'माधव'** है और **चैत्र** का **'मधु'।**

जिस प्रकार **शरद**-ऋतु में **श्रीदुर्गा देवी की पूजा** की जाती है, इसी प्रकार **वसन्त**-ऋतु में भी **श्रीदुर्गा देवी की पूजा** महा-समारोह से होती है। **दुर्गा जी** का एक नाम **'वासन्ती'** भी है। **वसन्त-काल** में देवी की पूजा की जाती है, इसी से इनका नाम **'वासन्ती'** पड़ा। **शरत्**-काल की पूजा **'अकाल-पूजा'** है, इसी कारण **शरत्**-काल में देवी का **'बोधन'** करके पूजा करनी चाहिए। **शरत्**-ऋतु देवताओं की रात्रि है, अतः **'अकाल'** है, किन्तु **वसन्त**-काल की पूजा **'बोधित'** पूजा है, इसी से **'वासन्ती-पूजा'** में देवी का **'बोधन'** नहीं किया जाता।

सूर्य के **मीन-राशि** में जाने से अर्थात् चैत्र मास में **शुक्ला सप्तमी** से दशमी तक **दुर्गा देवी की पूजा** करनी होती है। यहाँ **'चैत्र'**-शब्द से **चन्द्र-तिथि** का बोध होता है। **मीन-राशि** में **सूर्य** के जाने पर ही पूजा होगी— ऐसा नहीं, किन्तु **चान्द्र-तिथि** के अनुसार **'मीन'** और **'मेष'**—इन दोनों राशियों में **सूर्य** के जाने से अर्थात् **चैत्र** और **वैशाख** इन दो मासों के मध्य **चान्द्र चैत्र शुक्ला सप्तमी** से पूजा करनी होगी। कहा है—

मीन-राशि-स्थिते सूर्ये, शुक्ल-पक्षे नराधिप!
सप्तमी दशमी यावत्, पूजयेदम्बिकां सदा।।

'भविष्योत्तर' में—

चैत्रे मासि सिता-पक्षे, सप्तम्यादि-दिन-त्रये।
पूजयेद् विधि-वद् दुर्गा, दशम्यां च विसर्जयेत्।।

यह पूजा **'तिथि-कृत्य'** होने से **'चान्द्र'**-मासानुसार होती है— **'सौर'**-मासानुसार नहीं होती। जो यथा-विधान प्रति-वर्ष **वासन्ती**-पूजा करते हैं, उन्हें पुत्र-पौत्रादि का लाभ होता है तथा उनकी कामनाएँ पूरी होती हैं।

'शारदीया दुर्गा-पूजा' के विधानानुसार यह पूजा करनी होती है। पूजा में कोई विशेषता नहीं है। **'शारदीय पूजा'** जिस प्रकार चतुरवयवी है, अर्थात् **१ स्नपन, २ पूजन, ३ होम** और **४ बलिदान** — इन चार अवयवों से विशिष्ट है, **'वासन्ती-पूजा'** को भी उसी प्रकार जानना होगा। इसमें भी **'स्नपन, पूजन, होम** और **बलिदान'** उसी प्रकार होता है, अन्य कोई विशेषता नहीं है।

यदि कोई **सप्तमी** से पूजा न कर सके, तो **अष्टमी तिथि** में पूजा करे। **अष्टमी** में असमर्थ हो, तो केवल **नवमी तिथि** में पूजा का विधान है।

अष्टमी से आरम्भ करने पर **'अष्टमी-कल्प'** और **नवमी तिथि** में पूजा करने से उसे **'नवमी-कल्प'** कहते हैं।

इस पूजा में **'शारदीय पूजा'** की तरह **'चण्डी-पाठ'** करना होता है। सायं-काल में **षष्ठी** के दिन **विल्व-वृक्ष** के मूल को **'आमन्त्रण'** और प्रतिमा को **'अधिवास'** कर रखना होता है। दूसरे दिन **सप्तमी तिथि** में आमन्त्रित **विल्व की शाखा** को काटकर उसकी यथा-विधान पूजा करनी होती है। इस पूजा में सभी विषय **'शारदीया पूजा'** के समान ही जानने होंगे।

अब यह विचार करना है कि इस पूजा की उत्पत्ति कैसे हुई और मर्त्य-लोक में पहले-पहल किसने इस पूजा को किया।

'ब्रह्म-वैवर्त-पुराण' में लिखा है कि **परमात्मा श्रीकृष्ण** जब **गोलोक-धाम** में **रास** करते थे, उस समय **मधु-मास** में प्रसन्न होकर उन्होंने ही पहले-पहल **भगवती दुर्गा देवी की पूजा** की थी। पीछे **विष्णु** ने **मधु-कैटभ-युद्ध** के समय देवी की शरण ली थी। उस समय **ब्रह्मा** ने **देवी भगवती की पूजा** की। तभी से इस पूजा का सञ्चार है। **'माया-तन्त्र'** के ७वें पटल में प्रमाण है—

चैत्रे मासि सिते पक्षे, नवम्यादि-दिन-त्रये।
प्रातः प्रातर्महा-देवीं, दुर्गां भक्त्या प्रपूजयेत्।।

सबसे पहले मर्त्य-लोक में किसने **वासन्ती-पूजा** की, इसका विशेष प्रमाण नहीं मिलता। **'सप्त-शती'** और **'ब्रह्म-वैवर्त-पुराण'** से जाना जाता है कि सबसे पहले **समाधि वैश्य** और **सुरथ राजा** ने **भगवती की पूजा** की। इस पूजा के फल से **समाधि वैश्य** को **'मोक्ष'** और **सुरथ राजा** को **'राज्य - लाभ'** हुआ था तथा **दुर्गा देवी** के वर से राजा **'सावर्णि'**-नामक **मनु** हुए थे।

'मार्कण्डेय पुराण' में लिखा है कि समस्त क्षिति-मण्डल में **राजा सुरथ** चक्रवर्ती राजा थे। कोल-विध्वंसी राजाओं ने उन्हें युद्ध में परास्त कर राज्य से निकाल भगाया था। राजा ने राज्य-भ्रष्ट होकर **मेधस मुनि** का आश्रय लिया। पीछे मुनि के उपदेश से वे नदी के पुलिन में गए और वहाँ उन्होंने **महा-माया भगवती** की मृण्मयी मूर्ति बना कर पूजा की—

''तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः, कृत्वा मूर्तिं मही-मयीम्।
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः, पुष्प-धूपाग्नि-तर्पणैः।।''

'सप्त-शती' के भक्त पाठक ऊपर के श्लोक को भली-भाँति जानते हैं। इसका अर्थ है कि उन दोनों ने (**समाधि वैश्य** और **राजा सुरथ** ने) नदी के किनारे **देवी की मिट्टी की मूर्ति** बना कर पुष्प, धूप, अग्नि और तर्पण के द्वारा पूजा की। **राजा सुरथ** ने किस समय यह पूजा की थी, इसका विशेष उल्लेख देखने में नहीं आता, किन्तु प्रसिद्धि है कि उन्होंने **वसन्त-काल** में ही **देवी की पूजा** की थी।

'ब्रह्म-वैवर्त-पुराण' से जाना जाता है कि **मेधस-शिष्य राजा सुरथ** ने नदी के किनारे **दुर्गा देवी की मृण्मयी मूर्ति** बना कर यथा-विधान उनकी पूजा की और मेष, महिष, कृष्ण-सार, गण्डार, छाग, मीन, कूष्माण्ड और पक्षी आदि की बलि चढ़ाई। पूजा के बाद उस मृण्मयी मूर्ति का जल में विसर्जन किया गया।

वर्तमान समय में **चैत्र** के **नव-रात्रि** में **'सप्तशती-पाठ'** का प्रचलन अब भी बहुत है, परन्तु इस समय मूर्ति बना कर पूजा करने का विधान नहीं है। **बङ्ग-देश** में अब भी कहीं-कहीं **वासन्ती-पूजा** होती है।

चैत्र मास की **शुक्ला अष्टमी तिथि** में **'अन्नपूर्णा-पूजा'** का विधान है। इस **वासन्ती अष्टमी तिथि में भक्ति-पूर्वक अन्नपूर्णा देवी की पूजा** करने से अन्न-कष्ट दूर होता है और अन्त-काल में स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

वासन्तीय नवरात्र

महा-पर्व **'नवरात्र'** का सामान्य परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। जिस प्रकार **होली, दीवाली** आदि महा-पर्व सु-विख्यात हैं, वैसे ही **'नवरात्र'** भी आबाल-वृद्ध-वनिता को ज्ञात है। **'नवरात्र'**- महा-पर्व के समीप आते ही सभी श्री जगदम्बा की विशेष रूप से अर्चा, पूजा, उपासना करने को उत्कण्ठित दीख पड़ने लगते हैं। कोई **पुरश्चरण का सङ्कल्प** उठा लेता है, कोई **दुर्गा-पूजन** के महोत्सव के आयोजन में जुट जाता है, तो कोई **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** का ही नियम-पूर्वक पाठ करने लग जाते हैं। जो संस्कृत नहीं जानते, वे भी **'सप्त-शती'** के भाषानुवाद को ही लेकर उसी के सतत पाठ द्वारा जगज्जननी को तुष्ट करने को यत्न-शील दिखाई देने लगते हैं। ऐसे ही व्यापक और लोक-प्रिय **महा-पर्व 'नवरात्र'** का आयोजन वर्ष में प्रकट रूप से दो बार और गुप्त रूप से भी दो बार—कुल चार बार संयोजित होता रहता है। इनमें से जो **चैत्र मास** में संयोजित होता है, उसका एक नाम **'वासन्तीय नवरात्र'** भी है।

'ब्रह्म-वैवर्त पुराण' के निम्न-लिखित वचन से **'वासन्तीय नवरात्र'** का काल-निरूपण बड़े स्पष्ट शब्दों में होता है। साथ ही इससे उसके गौरव का भी बोध होता है—

पूजिता सुरथेनादौ, दुर्गा दुर्गति - नाशिनी।
मधु-मास-सिताऽष्टम्यां, नवम्यां विधि-पूर्वकम्।।

अर्थात् आदि-काल में सुरथ ने मधु-मास (चैत्र) के शुक्ल-पक्ष की अष्टमी और नवमी तिथियों में दुर्गति-नाशिनी भगवती दुर्गा की विधि-वत् पूजा की थी।

इस सम्बन्ध में **'ब्रह्म-वैवर्त-पुराण'** की निम्न पंक्तियाँ भी मनन करने योग्य हैं—

पुरा स्तुता सा गो-लोके, कृष्णेन परमात्मना।
सम्पूज्य मधु-मासे च, प्रीतेन रास-मण्डले।।
मधु-कैटभयोर्युद्धे, द्वितीये विष्णुना पुरा।
तत्रैव काले सा दुर्गा, ब्रह्मणा प्राण-सङ्कटे।।
चतुर्थे संस्तुता देवी, भक्त्या च त्रिपुरारिना।
पुरा त्रिपुर - युद्धे च, महा-घोर-तरे मुने!।।
पञ्चमे संस्तुता देवी, वेत्रासुर-वधे तथा।
शक्रेण सर्व-देवैश्च, घोरे च प्राण - सङ्कटे।।
तदा मुनीन्द्रैर्मनुभिर्मानवैः सुरथादिभिः।
स्तुता च पूजिता सा च, कल्पे कल्पे परात्परा।।

अर्थात् पूर्व-काल में गो-लोक में रास-मण्डल के बीच वसन्त-काल में परमात्मा **श्रीकृष्ण** ने भक्ति-पूर्वक **भगवती दुर्गा की स्तुति** की थी। फिर दूसरी बार **मधु-कैटभ-युद्ध** के अवसर पर **भगवान् विष्णु** ने स्तुति की थी। तीसरी बार उसी समय **ब्रह्मा** के जब प्राण सङ्कट में पड़े थे, तब उन्होंने **भगवती की वन्दना** की थी। हे मुनि **नारद! त्रिपुरासुर** के साथ प्राचीन काल में अति कठिन युद्ध हुआ था, तब उस समय **महा-देव** ने भक्ति-पूर्वक **देवी की स्तुति** की थी। पाँचवीं बार **वेत्रासुर** के वध के समय अत्यधिक प्राण-सङ्कट के समय **इन्द्र**-सहित समस्त देवताओं ने **भगवती की वन्दना** की थी। इसके बाद हर कल्प में **मुनीन्द्र-गण, मनु** और **सुरथ** आदि मनुष्यों द्वारा उस **परात्परा देवी की स्तुति-पूजा** की गई।

❖ **'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल**

'वासन्तीय नवरात्र' की पूजा-विधि उसी प्रकार की है, जैसी कि **'शारदीय नवरात्र'** की पूजा होती है। विशेषता केवल इतनी रहती है कि **'वासन्तीय**

पूजन' में **'बोधन'** नहीं किया जाता क्योंकि **'वसन्त-काल'** में तो भगवती जाग्रत ही रहती हैं और जाग्रत के बोधन की आवश्यकता ही क्या! **महा-महोपाध्याय शूलपाणि भट्टाचार्य** कृत **'दुर्गोत्सव-विवेक'** में ठीक ही लिखा है—

व्यवस्था च शारदीय-पूजा-प्रकरणोक्ता
विधिस्तु ग्राह्या।
विशेषस्त्वयं बोधनं नास्ति,
बोधिताया बोधनासम्भवात्॥

'वासन्तीय नवरात्र' की काल-अवधि का निर्देश निम्न पंक्तियों में भी किया गया है—

चैत्रे मासि सिते पक्षे, सप्तम्यादि-दिन-त्रये।
पूजयेद् विधि-वद् दुर्गां, दशम्यां तु विसर्जयेत्॥

अर्थात् **चैत्र मास** के **शुक्ल पक्ष** की **सप्तमी, अष्टमी** और **नवमी**— इन तीन दिनों में विधि-पूर्वक **भगवती दुर्गा की पूजा** करे और **दशमी** के दिन विसर्जन करे।

'वासन्ती-पूजा-विधि' के सम्बन्ध में निम्न वचन भी महत्त्व-पूर्ण हैं—

चैत्रे मासि सिते पक्षे, सप्तम्यादि-दिन-त्रये।
पूजयेद् विविधैर्द्रव्यैर्लवङ्ग - कुसुमैस्तथा॥
नाना - विधैश्च बलिभिर्मेघाभैर्दोष-वर्जितैः।
विचित्राभरणैः पार्थ! पट्ट-वस्त्रादिभिस्तथा॥
एवं यः कुरुते पूजां, वर्षे विधानतः।
ईप्सितान् लभते कामान्, पुत्र-पौत्रादिकान् नृप!॥

अर्थात् हे राजन्! **चैत्र मास** के **शुक्ल पक्ष** की **सप्तमी** आदि तीन दिनों में भगवती की विविध द्रव्यों, लवङ्ग-पुष्पों, दोष-हीन कृष्ण-वर्ण के छागादि नाना प्रकार की बलियों, चित्र-विचित्र आभूषणों और रेशमी वस्त्रों से पूजा करे। हे पार्थ! इस प्रकार जो प्रति वर्ष यथा-विधि **वासन्तीय पूजा का अनुष्ठान** करता है, वह पुत्र - पौत्रादि सभी अभीप्सित वस्तुओं को प्राप्त करता है।

'कालिका-पुराण' में **'वासन्तीय पूजा'** का केवल **'अष्टमी-कल्प'** निर्दिष्ट किया गया है। यथा—

सिताष्टम्यां तु चैत्रस्य, पुष्पैस्तत्-काल-सम्भवैः।
अशोकैरपि यः कुर्यान्मन्त्रेणानेन पूजनम्॥
न तस्य जायते शोको, रोगो वाप्यथ दुर्गतिः।

अर्थात् **चैत्र शुक्लाष्टमी** में उस काल में विकसित होनेवाले पुष्पों से, विशेष कर अशोक़ के पुष्पों से इस मन्त्र (**ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा**) का उच्चारण करते हुए जो देवी की पूजा करता है, उसे रोग, शोक या किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता।

'देवी पुराण' में **'वासन्तीय पूजा'** के लिए केवल **'नवमी-कल्प'** का विधान किया गया है। यथा —

नवम्यां पूजयेद् देवीं, महिषासुर-मर्दिनीम्।
कुंकुमागुरु-कर्पूर-पानान्न - ध्वज - तर्पणैः॥
कुंकुमैर्मरु - पत्रैश्च, विजयाख्य - पदं लभेत्।

अर्थात् चैत्र शुक्ला नवमी के दिन कुंकुम, अगरु, कर्पूर, पान, अन्न, ध्वज, तर्पण द्वारा और कुंकुम तथा मरु-पत्र से भगवती महिषासुर-मर्दिनी की पूजा करे। इस प्रकार पूजा करनेवाला **'विजय'** नामक पद को प्राप्त करता है।

यहाँ पर **'वासन्तीय नवरात्र'** के सम्बन्ध में जो थोड़ा-बहुत विवरण दिया गया है, उससे उसकी प्राचीनता, गरिमा और महत्ता का ज्ञान होता है। इसमें सन्देह नहीं कि वर्ष में चार बार यह जो **'नव-रात्र'** महा-पर्व का अवसर आता है, वह साधकों और उपासकों— दोनों ही के लिए समान रूप से महत्त्व-शाली है। इस अवसर पर दृढ़ता-पूर्वक साधना-रत रहकर साधक जहाँ इष्ट-सिद्धि का लाभ करने में सफल-मनोरथ हो सकता है, वहाँ निष्ठा और भक्ति-पूर्वक पराम्बा के स्मरण-कीर्तन द्वारा उपासक आत्म-साक्षात्कार कर अपने लक्ष्य पर सहज ही पहुँच सकता है।

*

श्रीचण्डी-पूजा

❖ श्री जरिबन्धन लाल वर्मा

श्री माता **'चण्डी'** की पूजा— **चैत्र शुक्ल प्रतिपदा** से लेकर **नवमी** तक और इसी तरह **आश्विन** (कुँवार) **शुक्ल प्रतिपदा** से लेकर **नवमी** तक— साल में दो बार—नौ-नौ दिन तक हिन्दुओं के घर व्रत किया जाता है और घट-स्थापन कर **नव-दुर्गा** का पूजन किया जाता है। **नव-दुर्गा** के पूजन में केला, अनार, जयन्ता, अशोक, हल्दी, धान, कचूर, मान-कचूर और बेल की पत्तियों का व्यवहार होता है। नौ दिनों तक व्रत रखने की विधि है।

'घट' स्थापन करनेवालों को **कुमारी-भोजन** भी कराना पड़ता है। **दो वर्ष** से **दस वर्ष** तक की बालिकाओं को **'कुमारी'** कहते हैं। **नौ कुमारियों** का पूजन करके उन्हें भोजन कराना उत्तम है। इन **नौ कुमारियों** में क्रमशः—**१ कुमारिका, २ त्रि-मूर्ति, ३ कल्याणी, ४ रोहिणी, ५ काली, ६ चण्डिका, ७ शाम्भवी, ८ दुर्गा** और **९ सुभद्रा** की कल्पना करके उनकी पूजा की जाती है। इन नाम की देवियों का उनके शरीर में आवाहन किया जाता है। यथा (निर्णय-सिन्धु)—

मन्त्राक्षर-मयीं लक्ष्मीं, मातृणां रूप-धारिणीम्।
नव-दुर्गात्मिकां साक्षात्, कन्यामावाहयाम्यहम्॥

अर्थात् मन्त्रों में अक्षर-रूप से विराजनेवाली मातृ-रूपिणी **नव-दुर्गा-रूपिणी** लक्ष्मी-स्वरूपा **'कन्या'** का मैं आवाहन करता हूँ।

'श्रीदुर्गा-सप्तशती' की **'गुप्तवती'** नामक टीका में लिखा है कि शक्ति-रूपिणी 'दुर्गा' एक ही हैं। जैसे योगी-जन अनेक रूप धारण कर लिया करते हैं, वैसे ही माता ने भी भक्तों के कल्याण के लिए अनेक रूपों को धारण किया है। देवी के विविध **'नाम'** या **'रूप'** नवीन नहीं है, क्योंकि **'देवी-कवच'** के अनुसार ये नाम स्वयं सर्वज्ञ ब्रह्मा के कहे हुए हैं। **श्रीदुर्गा के नौ नाम** प्रसिद्ध हैं।

नवरात्र के दिनों में क्रम से एक-एक देवी की प्रतिमा के दर्शन की विधि निर्दिष्ट है। **नौ देवियों** का परिचय निम्न प्रकार है—

१ शैल-पुत्री— गिरि-राज हिमालय ने देवी के अवतार के लिए बड़ी तपस्या की थी। उसी से प्रसन्न होकर दक्ष के यज्ञ में शरीर भस्म करनेवाली भगवती सती ने **'पार्वती'** के रूप में उनके घर अवतार लिया। इसी से भगवती **'शैल-पुत्री'** कहलाती हैं। **'शैल-पुत्री'** की कथा 'कूर्म पुराण' में है।

२ ब्रह्म-चारिणी— वेदों में स्वतन्त्र विचरण करने तथा पर-ब्रह्म की प्राप्ति करा देने के कारण ही देवी का नाम **'ब्रह्म-चारिणी'** है।

३ चन्द्र-घण्टा— देवी के घण्टे में चन्द्रमा के विराजमान होने से या उनके चन्द्रमा की तरह आह्लाद-कारी होने से अथवा चन्द्रमा से अधिक सुन्दर होने के कारण भगवती का नाम **'चन्द्र-घण्टा'** पड़ा। **'चन्द्र-घण्टा'** का विवरण 'रहस्यार्णव' में है।

४ कूष्माण्डा— आध्यात्मिक, आधि-दैविक और आधि-भौतिक तापों से युक्त संसार का, भक्तों के लिए, विनाश करने के कारण देवी का यह नाम है।

५ स्कन्द-माता— सनतकुमार का एक नाम **'स्कन्द'** भी है (छान्दोग्योपनिषद्)। इन्हीं की माता होने से **दुर्गा** का यह नाम पड़ा।

६ **कात्यायनी—** एक बार देवताओं पर बड़ी आपदा आई। उस समय कात्यायन ऋषि ने उग्र तप करके देवी को पुत्री-रूप में प्राप्त किया था। तभी से देवी का यह नाम प्रसिद्ध हुआ। ये चिर-कुमारिका हैं।

७ **काल-रात्रि—** देवी काल की भी काल-रूपिणी हैं। प्रलय-काल में ये **'काल'** का भी नाश करती हैं। इसी सर्व-संहार-कारिणी मूर्ति का नाम **'काल-रात्रि'** है।

८ **महा-गौरी—** 'काली-पुराण' में लिखा है कि पार्वती का रङ्ग काला था, शिवजी उन्हें **'काली'** कहकर चिढ़ाया करते थे। एक दिन इसी पर क्रुद्ध होकर भगवती ने अपना परम मनोहर गौर रूप धारण कर लिया। तभी से वे **'महा-गौरी'** कहलाईं।

९ **सिद्धिदा—** सब सिद्धियों की देनेवाली मुक्ति-प्रदायिनी भगवती का यह नाम सर्वथा समीचीन है। भगवती को **'सिद्ध-माता'** या **'सिद्धि-दात्री'** भी कहते हैं।

'नवरात्र' में क्रम से इन रूपों और नामों से **'नव-दुर्गा'** का पूजन, स्मरण, सङ्कीर्तन और दर्शन करने से, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों फलों की प्राप्ति होती है।

श्री व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा था कि "कलि-युग में जो कुछ दान-पुण्य, धर्म-कर्म, व्रत, उपवास हैं, सबमें **'नव-दुर्गा'** का पूजन श्रेष्ठ और सर्व-सिद्धि-साधक है।"

'देवी-भागवत', स्कन्ध ३, अध्याय २२-२७ में एवं अन्यान्य आप्त ग्रन्थों में भी लिखा है कि "दुःख-दारिद्र्य और बाधा-बन्धन से छुड़ाने-वाले **'दुर्गा-पूजन'** और **'चण्डी-पाठ'** तथा **'नवार्ण-मन्त्र-जप'** से बढ़ कर कोई उपाय इस जगती-तल में नहीं है।"

प्रार्थना

१. अर्ध-चन्द्र का मुकुट धारण करनेवाली, वृष-वाहिनी, शूल-धारिणी और प्रथित-यशा **'शैल-पुत्री'** देवी को वाञ्छित फल की प्राप्ति के लिए प्रणाम करता हूँ।

२. अपने कर-कमलों में रुद्राक्ष-माला और कमण्डलु धारण करनेवाली अनुपम **'ब्रह्म-चारिणी'** देवी मुझ पर प्रसन्न हों।

३. व्याघ्र-वाहिनी, प्रचण्ड कोप-वती और शस्त्रास्त्र-धारिणी **'चन्द्र-घण्टा'** देवी मुझ पर प्रसन्न हों।

४. रक्त-रञ्जित और मदिरा से परिपूर्ण घड़े को कर-कञ्जों में धारण करनेवाली **'कूष्माण्डा'** भगवती मेरा कल्याण करें।

५. सदा सिंहासनासीना और करों में पद्म धारण करनेवाली तथा प्रसिद्ध-कीर्ति **'स्कन्द-माता'** देवी मेरा कल्याण करें।

६. जिनके कर-कमल में चमकती हुई तलवार है, वे श्रेष्ठ सिंह की सवारी करनेवाली दैत्य-मर्दिनी **'कात्यायनी'** देवी मेरा कल्याण करें।

७. नील-कमल के सदृश काला और विकराल शरीर-धारिणी, विकट अट्टहास करनेवाली **'काल-रात्रि'** देवी मेरा कल्याण करें।

८. शुक्ल वृष पर सवारी किए हुए, श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली, पवित्र-रूपा और महा-देव को आनन्द देनेवाली **'महा-गौरी'** देवी मेरा कल्याण करें।

९. सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष तथा असुरों और अमरों अर्थात् देवताओं द्वारा पूजी जानेवाली **'सिद्धिदा'** देवी मुझे सिद्धि की देनेवाली हों।

* * *

'नवरात्र'-पूजा की महिमा

❖ **श्रीऋतशील शर्मा**

एक-भक्तेन नक्तेन, स्व-शक्त्या याचितेन वा।
पूजनीया जनैर्देवी, स्थाने स्थाने पुरे पुरे॥
गृहे गृहे शक्ति-पूज्या, ग्रामे ग्रामे वने वने।
स्नातैः प्रमुदितैर्हृष्टैर्ब्राह्मणैर्क्षत्रियैर्नृपैः॥
वैश्यैः शूद्रैर्भक्ति-युतैः, म्लेच्छैरन्यैश्च मानवैः॥
(भविष्योत्तर-पुराणे)

शास्त्र का यह वचन आज भी कितना चरितार्थ है, इसका यहाँ प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है। विशाल भारत में **'नव-रात्र'** के पुण्य-प्रद अवसर पर जगदम्बा का आवाहन व्यापक रूप में आज भी सर्वत्र होता है।

माता की पूजा का यह क्रम जहाँ सदियों से इस पवित्र देश में जारी है, वहाँ उसका वर्तमान रूप देखते हुए निश्चय के साथ कहना पड़ता है कि जगदम्बा की यह लोक-कल्याण-कारिणी अर्चना इसी प्रकार व्यापक रूप में भविष्य में भी होती रहेगी।

वस्तुतः **माँ की पूजा** ऐसी ही हृदय-ग्राही वस्तु है। इसमें किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं होता है। सभी लोगों— स्त्री-पुरुष, आबाल-वृद्ध, चातुर्वर्ण्य के सभी लोगों को ही नहीं, म्लेच्छों तक को उनकी आराधना का अधिकार है। महिमा-मयी जगज्जननी की यह पूजा ऐसी ही गौरवास्पद है। पीड़ित और सङ्कट-ग्रस्त को यह जननी ही तो गले लगा कर सब प्रकार की शान्ति प्रदान करती है। इसी से, इस अवसर की पूजा-अर्चा की यह महिमा है। कौन दुखी मानव माता की गोद में बैठने की इच्छा नहीं करता?

'नव-रात्र' के— माँ के दिन धर्म-भीरु हिन्दुओं के लिए सान्त्वना का सन्देश देते हैं। इन दिनों प्रत्येक जन यही कहता है कि— 'आओ, माँ की आराधना करें। इसी से हमारे सारे सङ्कट दूर होंगे और हमारा लोक-परलोक बनेगा।'

पढ़े-लिखे लोग **व्रत-पूर्वक 'चण्डी'-पाठ** करते हैं। समर्थ लोग वही कार्य पण्डितों से करवाते हैं। इनसे इतर लोग **'व्रत'** करते हैं और पास-पड़ोस के **देवी-मन्दिर** में जाकर **'पूजा-अर्चा'** करते हैं। इस तरह इन दिनों सभी लोग यथा-शक्ति **जगज्जननी का अर्चन** करके अपने को कृतार्थ करते हैं।

नवरात्र का गौरव

'नवरात्र' सनातनी हिन्दुओं का एक अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण **महा-पर्व** है। **'होली'**, **'दीपावली'** और **'जन्माष्टमी'** आदि पर्वों के समान यह **'पर्व'** सारे भारत में व्यापक रूप से मनाया जाता है। यह **महा-पर्व** मुख्यतः दो बार मनाया जाता है। एक तो विक्रमीय वर्ष के आरम्भ में **चैत्र मास** के शुक्ल पक्ष में और दूसरा **आश्विन** के **शुक्ल पक्ष** में। इन दो अवसरों के अतिरिक्त **आषाढ़** और **माघ मास** के शुक्ल पक्षों में भी **'नवरात्र'** माना जाता है, किन्तु इनका महत्त्व केवल शाक्त-धर्मावलम्बी ही समझते हैं।

'नवरात्र' शाक्तों का परम पर्व है, किन्तु इसे वैष्णव, शैव, सौर, गाणपत्य सभी सनातन-धर्मी श्रद्धा और भक्ति-पूर्वक सम्मान देते हैं तथा इस पवित्र अवसर पर यथा-शक्ति उत्तम उपचारों से **जगज्जननी भगवती दुर्गा की पूजा-उपासना** करते हैं।

नवरात्र का सामाजिक महत्त्व

हिन्दुओं के जितने भी पर्व-त्यौहार हैं, विज्ञान-सम्मत हैं। उनका आधार केवल धार्मिकता ही नहीं है अपितु देश, काल और समाज— सभी को लक्ष्य में रखते हुए उनके मनाए जाने का निर्देश हुआ है। **शारदीय** एवं **वासन्तिक नवरात्रों** के सम्बन्ध में भी यह बात लागू होती है।

सारांश यह कि **शरत्** और **वसन्त—** ये दो ऋतुएँ स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत खराब हैं। इनमें तरह-तरह के रोग लोगों को होते हैं। अतएव **चैत्र** और **आश्विन** मास में विशेष रूप से पूजा-पाठ करना चाहिए, जिससे कल्याण हो।

शरद और **वसन्त-काल** में विविध प्रकार के ज्वर, उदर-रोगादि से जन-समाज पीड़ित होता है; केवल वही लोग स्वस्थ रह जाते हैं, जो खान-पान के सम्बन्ध में सजग रहते हैं। **'नवरात्र'** की अवधि में **व्रत** अर्थात् **उपवास** करने का नियम है। इससे **'नवरात्र'** के मनानेवाले सामयिक शारीरिक क्लेश से सहज ही बच जाते हैं।

स्वास्थ्य-सम्बन्धी उक्त दृष्टिकोण के अतिरिक्त **'नवरात्र'** के नौ दिनों तक देवी-मन्दिरों, पीठ-स्थानों आदि पवित्र स्थलों पर जन-समुदाय एकत्र होकर विविध प्रकार के उत्सवों का आयोजन करता है। सभी लोग एक-मति **भक्ति-पूर्वक श्रीजगदम्बा की पूजा-अर्चा** करते हैं। इससे विभिन्न देवोपासकों में सौहार्द उत्पन्न होता है और **'विभिन्नता में एकता की अनुभूति'** के भारतीय परमादर्श की उपलब्धि होती है।

* * *

श्री शारदीय नव-रात्र

❖ श्रीभुवनेश्वर सिंह 'भुवन'

परम्परा से सर्व-साधारण के मन में यह धारणा बद्ध-मूल हो गई है कि **'श्रीशारदीय दुर्गा-पूजा'** का प्रचलन **'त्रेता-युग'** से हुआ है और इसके आदि-प्रवर्तक **भगवान् श्रीरामचन्द्र** हैं। चूँकि इस **'महा-पूजा'** के पूजाङ्ग में हय, हाथी, यान, वाहन, अस्त्र-शस्त्रों की अर्चा का सीमोल्लङ्घन तथा विजय-यात्रादि का विधान भी है, अतः बहुत से लोगों की धारणा है कि **'विजया-दशमी'** क्षत्रियों का त्योहार है।

पुराणों में लिखा हुआ है कि **दानवेन्द्र रावण** की शक्ति अजेय थी। उस पर विजय प्राप्त करके, **जनक-नन्दिनी जानकी** का उद्धार करना, **वीर-बाहु रामचन्द्र** के लिए भी दुःसाध्य था। अतः अपनी मनोरथ-पूर्ति के लिए उन्हें **जगदम्बा की शरण** लेनी पड़ी और **ब्रह्मा** को आचार्य वरण करके उन्होंने **सविधि 'शारदीय नव-रात्र' का अनुष्ठान** कराया। पर, **शरद्-ऋतु— भगवती का शयन-काल** है, उसी भाव से उनकी पूजा-अभ्यर्थना करने से **रामचन्द्र** का अभीप्सित काम्य तत्काल सिद्ध नहीं हो सकता था। उन्हें **जगदम्बा के वर-लाभ** की जरूरत थी, अतः अपनी महत्तम साधना, भक्ति और मन की दृढ़ता से उन्होंने असाध्य साधन किया।

ब्रह्मा ने अपनी कातर प्रार्थना-द्वारा **जगदम्बा** के हृदय को द्रवित किया और उन्हें अकाल में निद्रा त्याग कर, जाग्रत-भाव से, भक्त की **पूजा-बलि** ग्रहण करने के लिए बाध्य होना पड़ा। इसका प्रसाद **भगवान् रामचन्द्र** को वर-रूप में यह मिला कि वे अजेय शक्ति पर भी पराक्रम प्रकट कर सके और **लङ्का-विजय** करके सफल-मनोरथ तथा यशस्वी बने। तब से यह **'शयन-नव-रात्र'** पूर्ण चैतन्य हो गया, **'नित्य'** के साथ-साथ **'काम्य'** भी बन गया।

भगवान् रामचन्द्र को यह गौरव प्राप्त है कि उन्होंने अपने अनुष्ठान की महिमा से प्रति-वर्ष भक्तों के घर **जगदम्बा के पूजा-ग्रहण** की परिपाटी स्थापित कर दी।

ब्रह्मा ने **जगदम्बा का बोधन** करते हुए, उस समय जिस भाव-भरित, उदात्त और प्रशस्त स्तुति-मन्त्र का पाठ किया था, वह **'महा-भागवत पुराण'** में पठनीय है। तब से लेकर आज तक भक्त-समूह, **बिल्व**-वृक्ष के समीप अधिष्ठित होकर, प्रति-वर्ष अकाल में **जगदम्बा** को सप्रेम जगाता है। उसे त्रेता की उस स्मरणीय घटना का स्मरण कराकर, जागने की प्रेरणा देता है और जगाकर **श्री-चरणों** में अपना हार्दिक भक्ति-सम्भार उपस्थित कर अपने को धन्य और कृत-कृत्य बनाता है, सफल-मनोरथ होता है।

पर केवल इतनी-सी बातों को आधार बनाकर यह निष्कर्ष निकालना कि **'शारदीय-पूजा'** का प्रचलन पहले नहीं था और इसके प्रवर्तक **भगवान् रामचन्द्र** हैं, जड़ता की परा-काष्ठा है। विशेषतः इस **'महा-पर्व'** को जाति या सम्प्रदाय-विशेष की वस्तु बतलाना तो सर्वथा निराधार और कपोल-कल्पित है।

इस **'महा-पूजा'** के समय **जगदम्बा** को जगाने के लिए जो **'बोधन-मन्त्र'** पढ़ा जाता है, वह इस बात का प्रतिपादक है कि **ब्रह्मा** ने

अकाल में **जगदम्बा** को जगाया था—

रावणस्य बधार्थाय, रामस्यानुग्रहाय च।
अकाले ब्रह्मणा बोधो, देव्यास्त्वयि कृतः पुरा।
अहमप्याश्विने षष्ठ्यां, सायाह्ने बोधयाम्यतः।।
तस्मादहं त्वां प्रति-बोधयामि, विभूति-राज्य-प्रतिपत्ति-हेतोः।
यथैव रामेण हतो दशास्यस्तथैव शत्रून् विनिपातयामि।।
अशेष - सुख - लाभाय, नाना - विभव - हेतवे।
नेतव्यः श्वो हिते गेहे, सर्व - काम - प्रदो भव।।

कहना व्यर्थ है कि यदि इस **'महा-पूजा'** की पहले से संस्थिति न होती, त्रेता में **भगवान् रामचन्द्र** के द्वारा ही इसका प्रवर्तन हुआ रहता, तो उक्त मन्त्र का स्वरूप कुछ और होता। केवल **'अकाले ब्रह्मणा बोधो'** पर ही जोर नहीं दिया जाता। इसके अलावा इस मन्त्र के अन्तिम अंश से यह स्पष्ट हो रहा है कि **त्रेता से 'शारदीय महा-पूजा' के 'नित्यत्व' पर 'काम्यत्व' का कितना गाढ़ा रङ्ग चढ़ा है और तब से उभय-रूपेण इसकी महिमा किस भाँति चरितार्थ होने लगी है!**

हिन्दू-शास्त्रों में प्राणियों के लिए तीन तरह के कर्म आचरणीय कहे गए हैं— **१ नित्य, २ नैमित्तिक** और **३ काम्य।** इनसे सर्व-साधारण परिचित हैं, अतः इनकी विशेष व्याख्या यहाँ नहीं की जाती। शास्त्रों से सिद्ध है कि इन तीन कर्मों में **'नित्य'** की कभी उपेक्षा नहीं की जा सकती। अगर की जाय, तो प्राणियों को निःश्रयेस की सिद्धि नहीं मिलती, उसका पतन होता है, इहलोक-परलोक बिगड़ता है। **नित्य-कर्म** चिर शाश्वत है, निश्चित समय पर निश्चित फल देनेवाला है, उससे किसी की तात्कालिक इच्छा की पूर्ति नहीं हो सकती। उदाहरण के लिए **'सन्ध्योपासन'** ब्राह्मण का **नित्य अनुष्ठेय कर्म** है।

'नैमित्तिक कर्म' अवसर-विशेष पर ही आचरित होते हैं, पर इनके न करने पर भी अधर्म होता है। **'काम्य'** के लिए ऐसा कोई बन्धन नहीं है। वह पुरुषार्थियों, भोगार्थियों के द्वारा ही आचरित होता है। उसके आचरण से अभीष्ट फल मात्र की तत्काल प्राप्ति होती है, किन्तु उसके अनाचरण से न तो पाप लगता है, न कुछ हानि होती है। इसीलिए **'काम्य-कर्म'** हीन-कोटि का ठहराया गया है। इसमें त्याग, तपस्या, परमार्थ की भावना कम, स्वार्थ की प्रधानता रहती है। **'काम्य-कर्म'** का उपासक अपने **उपास्य की कृपा** चाहता जरूर है, पर उसी पर निर्भर नहीं रहता, दबाव डालता है। सर्व-साधारण, संसार-सुख-भोगेच्छुओं के लिए **'काम्य-कर्म'** अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण है, फिर भी यह **'नित्य'** की तरह उदात्त नहीं है, सब इस कर्म का अनुष्ठान कर भी नहीं सकते।

अतः यदि **भगवान् रामचन्द्र** ही इस **'महा-पूजा'** के प्रवर्तक होते—तो यह **पर्व** महत् पदवी की प्राप्ति नहीं कर सकता था; न प्राणि-मात्र, नगर-नगर, घर-घर के लिए करणीय ही कहा जाता; न इसके त्याग से पाप-भाजन, कल्याण-विरहित ही बनना पड़ता, जैसा कि शास्त्रों में स्पष्ट कहा गया है। क्योंकि **भगवान् रामचन्द्र** की **काम्य-विधि** काम्य ही रहती, उसमें **'नित्यता'** नहीं आ सकती और जब **'नित्यता'** ही नहीं आती, तब यह **चिर-शाश्वत, उदात्त, पुण्य-पर्व** ही कहाँ से होता! पर शास्त्र में तो स्पष्ट लिखा है—

अकुर्वाण इमां पूजां, शारदीं मम पुष्कलाम्।
प्रत्यवाया पितृन् देवान्, पीडयेच्चिर-नारकी।।

अर्थात्—जो मेरी इस अत्यन्त उत्कृष्ट **'शारदीय महा-पूजा'** का आचरण नहीं करता,

वह पापी देवता और पितरों को सन्ताप देता है और चिर-काल तक नरक-यातना का भोग भोगता है।

शारदीयामिमां पूजां, न करिष्यन्ति ये नराः।
ते पति-यन्ति निरये, पापाः पूजापहारकाः।।

अर्थात्—**'शारदीय महा-पूजा'** को न करनेवाले महा-पापी हैं, उन्हें नरक भोगना पड़ता है। 'महा-काल-संहिता' इत्यादि वाक्यों से इस **'महा-पर्व' की नित्यता** स्वतः प्रतिपादित है।

'शारदीय महा-पूजा'— सनातन, अनादि है, इसके स्पष्ट प्रमाण भी शास्त्रों में ही हैं। जिस **'मार्कण्डेय-चण्डी'** का माहात्म्य विश्व-विश्रुत है, घर-घर जिसका प्रचार है, उसी में **'देवासुर-संग्राम'** के बाद देवताओं को अभीप्सित वर और उपदेश देते हुए स्वयं जगदम्बा ने कहा है—

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं, श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः।।
सर्व-बाधा-विनिर्मुक्तो, धन-धान्य-सुतान्वितः।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः।।

ध्यान देने की बात है। इस महत् **'देवी-वाक्य'** में वर्ष-वर्ष करणीय इस **'शरत्कालीन महा-पूजा'** का, **देवी-माहात्म्य-श्रवण** का और उससे उपलब्ध होनेवाले अभीप्सित फलों का स्पष्ट सङ्केत है। कोई-कोई टीकाकार **'वार्षिकी'**-शब्द से **चैत्र-मासीय 'वासन्ती नव-रात्र'** का अभिप्रेत होना सिद्ध करते हैं, पर इससे **शरद्-काल की 'महा-पूजा'** की श्रेष्ठता में कुछ बाधा नहीं पहुँचती। इतना जरूर लक्षित होता है कि **वासन्ती** की अपेक्षा **शरद्-काल के 'नव-रात्र'** का महत्त्व उन दिनों भी 'अपेक्षा-कृत' अधिक था और वह उस समय भी **'महा-पूजा'** के रूप में ही प्रतिष्ठित थी।

जिस समय दाक्षायणी **जगन्माता सती** के तिरोभाव से शोक-मग्न **भगवान् शङ्कर** अपने कर्तव्याकर्तव्य को भूल कर घोर तपस्या में संलग्न थे, **देवताओं** का समूह **तारकासुर** के उत्पीड़न से त्राहि-त्राहि कर रहा था, उस समय संसार की पीड़ाओं को हरने के लिए **देवताओं की उपासना** से सन्तुष्ट **जगदम्बा** ने **गौरी**-रूप में नग-राज **हिमालय** के घर जन्म ग्रहण किया था। **हिमालय की भक्ति** को चरितार्थ करने के लिए उसकी प्रार्थना पर **जगन्माता** ने उसे न केवल अपने अलौकिक **विराट् रूप का दर्शन** ही कराया था, बल्कि दिव्य **'गीता'-ज्ञान (भगवती गीता)** का उपदेश भी दिया था। उस **'भगवती गीता'** में प्रसङ्गात् जहाँ जगदम्बा ने अपने अनेक दिव्य स्थानों का वर्णन किया है, वहीं अपने परम प्रीति - प्रद भक्तों के लिए काम-कल्पद्रुम अनेक **पुण्य-पर्वों की चर्चा** भी की है। उनमें भी सर्वाधिक महत्त्व **'नव-रात्र'** को ही दिया गया है—**'नव-रात्र-द्वयं चैव, व्रतं प्रीति-करं मम।'**

कहना व्यर्थ है कि उक्त दोनों घटनाएँ सतयुगी न सही, तो कम-से-कम **रामावतार** से बहुत पहले की हैं। अतः यदि **'शरत्-कालीन नव-रात्र'** का प्रवर्तन या प्रचार त्रेता-युग में ही हुआ होता, तो उसके पहले के प्रमाण-वाक्यों में उसका स्थिति - बोधक उल्लेख कहाँ से मिलता?

'शारदीय महा-पूजा'— शक्ति-पूजा है। **पुण्य-सञ्चय** का यह **सर्वोत्कृष्ट काल** है। **'शाक्त-धर्म'** के मूल में जिस तरह **'अद्वैत-वाद'** है, उसी तरह वह **विश्व-बन्धुत्व, साम्य-वाद** का प्रतीक भी है। कोई भी राष्ट्र सबल, सार्व-भौम विजय का अधिकारी तभी हो सकता है, जब राष्ट्र की सारी जातियाँ एक शृङ्खला में आबद्ध हों। फूट-विरोध, दम्भ-दुराग्रह, मोह-मद-मत्सर के

रहते केवल **'विजय-यात्रा'** की कोई चरितार्थता नहीं हो सकती। जो **'विजया-दशमी'** को जाति-विशेष का वस्तु-त्योहार कहते हैं, वे इस **'महा-पर्व' के निगूढ़-तम रहस्य** को हृदयङ्गम नहीं कर पाते। वे **'यात्रा'** पर, **राम-रावण-संग्राम** पर तो लक्ष्य रखते हैं, पर **'विजया'**—शाक्तों की प्रशस्त **'होलिका'** अणु-अणु, कण-कण को एक स्नेह-सूत्र में आबद्ध करनेवाला **महिमा-मय महोत्सव** है, इस पर ध्यान ही नहीं देते।

देश की दुर्दशा का, उसकी अधो-गति का यही कारण है कि जितने करणीय **सत्कर्म** हैं, उनकी ओर हमारी उपेक्षा ही रही है और **विश्वास-श्रद्धा का ह्रास** हो रहा है। सुधार संहार कर रहा है। जब हमारा मन निष्कलुष था, सच्ची भावना थी, आचरणीय कर्मों के करने की प्रवृत्ति थी, तब हमारा गौरव भी था। हमारे देश का उत्कर्ष और अभिमान भी था। अब केवल थोथी दलीलें, घृणा-जुगुप्सा, अनाचार, हृदय-दौर्बल्य है, तब वैसा ही परिणाम, वैसी ही काल की प्रवृत्ति भी है। **'शक्ति-सञ्चय'**, फिर कहाँ से सम्भव है?

समय बदल रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि पुनः इस **'महा-पूजा'** की पूर्व-पद्धति अपनाई जाए, इसे **'राष्ट्र-धर्म' का प्रतीक** बनाया जाए, इसकी **महा-महिमा का प्रचार** किया जाए। तभी **शक्ति का वास्तविक सञ्चरण** होगा, **भेद-भाव** मिटेगा, **ऐक्य** स्थापित होगा, **हृदय-दौर्बल्य** दूर होगा, **विजया— विजय** देगी, **विजय-यात्रा— वास्तविक विजय-यात्रा** बनेगी।

'शारदीय महा-पूजा' प्रति-वर्ष आती है। वह **अनादि** है, वह **अलौकिक** है, वह प्राणि-मात्र को **जीवन-शक्ति देनेवाली** है। जिस दिन भारतीय इसकी महत्ता को हृदयङ्गम करेंगे, विधि-पूर्वक घर-घर **'नव-रात्र-व्रत'** का अनुष्ठान होने लगेगा, **जगन्माता दुर्गा** उसी दिन अपनी अगाध करुणा की वृष्टि करेगी। भारत पुनः पूर्व-उत्कर्ष प्राप्त करेगा। आज संसार की जैसी अधो-गति, जैसी दुर्दशा, जैसा विपन्न भाव है, उससे परि-त्राण करनेवाली एक-मात्र **परा-शक्ति** है। यह अवसर चूकने से **कल्याण का मार्ग** और भी अवरुद्ध होगा। **साम्प्रदायिक भावनाओं** के लिए यहाँ कहीं स्थान नहीं है। इस **'महा-पूजा'** से बढ़ कर कोई श्रेष्ठ आचरण नहीं, कोई बड़ा यज्ञ नहीं, कोई बड़ी तपस्या नहीं, यह **काम-कल्पद्रुम** है। यह **भुक्ति-मुक्ति देनेवाली** है। मन की अनन्त श्रद्धा के साथ इसका विधि-वत् पालन कीजिए और कराइए। फिर इसका प्रभाव देख लीजिए। **'शक्ति-पूजा'** ही भारत को शक्ति-सम्पन्न बना सकती है।

'शारदीय महा-पूजा'

'शारदीय महा-पूजा' प्रति-वर्ष आती है। वह **अनादि** है, वह **अलौकिक** है, वह प्राणि-मात्र को **जीवन-शक्ति देनेवाली** है। जिस दिन भारतीय इसकी महत्ता को हृदयङ्गम करेंगे, विधि-पूर्वक घर-घर **'नव-रात्र-व्रत'** का अनुष्ठान होने लगेगा, **जगन्माता दुर्गा** उसी दिन अपनी अगाध करुणा की वृष्टि करेगी। भारत पुनः पूर्व-उत्कर्ष प्राप्त करेगा। आज संसार की जैसी अधो-गति, जैसी दुर्दशा, जैसा विपन्न भाव है, उससे परि-त्राण करनेवाली एक-मात्र **परा-शक्ति** है। यह अवसर चूकने से **कल्याण का मार्ग** और भी अवरुद्ध होगा।

शारदीय नवरात्र-रहस्य

❖ **'कौलाचार्य' पण्डित नथमल दाधीच**

'शारदीय नव-रात्र' का पूजन **'कन्या-भाव'** से सम्पन्न होता है। कुछ मास पूर्व **चैत्र** के **वसन्तोत्सव में भगवती-शक्ति का आविर्भाव** साधक के समक्ष हुआ था। अब इस अवधि में उसका और भी वर्द्धन हुआ है। वर्द्धित भक्ति के निकट चिर-यौवना **उमा—'कन्या-भाव'** धारण कर लेती है। सन्तान के वृद्ध होने पर जैसे माता कन्या-स्थानीया हो जाती है, उसी प्रकार वृद्धा भक्ति के निकट **उमा** भी **'कन्या-भाव'** धारण करती है। सन्तान द्वारा पालनीया माता सन्तान को जिस भाव से देखती है, आज **उमा** भी वृद्ध भक्त को उसी प्रकार देखती है।

भक्त भी इसीलिए **'वात्सल्य-भाव'** से अपने घर में **देवी का आवाहन** करता है। एक दिन **'मातृ-भक्ति'** से उद्‌बोधित होकर वह जिसका पूजन करता था, आज **'कन्या-वात्सल्य'** से उसका अपने **हृदय-मन्दिर** में आह्वान करता है। वह आह्वान अति मधुर है। इससे मधुरता की ध्वनि व्यञ्जित होती है। यह आगमन **हृदय का आह्वान-गीत** है। देवी भी भक्त के हृदय में आकृष्ट हो रही है। यही **परस्पर आकर्षण की मिलन-ध्वनि** भारत-वासियों का **'शारदीय दुर्गा-पूजनोत्सव'** है।

'आगमनी'—आकर्षण-शक्ति है। **'बोधन'—शक्ति का उदय** है। **प्रतिष्ठा-स्थापन** हो, **मिलन** का फल—**'दश-भुजा दुर्गा'** है।

श्रीदुर्गा देवी की आराधना के प्रसङ्ग में **'राम-रावण-युद्ध'** के व्यापार का विश्लेषण करने पर जिस प्रकार की साधना-प्रणाली दृष्टि-गत होती है, उसको **ज्ञान-वैराग्य-युक्त 'योग-पथ'** कहा जाता है। **दशेन्द्रिय-धारी 'मन' (दशानन)** से कवलित **'आत्म-शक्ति' का उद्धार, महा-शक्ति की कृपा** से कर **आत्म-स्वरूप की प्रतिष्ठा** ही इस साधना-प्रणाली का लक्ष्य है।

दूसरी ओर **उमा-मेनका** के उपाख्यान से **'शुद्ध भक्ति'** का कोमल पथ प्रकट होता है। वसन्त के विमल सौन्दर्य को भक्त साधक ने जिस **'मातृ-भाव'** से अनुभव किया था, वही आज चरमोत्कर्ष को प्राप्त होकर **'वात्सल्य-भाव'** में परिणत हो रहा है। इस वात्सल्य से पाषाण भी पिघल जाता है। इसी वात्सल्य से ऋषि-गण **ईश्वर को हृदय** में स्थापित करते हैं। पुराणों में **यशोदा का वात्सल्य** इसी प्रकार चित्रित है, किन्तु जो वात्सल्य कन्या में स्थापित है, उस वात्सल्य में निमग्न होकर ऋषि-गण ईश्वर को और भी **घनिष्ठ-भाव** से देखते हैं। तब **यशोदा-भाव** तिरोहित होकर **मेनका का भाव** उदय होता है।

माता जिस प्रकार पुत्र से छिपाकर कन्या के स्नेह-पाश में आबद्ध होकर उसकी तृप्ति-हेतु गोपनीय समस्त धनादि उसको प्रदान करती है, भक्त भी उसी प्रकार **हृदय खोलकर सकल सुन्दर वस्तु माँ को अर्पण** करता है। **शारदीय नव-रात्र के दुर्गा-पूजन** में भक्त का यही प्रगाढ़ अनुराग प्रकट होता है।

पुत्र की अपेक्षा कन्या के प्रति माता का स्नेह अधिक होता है क्योंकि कन्या-हृदय पुत्रापेक्षा कोमल होता है। फिर कन्या बड़ी होने पर पर-गृह ही अधिक रहती है। परोक्ष रहने के

कारण माता कन्या के लिए अधिक व्याकुल रहती है। वह कन्या के हित-हेतु सतत अन्यमनस्का रहती है। अतः वह समय-समय पर कन्या को अपने पास लाने का अधिक प्रयत्न करती है। इस यत्न से प्रकट है कि कन्या कितनी आदरणीया है।

कन्या के भी मन में माता के मिलन-हेतु उत्सुकता रहती है। कारण श्वसुर-गृह का समस्त दुःख और कष्ट वह माता से बताती है। दोनों एकत्र होकर नेत्रों से अश्रु-वर्षा कर वक्षः-स्थल आर्द्र कर लेती हैं। जब कन्या ससुराल जाती है, तब मातृ-हृदय करुण क्रन्दन कर उठता है। कन्या की अवस्था भी माता से अधिक ही करुणा-मय हो जाती है। कन्या यदि सुख-पूर्वक है, तो भी माता पूर्ण-रूप से सुखी न होकर कुछ अंश में ही उसको शान्ति रहती है, किन्तु यदि कन्या भिखारिन हो गई है, तो मातृ-हृदय में घोर अशान्ति छा जाती है।

पुराण-कार ने **उमा** और **मेनका** को इसी प्रकार चित्रित किया है। **उमा** के गृह नहीं है, अन्न-वस्त्र नहीं है, स्वामी पागल है, आदर करके **सती** को हर समय मस्तक पर रखते हैं। इसी कारण **मेनका** अशान्त एवं कातरता-परायण रहती है। क्षण-मात्र भी शान्ति नहीं है। हर समय **उमा** के लिए चिन्तित रहती है। **मेनका** राज-रानी है, इसी कारण उसको अधिक कष्ट है। धनैश्वर्य का उसके पास अभाव नहीं है। ऐसे परिवार की एक-मात्र कन्या भिखारी की भार्या है। उसकी माता सुख-पूर्वक गृह में कैसे रह सकती है? अतः वह धन, रत्न, वसन, भूषण, आहार एवं निद्रा छोड़कर दिन व्यतीत करती है।

अपने **इष्ट-देवता** के लिए साधक को इसी प्रकार की व्याकुलता चाहिए। **मेनका** को आदर्श मानकर भारतीय-गण इस **'शारदीय नव-रात्र'** के उत्सव में अपने हृदय में **'आगमनी'** अङ्कित करते हैं। आश्विन की इस **'आगमनी'** में उक्त कातरता उद्‌बोधित होती है। **'मातृ-भक्ति'** में ऐसी व्याकुलता नहीं होती, जैसी माता के हृदय में कन्या के लिए रहती है। एक पल का विरह भी वह सह नहीं सकती।

'भक्ति' की यह एकान्तिकता प्रति वर्ष उद्‌बोधित करने के लिए **'आगमनी'** का ज्ञान भारत-वासी के हृदय में सङ्गीत की तरह ध्वनित होता रहता है। जब भी **'आगमनी'** का स्वर-सङ्गीत भारतीयों के श्रवण-पथ में प्रवेश करता है, तभी वे लोग **'दुर्गोत्सव'** के लिए अधीर हो उठते हैं।

विरह के अधीर साधक **'भक्ति'** की तरफ उन्मुख हो **'दुर्गोत्सव'** की प्रतिष्ठा करता है। जब साधक देखता है कि **चित्त—सत्त्व-गुण** को प्राप्त होकर **शरद् का शुभ्र सौन्दर्य** प्रकट हो रहा है, **आशा— अनाहत-स्वर से गान** कर रही है, तब साधक का अन्तर **आनन्द** से नाच उठता है। क्रमशः दश-दिक् प्रकाश कर, **महा-शक्ति की सकल मूर्ति** ही **'दुर्गोत्सव'**-रूप से उदय हो जाती है।

तब साधक स्वयं को भूल जाता है। उसके **अन्तर में भगवती दुर्गा-मूर्ति से सात्त्विक सौन्दर्य-पूर्ण 'ऐश्वर्य'** और **लक्ष्मी-मूर्ति से 'दिव्य-ज्ञान'** एवं **सरस्वती-मूर्ति से अदम्य 'वीरत्व'** प्रकट करती है, जिससे समस्त **पाप-शक्ति-स्वरूप महिषासुर** विजित होता है। वीरत्व से सम्पूर्ण **'रिपु-कुल'** वशीभूत होता है।

कार्तिकेय-मूर्ति और महा-शक्ति-प्रसूत सिद्धि के **'गणेश्वर'** अग्नि-वत् उज्ज्वल प्रतिमा से प्रत्यक्ष होते हैं। साधक के चारों ओर **शोभा-सौन्दर्य का भण्डार** विकीर्ण हो जाता है। उसके हृदय में

दृढ़-भक्ति एवं **अहैतुक प्रेम** उत्पन्न होता है।

दिव्य-ज्ञान के प्रभाव से साधक को अब अनुभव होता है कि स्त्री-पुत्र, धनैश्वर्य—कुछ भी नहीं है। यहाँ अपना कुछ नहीं है—सब कुछ ही **'महा-शक्ति'** का है। वह **चराचर-विश्व-व्यापिनी विश्वेश्वरी** ही सत्य है। **कैवल्य-ज्ञान** से असत्य दूर होकर साधक के अन्तर में प्रकाश-मण्डल की मध्य-वर्तिनी उस **नित्य लीला-मयी की प्रेम-लीला-माधुर्य-मूर्ति में साधक अनन्त-काल के लिए लीन** हो जाता है। इस प्रकार **'शरदोत्सव'** का **'दुर्गा-पूजन'** एवं **विजया की प्रतिष्ठा** साधक-हृदय में स्थापित होती है।

साधना के फल-स्वरूप भक्त के हृदय में ठीक इसी प्रकार की अनुभूति होती है। भारतीय ऋषियों ने समाज के लिए **साधना-सिद्धि** का यह आदर्श नयन-छवि रूप से जागरूक करना आवश्यक समझकर, प्रति-वर्ष **शरद् के शुभ्र सौन्दर्य में 'दुर्गा - पूजनोत्सव'** - रूप से **प्रतिमा प्रतिष्ठित करके पूजन** करने का निर्देश किया है। हृदय के उक्त **आभ्यन्तरीय व्यापार का बाह्य विकास ही— 'दुर्गा-पूजनोत्सव'** है।

जिस भाव से भारतीय सन्तान **माँ का पूजन** करती आई है, हम आज उस भाव को भूल गए हैं और **बाह्य सौन्दर्य के उपासक** हो रहे हैं। यह पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा का प्रभाव है। हम **माँ के नाम से कामना-पूर्वक पूजन** कर, कुछ समय **बाह्य आमोद-आह्लाद** पाकर उत्साहित होते हैं, किन्तु **दशमी** के दिन सब कुछ **विसर्जित** कर **'विजया' की प्रतिष्ठा** नहीं कर पाते।

शरद् के सुख-मय सौन्दर्य में माँ का स्वरूप जानना; दूर प्रवास में जननी की कथा-स्मरण होने पर सन्तान को जिस प्रकार की आकुलता होती है, उसी प्रकार की आकुलता से **व्याकुल-प्राण हो 'माँ-माँ' स्वर से सुप्त माता को जगाकर उठाना** होगा। माँ आप लोगों को गोद में लेकर **स्वाधार-निद्रिता** है। अतः **सुप्ता माता को जगाने हेतु बोधन** करें, तभी **'विजया'** की प्रतिष्ठा होगी।

'दुर्गा-पूजनोत्सव' के दो प्रधान अङ्ग हैं—एक **'आगमनी'**, अन्य **'विजया'**। **'आगमनी'** में **'कैलाश-धाम'** से माँ का **'हिमालय-गृह'** में आगमन एवं **सप्तमी, अष्टमी** व **नवमी**—इन तीन दिन **पितृ-गृह में माँ की उपस्थिति, दशमी** को **'विजया'** का विसर्जन अथवा **माँ का 'स्वामी-गृह-गमन'**।

हम लोग शैशव-काल से ही **माँ का यह आगमन, उपस्थिति, गमन** या **विसर्जन** देखते आए हैं। धनी धन के प्रयोग से, विलासी विलास-व्यसन से, रूप-वान रूप-साज से पूर्ण-विधान करके, पूजन के इन दिनों को खूब आमोद-आह्लाद-सहित धूम-धाम से व्यतीत कर अपने मन में **आनन्द का अनुभव** करते हैं कि **माँ का पूजन** बड़े धूम-धाम से सम्पन्न हुआ है; समय और अर्थ का यथेष्ट सदुपयोग हुआ है, किन्तु प्रकृत-पक्ष में हिन्दुओं के इस **'दुर्गा-पूजनोत्सव' का उद्देश्य** क्या है? क्या **बाह्य आमोद-प्रमोद** मात्र ही इसका उद्देश्य है?

जिन ऋषि-गण ने एक दिन अपनी ज्ञान-गरिमा से जगत् में शीर्ष-स्थान ग्रहण कर रखा था, उनका मस्तिष्क क्या केवल इतना ही विवेक-युक्त था कि एक बालक की तरह **'क्रीड़ा-कौतुक-व्यवस्था'** समाज के लिए करें? ऐसा कभी भी सम्भव नहीं है।

पुण्य-भूमि भारत-वर्ष **'रत्नाकर'** है। उसके रत्न-गर्भ में बहु-काल से प्रखर **श्री-शक्ति-सम्पन्न महा-मनीषी-गण** जन्म ग्रहण करते आए हैं।

अतः उनका **अनुष्ठेय कर्म— अ-वैज्ञानिक** या **तथ्य-हीन** नहीं हो सकता। उनके द्वारा अनुष्ठित प्रत्येक कार्य में—क्रिया-कलाप में **परम सत्य** निहित है। वे लोग **सत्य-स्वरूपा 'महा-शक्ति'** को जानते थे और **विमल सत्य की उपलब्धि** भी की थी एवं **त्रि-कालज्ञ** थे। अतः वे लोग अपने साधारण वंश-धरों के लिए **बाह्य आमोद-प्रमोद के भीतर सत्य का गोपन** कर गए हैं।

भारतीय ऋषि यह भली प्रकार जानते थे कि एक दिन हमारे वंश-धर **सत्य की अमल-धवल विमल ज्योति** को भूलकर **तामसिक** और **राजसिक भाव** से आत्म-सम्मिश्रण कर **रूप के मोह** में डूब जाएँगे; वे **अपनी सत्ता** भूल कर अपने को भूल जाएँगे। **ऋषि-गण** उदार थे। अतः **बाह्य आमोद-प्रमोद के भीतर रहस्य-मय 'सत्य' का गोपन** वे कर गए हैं, जिससे आमोद-प्रमोद करते-करते स्वर्ण-प्राप्ति की तरह एक दिन किसी के हृदय में **'सत्य-प्राप्ति'** की पिपासा जाग्रत हो जाए और वह **सत्य का अनुसन्धान** कर सके।

'आगमनी' का तात्पर्य है— **माँ का पितृ-गृह में आगमन** अर्थात् **जब जीव त्रि-ताप-ज्वाला से दग्ध होता है एवं उसका हृदय पाप-ताप की असह्य ताड़ना से अधीर हो उठता है; जब जीव समझ जाता है कि भोग-सुख से तृप्ति नहीं है, सन्तोष नहीं है, तभी उसके प्राणों में 'सत्य' के अनुसन्धान की प्रबल इच्छा जागृत होती है। उसका हृदय सत्य की प्रतिष्ठा करने हेतु व्याकुल होगा। यही 'आगमनी' या माँ का आह्वान है एवं यही है 'कैलास' में गौरी' को लाने के लिए 'हिमालय' का गमन और 'मेनका' का कर्तृक-बोधन।**

'सप्तमी-पूजा' अर्थात् इस दिन माँ की **प्रथम पूजा— सत्य का ईषत् आभास** है, जैसे उषा के आगमनी-समय पूर्व में **ईषत्-आलोक** होता है और अन्धकार क्रमशः दूर होता है। **'सप्तमी-पूजन'** से भी इसी प्रकार **साधक के चिदाकाश में ज्ञान-रवि का ईषत् उन्मेष होकर तामसिक भाव विदूरित** होता है।

'अष्टमी' अर्थात् पूर्व-दिशा रक्त-वर्ण-रञ्जित हो गई है और अन्धकार भी प्रायः दूर हो गया है। इस समय साधक भी जगत् में **एक स्तर ऊर्ध्व** में उठा है, **तामसिक भाव** दूर हुआ है एवं **राजसिक भाव का पूर्ण विकास** प्राप्त हुआ है। इस स्थान में साधक की अज्ञानता-वश आधार न होने से पतन की अत्यधिक सम्भावना रहती है। यह स्थान **राजसिक-सात्त्विक भावों का सङ्गम-स्थल** है। अतः **साधक की भीषण परीक्षा** का यह स्थल है। इसलिए **'अष्टमी-नवमी-पूजन'** के संयोग स्थल को **'सन्धि-पूजन'** कहते हैं।

'नवमी' में **सम्पूर्ण-रूप से सूर्य का उदय** हो गया है, **अन्धकार का पलायन** भी हो गया है और समस्त **बाधा-विघ्न** दूर हो गए हैं। इस समय **किसी भी विषय में द्विधा नहीं** है। इसीलिए **'नवमी-पूजन'** का इतना समारोह है। साधक इस अवस्था में **एक और स्तर ऊर्ध्व में** उठ गया है। इस स्थल से साधक के **पतन की आशङ्का नहीं** है क्योंकि **तामसिक** और **राजसिक भाव** सब पूर्ण रूप से परिष्कृत हो गए हैं। साधक ने इस समय **सत्य के विकास** को उपलब्ध किया है। साधक **माँ की मनो-मयी मूर्ति** को **हृदय-मन्दिर में प्रत्यक्ष** देखता है, अतः उसके **आनन्द की सीमा नहीं** है। इसलिए **'नवमी-पूजन'** का इतना आडम्बर, इतना आयोजन और समारोह है।

'दशमी' में **विजया** या **विसर्जन** की अवस्था में साधक ने **सर्व-विषय में सफलता** प्राप्त कर ली है और अपने **अभीष्ट साधन में कृत-कार्य** हो गया है। अथवा साधक ने **बाह्य आडम्बर परित्याग कर प्रत्यक्ष सत्योपलब्धि** कर ली है और **हृदय में सत्य की प्रतिष्ठा** स्थापित की है।

(शेष पृष्ठ ४६ के नीचे)

शारदीय महा-पूजा-महोत्सव

❖ श्री पण्डित सत्यानन्द झा

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं, श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः॥

मार्कण्डेय-पुराणोक्त **'देवी-माहात्म्य'** में कहा गया है कि **'शरत्-काल** में जो **वार्षिक महा-पूजा** की जाती है, उसमें हमारा यह माहात्म्य भक्ति से जो श्रवण करता है।' इससे यह सिद्ध होता है कि **देवी-माहात्म्य का पाठ** करना **शारदीय महा-पूजा** का एक अङ्ग है।

'महा-काल-संहिता' में कहा गया है—

होमः सप्तशती-पाठो, बलिर्वादित्र-वादनम्।
चतुरङ्गमिदं शस्तमासीषे कालिकार्चने॥

आश्विन मास में **कालिकार्चन** में **१ होम, २ सप्तशती-पाठ, ३ बलि-दान** और **४ गीत-वाद्य—** ये चार अङ्ग हैं, केवल **पाठ** मात्र ही नहीं।

शारदीय महा-पूजा के तीन प्रकार के भेद 'कालिका-पुराण' में कहे गए हैं—

उग्र-चण्डा च या मूर्तिरष्टादश-भुजाऽभवत्।
सा नवम्यां पुरा कृष्ण-पक्षे कन्या-गते रवौ॥
प्रादुर्भूता महा-घोरा, योगिनी-कोटिभिः सह।
अतोऽत्र पूजनीया सा, सर्वैरपि सुरासुरैः॥

अर्थात् **आश्विन कृष्ण नवमी** तिथि में **अष्टादश-भुजा उग्र-चण्डा** मूर्ति **योगिनी-गण**-सहित प्रादुर्भूत हुई थी। अतः समस्त सुरासुर-द्वारा पूजनीया है। 'महा-काल-संहिता' में लिखा है—

(पृष्ठ '४८' का शेषांश)

इस स्थल में **'विजया'** या **'विसर्जन'** का अर्थ **माँ का त्याग** नहीं है। **'विसर्जन' का अर्थ** है— **राजसिक, तामसिक भावों का मूलोच्छेदन** अर्थात् **काम, क्रोध, लोभ, मोह, हिंसा, कुटिलता, मिथ्या प्रतारणा, प्रवञ्चनादि, असत्य के उच्छेद का साधन** करने पर साधक सत्त्व-गुण-सम्पन्न होकर **सत्त्व (महा-शक्ति) में प्रतिष्ठित** हो गया है या **माँ को हृदय में प्रतिष्ठित** कर लिया है। अब **साधक ने माँ को प्राप्त कर लिया** है। अतः **बाह्य पूजन** केवल लोक-संग्रह-हेतु ही आवश्यक है। वस्तुतः उसका प्रयोजन नहीं है। अतः **दशमी** के दिन **प्रतिमा-विसर्जन** कर **विजया या माँ की प्रतिष्ठा का अनुष्ठान** सम्पन्न किया जाता है।

एक स्थान में एक समय में दो विरुद्ध वस्तुएँ नहीं रह सकतीं, यह स्वतः सिद्ध है। प्रत्येक कार्य में **असत्य का विसर्जन** न होने पर, **सत्य की प्राप्ति** कैसे होगी एवं **विजय-लाभ** भी कैसे होगा? अतः **'प्रतिष्ठा'** ही **'विसर्जन'** या **'विजया'** और **'विसर्जन'** ही **'प्रतिष्ठा'** है।

'विजया' से हम लोग **सत्य में प्रतिष्ठित होकर भेदाभेद, शत्रु-मित्र, अपने-पराए का विस्मरण कर समग्र समाज-जगत् में माँ के ही स्वरूप की अभिव्यक्ति समझ कर जगत् में अपने को 'मातृ-मय'** भावना करते हैं।

अतः आओ बन्धु! **'विजया'** के शुभ मिलन में भाई-भाई आलिङ्गन कर एक दूसरे के अपराध भूल कर **पाशविक वृत्ति-समूह** को सदा के लिए विदूरित कर **'जय माँ विजये'** नाम से **विजय-दुन्दुभी** बजाते-बजाते **हृदय में विजया की प्रतिष्ठा** कर **हम महा-शक्ति के पुत्र महा-शक्ति लाभ करें।** ह्रीं श्रीरस्तु।

शारद्यां तु त्रयो भेदाः, कथ्यन्ते ते मयाऽधुना।

आश्विनासित-पक्षस्य, नवमी या शिवर्क्ष-युक्।।

बोधयित्वेश्वरीं तस्यां, शरदर्चनमारभेत्।

यावत् स्यान्नवमी शुक्ला, तावत् पूजा प्रवर्त्तते।।

अर्थात् **आश्विन कृष्ण** आर्द्रा-नक्षत्र-युक्त **नवमी** में **बोधन** करके **शुक्ल-नवमी** तक **दुर्गा का पूजन** होता है—

नक्षत्राणामलाभे तु, केवलासु तिथिष्वपि।

करवाले बोधयेयुः, मध्याह्ने शङ्ख-निस्वनैः।।

अर्थात् नक्षत्र-प्राप्ति न होने से केवल **नवमी** तिथि के **मध्याह्न-काल में शङ्खादि वाद्य-वादन** करके **बोधन** करना चाहिए। वहीं यह भी लिखा है—

प्रतिपद्येव शुक्लायां, बोधयित्वा सुरेश्वरीम्।

अभ्यर्चयेन्नवाहानि, तन्त्र - पौराणिक-क्रमैः।।

उदीरितो द्वितीयोऽयं, तृतीयं कथयाम्यथ।

सायाह्ने बिल्व-शाखायां, षष्ठ्यां देवीं प्रबोधयेत्।।

प्रातः प्रवर्त्तते पूजा, सप्तम्यादि - दिन - त्रये।

इयं हि शारदी पूजा, मूर्ति-भेदात् त्रिधा मता।।

अर्थात् **शुक्ल प्रतिपदा में बोधन** करके **महा-नवमी** तक तन्त्र व पुराण-मत से **देवी-पूजा** करना द्वितीय क्रम है। **षष्ठी तिथि** के सायं-काल में **बिल्व-शाखा** में और अगले दिन के प्रातः-काल से **सप्तमी आदि तीन दिन** पूजन करना— यह **शारदीय पूजा** का मूर्ति-भेद से तीसरा प्रकार है।

येऽष्टादश - भुजां देवीमुग्र - चण्डाभिधां प्रिये!

पिपूजयिषवो मर्त्या, तदुपास - गतामिताः।।

तथाऽऽश्विन-नवम्यां वै, कृष्णायां सु-समाहिताः।

अथ माध्यमिकः पक्षः, ईषस्याद्य-तिथौ सिते।।

ईश्वरीं षोडश-भुजां, भद्र-कालीति नामिकाम्।

सम्बोध्य ये पूजयेयुर्दिनानि नव वै प्रियें!।।

अश्व-युक् स्थित-षष्ठ्यां वै, शाखायां बिल्व-शाखिनः।

सायं - काले बोधयित्वा, वाद्यैरुच्चावतोद्भवैः।।

दुर्गा - देवीमर्चयित्वा, सप्तम्यादि - दिन - त्रये।

अर्थात् **अष्टादश-भुजा उग्र-चण्डा देवी** का पूजन **आश्विन कृष्ण नवमी** से आरम्भ करके **महा-नवमी** पर्यन्त, **षोडश-भुजा भद्र-काली देवी** का पूजन **शुक्ल प्रतिपदा** से **महा-नवमी** तक, **दश-भुजा कात्यायनी दुर्गा देवी** की पूजा **षष्ठी तिथि** के सायं-काल में **बिल्व में बोधन** कर **सप्तमी** से लेकर तीन दिन तक **मृण्मयी मूर्ति** या **पत्रिका** में यथा विभव विस्तर **बलि-होमादि** से पूजन करना चाहिए। 'महा-काल-संहिता' में लिखा है—

अष्टमी-नवमी-सन्धौ, कुर्वते केचिदर्चनम्।

तत्-सन्धि-पूजनमिति, पुराणादिषु कीर्तितम्।।

अष्टम्यामर्द्ध - रात्रे वा, तत्परेणापि पूजनम्।

तान्त्रिकाः केचिदिच्छन्ति, सिद्धि तूभयथाऽर्चने।।

चामुण्डा-रूप-धारिण्यास्तत्र देव्यास्तु पूजनम्।

विहितं नान्य-रूपिण्याः, कृत इत्येष निर्णयः।।

अर्थात् **अष्टमी-नवमी के सन्धि-काल में पूजन** करना पुराण-सम्मत है। **अष्टमी की अर्ध-रात्रि** में और तत्पश्चात् चार दण्ड तक पूजन तान्त्रिकों के लिए है। इस क्षण में **चामुण्डा देवी का पूजन** कर्त्तव्य है, दूसरी रूप-धारिणी देवी का नहीं।

शारदीय पूजा के सम्बन्ध में 'सौभाग्य-भास्कर' में लिखा है—

पूजनीया जनैर्देवी, स्थाने-स्थाने पुरे - पुरे।

गृहे - गृहे शक्ति-परैर्गामे ग्रामे वने-वने।।

स्नातैः प्रमुदितैर्हृष्टैर्ब्राह्मणैर्क्षत्रियैर्विशैः।

शूद्रैर्भक्ति-युतैर्म्लेच्छरन्यश्च भुवि मानवैः।।

अर्थात् **दुर्गा देवी के महोत्सव** में नगर-ग्राम-वन-निवासी समस्त वर्ण सवरादि जाति को **भगवती का पूजन** करना चाहिए। *

'ऋग्वेद' में शारदीय दुर्गा-पूजा

❖ पण्डित भूपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय

'देवी' अथवा **'शक्ति'**, **वेद** से अलग नहीं है। **'शक्ति-उपासक'** विशेष उच्चाङ्ग की साधना और उपासना करता है। **'शक्ति'** कहिए या **'देवी'** कहिए—वह **'ब्रह्म'** से भिन्न नहीं है—केवल उपासना में प्रकार-भेद-मात्र है। वास्तव में **'दुर्गा'**, **'शक्ति'** और **'शारदीया दुर्गा-पूजा'** वेदान्तर्गत ही हैं।

'वेद' में प्रत्येक **'मन्त्र'** उपासना है—मन की प्रार्थना है, शुभ कामना है। **'ऋग्वेद'** में **प्रथम सूक्त** ही **'अग्नि की उपासना'** है। **'अग्निमीडे'** अर्थात् **'अग्निं स्तौमि'**।

'दुर्गा देवी' ही **अग्नि की शक्ति** हैं। **'दुर्गा देवी'— तेजो-मयी** हैं, वेदोक्त **समस्त अग्नि-गुण-सम्पन्ना** हैं। **'दुर्गा'** का एक नाम **'ज्वाला-मुखी'** भी है। अग्नि में जो **दाहिका-शक्ति** है, वह **जगज्जननी 'दुर्गा'** ही है, यथा—

सा वाणी सा च सावित्री, विप्राधिष्ठातृ-देवता।

वह्नौ सा दाहिका शक्तिः, प्रभा-शक्तिश्च भास्करे॥

ऋग्वेदोक्ता सभी शक्तियाँ **दुर्गा** ही हैं।

निम्न-लिखित वेदोक्त मन्त्र (**ऋग्वेद** ४ सं, ४० सू, ५ ऋ) की व्याख्या से **श्रीपञ्चानन तर्क-रत्न महाशय** (**वसुमती**, आश्विन-१३४५ में) यह प्रमाणित करते हैं कि **'ऋग्वेद-काल'** में **'शारदीया दुर्गा-पूजा'** प्रचलित थी—

हंसः शुचिषद् - वसुरन्तरिक्ष,
सद्धोताऽवेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्-वर-सद् ऋत सद्-व्योम-सदब्जा,
गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्॥

हंसः (१)। **शुचिषद्** (१०)। **वसुः** (११)। **अन्तरिक्ष सत्** (१२)। **होता** (६)। **अवेत्** (२)। **इषदतिथिः** (८)। **दुरोणसत्** (५)। **नृषद्-वर सत्** (६)। **ऋत सत्** (७)। **व्योम सत्** (१३)। **अब्जा** (१४)। **गोजा** (१५)। **ऋतजा** (१६)। **अद्रिजा** (३)। **ऋतम्** (४)।

(१) हंसः (सूर्यः)। (२) अवेत् (ज्ञातवान्)। किं अवेतदाह। (३) अद्रिजा (पार्वती)। (४) ऋतम् (ब्रह्म)।

(५) दुरोणसत्—दुर्गा नाम्नि स्थिता—दुरोणे दुर्गा नाम्नि सीदति निषीदति, दुरोण दुर्गा-नाम सीदति प्राप्नोति इति वा (दुर् इति मृत्यु-हीना देवता, तद्-ब्रह्मैव, तद् वाचका दुर इति शब्दः) ओणः अपनयन-कर्ता, तद्-वाचक 'गा' शब्दः, तयोः समाहारः ओणृ—अप-नयने, इत्यस्मात् ओणु-धातोः पचादित्वादच्। दुरोणम्। एवं च श्रुतिर्गा, इत्यस्य यमर्थमाह ओणस्याषि, स एवार्थः। तेन चार्थेन 'गा', इत्यस्योपस्थित्या दुरोण-शब्दः दुर्गा-नाम-परः, श्रुतिश्च सा वा एषा देवता दूर्नाम एतासाम् देवतानाम् पाप्मानां मृत्युमपहत्य यत्रासाम् दिशामन्तस्तद्-गमयाश्चकार। (वृह —१।३।६।१०)

'श्रुतिस्य गमयां चकार उक्त मन्त्रस्य ओण'—इसका स्थलाभिषिक्त है। **'गा'**-शब्द उसी से प्रतिपाद्य है। इस **'श्रुति'** का स्पष्ट अर्थ है—**प्राण-देवता का नाम** (इस स्थान में **प्राण-देवता = ब्रह्म**)। मृत्यु उनके निकट आने में असमर्थ है। इसलिए उनका नाम **'दुर'** है। सब **देवताओं** का अर्थात् समस्त **इन्द्रियों का पाप** दूर करके दिगन्त में अपसारित किया, इस कारण यह **'गा'**

कहलाती है। **'अपसरण'** और **'अपनयन'** एकार्थक हैं। जो देवता अपने प्रवर्तित प्राणों द्वारा सब इन्द्रियों का पाप-गत करती हैं; निवारण करती हैं, अपनीत करती हैं, उनका नाम है **'दुर्गा'**। इसी कारण **'दुर्गा'**-नाम से वह प्रतिष्ठिता है— इसी कारण वे **'दुरोणसत्'** हैं।

(६) **नृषद्-वर सत्**—नृण् पुरुषान् सीदति, विशृ-णाति हिनस्ति पदलृ-विशरण गत्यवसानेषु इति सदधातो रूपम्। नृषदाम् श्वापदानां वरः श्रेष्ठः मृग-राजः सिंहः। तेन सीदति गच्छति, सिंह-वाहना।

(७) **ऋत-सत्**—ऋते पूजिते सीदति निषीदति। पूजित-शब्देन महिषासुरो ग्राह्यः, यतः एतासु मूर्तिषु सदा पाद-लग्नो नृणां सदा। पूज्यो भविष्यसि त्वं वै-इति देव्या वरो दत्तः।

(८) **इषदतिथि**—इषम्— आश्विन - मासम् दायन्ति दक्षिणायनत्वेऽपि शुद्धं कुर्वन्ति, इति इषदाः। आश्विन-मासे यावन्यस्तिथयो यस्य दैव-शोधने इति धातोः सुवन्तोपपदात् 'क'-प्रत्ययेन इषदा इत्यस्य सिद्धेः। कृष्ण-नवम्यादि महा-नवमी-पर्यन्त तिथेस्ततत्-सम्बन्धित्वमुक्तम्।

(९) तत्रापि **'होता'** हवन-निष्पादकः स्थाली पचतीविवत् हवनस्याश्रयः इति तात्पर्यम्।

(१०) **शुचिषत्**—शुचौ शुद्ध-भावे सीदति निषीदति शुद्ध-भावं प्राप्नोतीति वा, तेन मुनिरुच्यते। मुनि-शब्दस्य सप्तमी तिथिः परत्वम् निगमे दृश्यते। षण् मुन्योर्वसुरन्धयो इति।

(११) **वसुः**—वसु-शब्देनाष्टमी लभ्यते। निगम-वचनादौ प्रसिद्धेः।

(१२) **अन्तरिक्ष सत्**—ग्रह-गणाः तेन नवमी-तिथेर्लाभः। ग्रह-शब्दो नवत्व - संख्या-वाचकस्तस्य ज्योतिष-शास्त्र-प्रसिद्धेः। होतृत्वं हवनाधारत्वं, तस्यान्ते विवेशात् शुचिषदिति पदार्थः त्रयार्थं सप्तम्यादि-तिथि-त्रयेण तदन्वयः, अन्तरिक्ष-सदित्येकेन वा।

(१३) **व्योम सत्**— व्योम्नि दहराकाशे अन्तराकाशे सीदति निषीदति, बाह्य-पूजा दर्शिता। व्योम सदित्यनेन होतेत्यनेन मानस-पूजा सूचिता।

(१४) **अब्जा**—लक्ष्मीः क्षीरोदधि-जातत्वात् मम योनिरप्स्वान्तः समुद्रे इति देवी-सूक्त-मन्त्रेण तथावगमाच्च।

(१५) **गोजा**—गवि वाचि जायते प्रकाशते इति वाग्-देवी।

(१६) **ऋतजौ**—कार्तिकेय-गणेशौ, ऋतात् ब्रह्मणः पार्वती-स्वरूपात् शिव-स्वरूपाद् वा जायते ऋतजः, तौ ऋतजौ। अद्रिजा वकार-लोपात् ऋतजा अद्रिजा।

इस मन्त्र का नाम **'हंसावती ऋचा'** है। इसका भावानुवाद निम्न-लिखित है—

सूर्य-देव को यह ज्ञात हुआ कि **पार्वती— पर-ब्रह्म** हैं, **सिंह-वाहिनी** और **महिषासुर-निहित-पृष्ठ-चरणा दुर्गा-मूर्ति** हैं। **आश्विन मास** और **पावनी तिथि-समूह** से उनका विशेष सम्बन्ध है। उनमें **सप्तमी, महाऽष्टमी** और **महा-नवमी** तिथि में **होम** करने की विधि है। असमर्थ होने से केवल **महा-नवमी** के दिन ही **हवन** करना चाहिए। **स्नान, पूजा, बलि-दान** और **होम**— इस **चतुः-कर्म-मयी महा-पूजा** के चारों कर्म निर्वाह करने चाहिए।

इस **चतुः-कर्म-मयी पूजा** से यह नहीं समझना चाहिए कि यह पूजा केवल **बाह्यिक** है। इस मन्त्र में **'व्योम सत्'**-शब्द उनके समूह को सूचित करता है। **'व्योम सत्'**-शब्द साधारण व्योम नहीं है। यह **'दहराकाश'** है, जिसका भावार्थ **'सूक्ष्म हृदयाकाश'** है। **पार्वती** वहीं ध्येया हैं। व्यापिका होने पर भी देवी वहीं स्थिता हैं—उनको वहीं खोजना चाहिए।

(शेष पृष्ठ ५३ के नीचे)

शारदीय महोत्सव

❖ 'कुल-शिरोमणि' धन शमशेर जङ्गबहादुर राणा

आश्विन में प्रति-वर्ष हिन्दू मात्र के घर में **श्री जगदम्बा का अर्चन** होता है। **छहों आम्नायों से पूजित दुर्गा**-रूप की ही विशेषतः सपर्या होती है। जिन-जिनकी जिस-जिस आम्नाय की दीक्षा है, उन-उन आम्नाय से **'दुर्गा-पूजा'** होती है।

कल्प-भेद से **'दुर्गा पूजा'** तीन प्रकार से होती है। 'महा-काल-संहिता' में लिखा है कि—

'उत्तम-कल्प' में **अष्टादश-भुजा** को **'उग्र-चण्डा'** नाम से करवाल में **आश्विन कृष्ण नवमी** के मध्याह्न में प्रबोधन कर, **आश्विन-शुक्ल नवमी** तक **१६ दिन** उनका अर्चन कर **दशमी में विसर्जन** करे।

'मध्यम-कल्प' में **आश्विन-शुक्ल प्रतिपत्** के प्रातः **घट, यन्त्र** अथवा **प्रतिमा** में **षोडश-भुजा** दुर्गा का **'भद्र-काली'** नाम से प्रबोधन कर, उनका **नवमी** तक **९ दिन** अर्चन कर **दशमी में विसर्जन** करे।

'तृतीय-कल्प' में **आश्विन शुक्ल षष्ठी** में **बिल्व**-शाखा में सायं-काल **दश-भुजा दुर्गा** का **'कात्यायनी'** नाम से **बिल्व**-युग में प्रबोधन कर, **सप्तमी** में स्व-गृह में लाकर स्थापित कर उनका **तीन** दिन पूजन कर **दशमी में विसर्जन** करे।

'उत्तम-कल्प' एवं **'तृतीय-कल्प'** के विषय में सभी ग्रन्थों का एक ही मत है, परन्तु **'मध्यम-कल्प'** अर्थात् **'भद्र-काली'-कल्प** के सम्बन्ध में 'लिङ्ग-पुराण' में लिखा है कि— "**षोडश-भुजा 'भद्र-काली-कल्प'** में **आश्विन कृष्ण एकादशी** में उपवास कर, **द्वादशी** में एक-भक्त बन, **त्रयोदशी** में नक्त-भोजी होकर, **चतुर्दशी** में यन्त्र अथवा मूर्ति में प्रबोधन करे।"

'यामल' में लिखा है कि—'**प्रतिपदा** में ही **कलश-स्थापन** होना चाहिए।' इस उक्ति के अनुसार **तीनों ही कल्पों में प्रतिपत् में ही 'कलश-स्थापन'** होता है, परन्तु **'पूजा'** का विधान पृथक् है।

देवी की जैसी **'बाह्य-पूजा'** है, उसी प्रकार **'मानस-पूजा'** भी है। **'हृदयाकाश' में देव्युपासना** उनकी **'मानस पूजा'** है।

'हृदयाकाश' में देवी की अवस्थिति सूक्ष्म भी है और स्थूल भी। स्थूल-रूप में देवी— **लक्ष्मी** और **सरस्वती** हैं, **कार्तिकेय** और **गणेश** हैं। स्थूल-रूप उनकी इच्छा की महिमा है।

उपनिषद् में **पर-ब्रह्म देवी** सर्वत्र विराजिता हैं। **एकाग्र-चित्त** सांसारिक मनुष्य **श्रेष्ठ प्रतिमा-पूजक** है। हृदय में जो **'व्योम-सत्'** है, एकाग्र-चित्त साधक उसकी पूजा **'शारदीया दुर्गा की प्रतिमा'** में करता है।

उसके अनन्तर **'बाह्य-पूजा'** है— इस पूजा में भी साधक **'हृदयाकाश'** को विशाल-रूप से अनुभव करता है।

एकाग्र-चित्त व्यक्ति यदि प्रतिमा में **एकत्व-बोध से चिन्मयी और मृण्मयी देवी की साधना** करे, तो उसके पश्चात् **निरुद्ध अवस्था** आती है। इस अवस्था में उसकी **'मातृ-साधना'** केवल **हृदय** में ही रहती है।

'उग्र-चण्डा-कल्प' में **आश्विन कृष्णा नवमी** में करवाल में **महा-माया का मध्याह्न में प्रबोधन** कर, **उग्र-चण्डा** का **द्वा-त्रिंशाक्षर मन्त्र** से पूजन तथा **आवरण-पूजन** भी किया जाता है। यह पूजा **अमावास्या** तक होती है। फिर **प्रतिपत्** में **'घट-स्थापन'** कर उसके निकट अथवा ऊपर उस **करवाल का स्थापन** कर, उसमें पूर्व-वत् **पूजा** कर प्रति-दिन पृथक्-पृथक् **'नव-दुर्गाओं' की पूजा** करे।

'उग्र-चण्डा-कल्प' में **नव-दुर्गाओं** के नाम हैं—१ **रुद्र - चण्डा**, २ **प्रचण्डा**, ३ **चण्डोग्रा**, ४ **चण्ड-नायिका**, ५ **चण्डा**, ६ **चण्ड-वती**, ७ **चण्ड-रूपा**, ८ **अति-चण्डिका**, ९ **उग्र-चण्डा**।

'भद्र-काली-कल्प' में **'घट-स्थापन'** के दिन से ही पूजा का आरम्भ होगा, परन्तु **कृष्णा चतुर्दशी** में **महा-माया का यन्त्र अथवा मूर्ति में प्रबोधन** कर, **दुर्गा भद्र-काली की सपर्या** की जाती है। **अमा** में भी इसी प्रकार **पूजा** कर **प्रतिपत् में 'घट-स्थापन'** कर, उसके ऊपर अथवा निकट उस **यन्त्र** अथवा **प्रतिमा** का स्थापन कर प्रति-दिन पृथक्-पृथक् **नव-दुर्गाओं की पूजा** करे।

'भद्र-काली-कल्प' में नव-दुर्गाओं के नाम हैं—१ **शैल-पुत्री**, २ **ब्रह्म-चारिणी**, ३ **चन्द्र-घण्टा**, ४ **कूष्माण्डा**, ५ **स्कन्द-माता**, ६ **कात्यायनी**, ७ **काल-रात्रि**, ८ **महा-गौरी**, ९ **सिद्धि-दात्री**।

'कात्यायनी-कल्प' में केवल तीन दिन की ही पूजा है, परन्तु **घट-स्थापन प्रतिपत् में ही** होता है। उसमें **षष्ठी** तथा **सप्तमी** में प्रातः तक केवल **दुर्गा के अष्टाक्षर मन्त्र से पूजा** होती है। **षष्ठी** के **सायं-काल** में **प्रबोधित बिल्व** तथा **नव-पत्रिकाएँ सप्तमी** में उस **घट** पर रखकर **तीन दिन विशेष पूजा** होती है।

'बृहद्-बडवानल-तन्त्र' के यागादि-पटल में लिखा है कि ''क्रम-दीक्षा-प्राप्त वीर लोग **'घट-स्थापन'** कर, उस घट में **'नव-दुर्गा'** के क्रम से पूजा कर रात्रि में स्वेष्ट-देवी के क्रमार्चन-पूर्वक सुवासिनी-पूजन कर **'तत्त्व-शुद्धि'** करें।''

इस विषय की एक प्राचीन पद्धति, जो मेरे गुरु-देव ने मुझे देने की कृपा की है, उसमें प्रातः, मध्याह्न तथा सायं—**त्रि-काल की पूजा** बताई है। सं० १९९२ से मैं इसी पद्धति के अनुसार अर्चन कर रहा हूँ और मुझे इससे विविध प्रकार के अनुभव हुए है। उक्त पद्धति के सङ्कल्प में अनेक काम्य वचन लिखे हैं, परन्तु मैं केवल **'श्रीविद्याङ्गत्व-प्राप्तये'** का प्रयोग करता हूँ। उक्त पद्धति का संक्षिप्त विवरण यहाँ दे रहा हूँ—

प्राचीन पद्धति का विवरण

आश्विन कृष्णा नवमी के मध्याह्न में **पूजा-गृह** में जाकर, कर्म-कुब्जिका की अर्चना कर, **दीपादि-स्थापन** कर, **करवाल** रख, उसमें **अष्टादश-भुजी उग्र-चण्डा** का ध्यान-पूर्वक **आवाहन** कर, पश्चिमाम्नाय से **उग्र-चण्डा के द्वा-त्रिंशाक्षर मन्त्र** से यथोक्त कुल-कल्प से पूजन कर, **छाग-बलि** करे। तत्पश्चात् निम्न प्रार्थना करे—

ॐ रावणस्य बधार्थाय, रामस्यानुग्रहाय च।
अकाले ब्रह्मणा बोधो, देव्यास्त्वयि कृतः पुरा।।
अहमप्याश्विने कृष्णे, नवम्यां बोधयाम्यहम्।।

इसके बाद पञ्च-तार **'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं'** तथा **'भगवति श्रीमन्-महोग्र-चण्डिके दुर्गे! उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ, निद्रां जहि जहि प्रति-बुध्यस्व प्रति-बुध्यस्व, मम शत्रुन् हन हन, पातय-पातय, स्वाहा'** से **बोधन** कर, हरिद्रा-मिश्रित सुगन्ध-तैल **उद्वर्तन-मन्त्र** पढ़कर **देवी के अङ्ग** अथवा **खड्ग में लेपन** करे। फिर **'ॐ नाना-गन्ध-सुगन्धाढ्यं'** इत्यादि श्लोक पढ़, **पञ्च-सुगन्ध लेपन** कर, **मूल-मन्त्र** से **बिल्व-पत्र**, **जपा-पुष्प**, **रक्त-करवीर**, **पाटली-पुष्प** तथा **द्रोण-पुष्प** देवी के मस्तक में समर्पित कर, चारों दिशाओं में क्रमशः **बटुकादि** को

माष-भक्त-प्रदान करे। तत् पश्चात् यथा-शक्ति **जप-पाठ** कर, एक मन्त्र पढ़, उस **करवाल** में अथवा **प्रतिमा** है, तो **देवी के वाम-कर** में, **कुमारी-सूत्र** वेष्ठित करे। **रक्षा-मन्त्र** पढ़, **सर्षप** से आठों दिशाओं में रक्षा कर, **देवी के आठों ओर आठ दीपक** जलाकर, एक **छोटी-सी प्रार्थना** कर, यथा-लाभ **तत्त्व-शुद्धि** कर **गीत-वाद्यादि** से देवी को प्रसन्न करे।

दशमी से **अमा** तक **मध्याह्न** में **उग्र-चण्डा** की सामान्य पद्धति से प्रति-दिन पश्चिमाम्नाय के कुल-कल्प से पूजा करे।

आश्विन शुक्ल-प्रतिपत्-कृत्य

स्नान-सन्ध्यादि नित्य-कर्म कर, पूजा-मण्डप में प्रवेश कर, श्रीविद्या-मूल से ऋष्यादि कर, षडङ्ग-न्यास कर, यवाक्षत-तिल-कुश-जल हाथ में लेकर, **'सङ्कल्प'** करे—

'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्थे शारदीयार्चन-निमित्त्यर्थे घट-स्थापन-कर्माहं करिष्ये।'

तत्पश्चात् ऊर्ध्वाम्नायोक्त क्रम से **सामान्यार्घ्य**-स्थापन करे। उस जल से एक मन्त्र पढ़, **भूमि-वेदी का सिञ्चन** करे। फिर एक मन्त्र पढ़, कुश से **भूमि का स्पर्श** कर, उसे शुद्ध करे। तब सिन्दूरादि रज से **चतुरस्रात्मक सर्वतो - भद्र** लिखकर, एक मन्त्र पढ़, गन्धोक्त कुसुमाक्षत से **पूजा** कर, दूसरा मन्त्र पढ़, **पङ्क से आच्छादन** कर, **त्रिकोणाकार** बनाकर, तीसरा मन्त्र पढ़े, सिन्दूर से उसके ऊपर **अर्द्ध-चन्द्राकार** लिखे। तत्पश्चात् यवों का यथोक्त विधि से शोधन तथा **'ॐ यव त्वमसि०'** इत्यादि प्रार्थना कर, चतुर्थ मन्त्र पढ़, उसके ऊपर **यवार्पण** करे। फिर **'ॐ पङ्क! त्वं पृथि-रूपो०'** इत्यादि पढ़, **पङ्क से आच्छादन** कर, **जल-सिञ्चन** कर, उसके ऊपर **विन्दु-नव-योनि-केशरान्विताष्टदल-चतुरस्र** लिखकर, उसमें **पञ्चाशत् पीठों की पूजा** करे।

तत्-पश्चात् उसके ऊपर साधारण **घट-स्थापन** कर, उसके ऊपर, **अलि-पूर्ण पात्र** तथा **महा-फल-स्थापन** कर, उसमें **सावयव महा-त्रिपुर-सुन्दरी की भावना** करे। फिर सु-वेला में उसे स्थिर करे। तत्-पश्चात् **भूत-शुद्धि** और **प्राणायाम**-पूर्वक प्रथम **गण-षोढा-न्यास** कर, **त्रिपुरा के मन्त्र का ऋष्यादि-षडङ्ग-न्यास** कर, ऊर्ध्वाम्नाय से **दीप, कलश** तथा **गणेश का स्थापन** और **पूजन** करे। हो सके, तो **शालिग्राम-गणेश** या **शोणभद्र-गणेश** का और न हो सके, तो केवल **पूगी-फल में गणपति का आवाहन तथा पूजन** करे, **मूर्ति** में नहीं क्योंकि अवस्थानुसार **नाम, ध्यान** तथा **मन्त्रों के भेद से पूजा** होगी। **प्रातः-पूजा में नवों दिन महा-गणपति पूज्य** हैं। तत्पश्चात् ऊर्ध्वाम्नाय-विधि से **पात्रादि का स्थापन** तथा संस्कार कर, मूल घट में **मण्डूकादि पर-तत्त्वान्त पीठ-देवताओं की पूजा कर, 'लं त्रैलोक्य-मोहन-चतुरस्र चक्राय नमः'** से विशेष **'पीठ-पूजा'** करे। इसके बाद **'त्रिखण्डा-मुद्रा'** से **त्रिपुरा का ध्यान** कर—

ॐ आगच्छ वरदे, देवि! दैत्य-दर्प-निसूदिनि!
पूजां गृहाण सुमुखि! त्रिपुरे, शङ्कर-प्रिये!।।

इस श्लोक से आवाहन कर—

ॐ इमां प्रसाधिनीं देवि! रम्य-पट्टैर्विनिर्मिताम्।
गृहाण त्रिपुरे, मातः! केश-सुस्निग्ध-कारिणीम्।।

इस श्लोक से **केश-संस्कार-द्रव्य** समर्पण कर, **त्रिपुरा के मन्त्र** से **पाद्यार्घ्यादि** समर्पित करे। तब स्नान कराने के बाद पीत-वस्त्र, पीत-यज्ञोपवीत, गोरोचन, चन्दन, सिन्दूराक्षतादि, चम्पक-पुष्प, मन्दार-पुष्प-माला, वाल-धूप, पीत-वर्तिका-दीप, घृतोदन-नैवेद्य, पूरक-पक्वान्न, अग्नि-पक्व-मांस,

शल्लकी-मांस चिञ्चिणी-रस-पात्र, उष्णौषधि, शाली - धान्य - व्रीहि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा हिरण्य-दक्षिणा **त्रिपुरा-मूल से समर्पित** कर, **त्रिपुरा की पादुका-पूजा** कर, दक्ष में **अणिमा-सिद्धि,** वाम में **सर्व-संक्षोभिणी-मुद्रा,** अग्र में **चार्वाक-दर्शन** तथा पृष्ठ में **पृथिव्यात्मक चक्र** की पूजा कर, **अणिमादि प्रकट-योगिनियों की आवरण-पूजा** कर, बलि-पात्र में **बटुक-बलि** करे। इसके बाद **जप-पाठादि** कर, **एक-वर्षात्मिका कन्या** की **'श्रद्धा'**-संज्ञा से पूजा कर, **'हल्लेखा'** नाम से **सुवासिनी की पूजा** कर, **तत्त्व-शुद्धि** करे। तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से लाजाक्षत समर्पण करे—

'ॐ कृतैतच्छारदीय-प्रतिपदि प्रातस्त्रैलोक्य-मोहन-चक्राधिष्ठात्री-श्रीत्रिपुरार्चन-विधौ तत्सर्वं कर्म परिपूर्णमस्तु। मां मदीयं सकलं परार्पणमस्तु॥'

इस प्रकार **प्रातः-पूजा** समाप्त करे।

अब **मध्याह्न** में **माध्याह्निक सन्ध्यादि** समाप्त कर **सङ्कल्प** करे—

'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्ये अद्यारभ्य नवम्यन्तं मध्याह्ने यथा-शक्ति-कुलाचारेण श्रीमन्महोग्र-चण्डाङ्ग-भूत नव-दुर्गा-क्रमार्चनमहं करिष्ये।'

उग्रचण्डा-मूल का **कर-षडङ्ग-न्यास** कर, पश्चिमाम्नायोक्त विधि से **प्रातः स्थापित दीप-कलश में गणेश की पूजा** करे। अब गणेश का **'कुल-गणपति'** रूप होगा। तत्पश्चात् **मूल-घट** के ऊपर अथवा वाम ओर घट को स्पर्श कर, पूर्व-प्रबोधित **करवाल या मूर्ति का स्थापन** कर, **'एहि दुर्गे०'** इत्यादि से आवाहन कर, संक्षिप्त विधि से **उग्र-चण्डा की पूजा** कर, **कर-कच्छपी मुद्रा** से **रुद्र-चण्डा का ध्यान-पूर्वक आवाहन** करे। तत्पश्चात् **रुद्र-चण्डा की पूजा** करे। **रुद्र-चण्डा** के मन्त्र से **पाद्यादि वस्त्र-चन्दन, सिन्दूराक्षत** समर्पण कर, दमन पुष्प, कुंकुम-धूप, घृत-वर्तिका-दीप, सु-पोषक पक्वान्न, वराह-मांस, यव-व्रीही, मरीच औषधि, ताम्बूल मुख-शुद्धि तथा हिरण्य-दक्षिणा समर्पित करे। इसके बाद उनकी आवरण-पूजा कर, धूप-दीप तथा **पञ्च-तत्त्व-युक्त नैवेद्य** समर्पित कर, **मूल-देवी** तथा **बटुकादि** को **कृच्छ्रान्न बलि** देकर, **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** कर, पूर्व-वत् **सुवासिनी-पूजा** तथा **तत्त्व-शुद्धि** कर, निम्न मन्त्र से पूर्व-वत् पूजा समाप्त करे—

'ॐ कृतैतच्छारदीय - प्रतिपदि - मध्याह्ने श्रीमन्महोग्र - चण्डाङ्ग - भूत-रुद्र-चण्डा-पूजन-विधौ तत्सर्वं कर्म परिपूर्णमस्तु। मां मदीयं सकलं परार्पणमस्तु।'

अब **सायं**-काल में **सायं-सन्ध्यादि** समाप्त कर **सङ्कल्प** करे—

'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्ये अद्यारभ्य नवम्यन्तं सायाह्ने यथा - शक्ति - कुलाचारेण प्रति - दिनं एकैकाम्नाय-क्रमेण क्रमार्चनमहं करिष्ये।'

दक्षिणाम्नायोक्त विधि से **दीप-कलश** तथा **लक्ष्मी-गणपति की पूजा** कर, **काली के द्वा-विंशाक्षर मन्त्र का ऋष्यादि** कर, **षडङ्ग**-न्यास कर, **मूल-घट में भगवती का आवाहन** करे—

ॐ दक्षिणे कालिके मातर्दक्ष-सिंहासनेश्वरि!
अस्मिन् घटे समायाहि, शारदी-प्रतिपत्-तिथौ॥
सायाह्ने मत्-कृतां पूजां, गृहीत्वा परमेश्वरि!
प्रीता भव महा-देवि! भुक्ति-मुक्ति-प्रदायिनि!॥

इस प्रकार आवाहन कर, **द्वा-विंशाक्षरी महा-विद्या** द्वारा **कुलाचार** से **महा-काल-भैरव-सहित साङ्गावरण दक्षिणा-काली की बलि-सहित पूजा-जप-पाठादि** कर, पूर्व-वत् **सुवासिनी-पूजा** तथा **तत्त्व-शुद्धि** कर अर्चन पूर्ण करे—**'ॐ कृतैतच्छारदीय - प्रतिपत् - सायाह्ने क्रमार्चने दक्षिणाम्नायेश्वरी-श्रीमद्-दक्षिण-कालिकार्चन-विधौ'** इत्यादि।

यदि हो सके, तो **त्रिकाल,** नहीं तो **मध्याह्न** तथा **सायं** द्वि-काल और यदि इतना भी न हो सके, तो **मध्याह्न** अथवा **सायं** में एक ही काल, प्रत्येक मन्त्र से **१६/१६ आहुतियाँ** छाग-कबन्ध मांस के टुकड़े के साथ धान्य-यव-तिलाक्षताज्य से **हवन** कर छाग-हृदय द्वारा **'ॐ मूर्धानं दिवो०'** इत्यादि ऋचा से **पूर्णाहुति** प्रदान करे।

अन्य दिनों की विधि भी ऐसी ही है, परन्तु **गणपति** का नाम, रूप, मन्त्र और पूजा के सामान तथा देवता पृथक् हैं! वे सब यहाँ लिखता हूँ।

द्वितीया-कृत्य

प्रातः सब कर्म पूर्व-वत् कर **द्वितीय गण-षोढा-न्यास** करे। यहाँ **महा-गण-पति की पूजा** होगी। **सर्वाशा-परिपूरक षोडश-दल-चक्र की भावना** कर, **त्रिपुरेशी का न्यास** व **ध्यान** कर निम्न मन्त्र से **आवाहन** करे—

ॐ सर्व-तीर्थ-मयं वारि, सर्व-वेद-समन्वितम्।
इदं घटं समासाद्य, तिष्ठ श्रीत्रिपुरेश्वरि!।।

त्रिपुरेशी-मन्त्र से पाद्यादि, श्वेत-वस्त्र, श्वेत-यज्ञोपवीत, श्रीखण्ड-चन्दन, वक-पुष्प, जयन्ती-पुष्प-माला, कर्पूर-धूप, सीत-वर्तिका-दीप, यवोदन-नैवेद्य, क्षीर-षष्ठिका-पक्वान्न, तित्तिरी-मांस, घृत-पात्र, श्री-फल, चर्म-धातु, सूक्ष्मेल-औषधि, मुदग्-ब्रीहि, द्राक्षा-मुख-शुद्धि तथा मुक्ता-दक्षिणा समर्पण कर, सीमन्तिनी, पक्क-सुगन्ध-तैल तथा केश-बन्धन-सूत्र प्रदान कर, मध्य में **त्रिपुरेशी,** दक्ष में **लघिमा-सिद्धि,** वाम में **सर्व-विद्राविणी-मुद्रा,** अग्र में **बौद्ध-दर्शन** तथा पृष्ठ में **चन्द्रात्मक चक्र** की पूजा कर, **कामाकर्षिण्यादि गुप्त-योगिनियों** की आवरण पूजा कर, **योगिनी-बलि** देकर, जप-पाठादि कर, **द्वि-वर्षात्मिका कन्या** की **'बाला'**-संज्ञा से तथा **सुवासिनी** की **'गगना'** नाम से **पूजा** कर, पूर्व-वत् पूजा समाप्त करे—**'ॐ कृतैतच्छारदीय-द्वितीयायां प्रातः सर्वाशा-परिपूरक- चक्राधिष्ठात्री-श्रीत्रिपुरेश्यर्चन-विधौ'** इत्यादि।

मध्याह्न में सकल कर्म पूर्व-वत् कर, **कुल-गणपति** की पूजा करे। **प्रचण्डा** का ध्यान तथा आवाहन कर, पाद्यादि, जयन्ती - पुष्प, अगरु - धूप, घृत - वर्तिका-दीप, क्षीर-पक्वान्न, वराह - मांस, धान्य - ब्रीहि, सूक्ष्मेल औषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा रजत-दक्षिणा से अर्चन कर, पूर्व - वत् **छाग** तथा **कूष्माण्ड - बलि** भी पूर्व - वत् देकर **पूजा** समाप्त करे— **'ॐ कृतैतच्छारदीय-द्वितीया-मध्याह्ने श्रीमन्महोग्र-चण्डाङ्ग-भूत-प्रचण्डा-विधौ'** इत्यादि।

सायाह्न में सकल कर्म पूर्व-वत् कर **'गों'** मन्त्र से **गणपति की पूजा** कर अधराम्नाय से **श्रीमन्महोग्र-तारा** का न्यासादि कर आवाहन करे—

महोग्रे तारिणि मातः! पातालाम्नाय-नायिके!
सायाह्नेऽद्य द्वितीयायां, घट-मध्ये स्थिरा भव।।
प्रीता भव महा-देवि! पूजां तुभ्यं करोम्यहम्।।

उग्र-तारा की **षोडशाक्षरी महा-विद्या** द्वारा **अक्षोभ्य**-सहित साङ्गावरण **महोग्र-तारा** का बलि-सहित **कुलाचर से पूजन** कर, अन्य-विधि पूर्व-वत् कर पूजा समाप्त करे— **'कृतैतच्छारदीय-द्वितीया-सायाह्ने क्रमार्चने अधराम्नायेश्वरी-श्रीमन्महोग्र-तारार्चन-विधौ'** इत्यादि।

'ऊर्ध्वे सायुज्यमाप्नुयात्'-प्रति-दिन ऊर्ध्वाम्नाय से प्रातः-काल, **'पश्चिमं त्वैहिकं फलम्'**—पश्चिमाम्नाय से मध्याह्न में, फिर—

चतुराम्नाय - विज्ञानादूर्ध्वाम्नाय - परः प्रिये!
तस्मात् तदेव जानीयाद्, यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः।।

अभीष्ट-सिद्धि-हेतु सायं में पृथक्-पृथक् आम्नाय से पूजा होती है।

तृतीया-कृत्य

प्रातः सब कर्म पूर्व-वत् कर **तृतीय गण-षोढा-न्यास** कर **घट में सर्व-संक्षोभण-अष्ट-दल-चक्र की भावना** कर **त्रिपुर-सुन्दरी का न्यास-ध्यान** कर—

ॐ त्रिपुरे सुन्दरि! घटे, सान्निध्यमिह कल्पय।
इमां पूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर **त्रिपुर-सुन्दरी** के मूल-मन्त्र से पाद्यादि, अरुण वस्त्र, अरुण यज्ञोपवीत, रक्त-चन्दन, कुरवक पुष्प, रक्त-कमल-माला, कृष्णागरु-धूप, रक्त-वर्तिका-दीप, रक्तोदन-नैवेद्य, इड-पक्वान्न, खड्गी-मांस, जम्बीर-रस-पात्र, दाडिम्ब-फल, अस्थि-धातु, यपानिका-औषधि, रायिका-व्रीहि, लवङ्ग-मुख-शुद्धि तथा स्फटिक-दक्षिणा समर्पित कर दर्पण, सिन्दूर तथा अलक्तक प्रदान कर मध्य में **त्रिपुर-सुन्दरी,** दक्ष में **महिमा-सिद्धि,** वाम में **सर्वाकर्षिणी-मुद्रा,** अग्र में **गाणपत्य-दर्शन** तथा पृष्ठ में **व्योमात्मक चक्र** की पूजा कर **अनङ्ग-कुसुमादि गुप्त-तर योगिनियों** की आवरण-पूजा कर **भूत-बलि** देकर सभी कर्म पूर्व-वत् करे। **त्रि-वर्षात्मिका कन्या** की **'ललिता'**-संज्ञा सें तथा **सुवासिनी** की **'रक्ता'**-संज्ञा से पूजा कर पूर्व - वत् **पूजा** समाप्त करे— **'ॐ कृतैतच्छारदीय-तृतीया-प्रातः श्रीत्रिपुर-सुन्दरी- पूजा-विधौ०'** इत्यादि।

मध्याह्न में सकल कर्म पूर्व-वत् कर **चण्डोग्रा का ध्यान** तथा **आवाहन** कर पाद्यादि, चम्पक-पुष्प, बाल-धूप, धृत-दीप, लड्डू-पक्वान्न, वराह-मांस, मांस-व्रीहि, लवङ्ग-औषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा ताम्र-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** और **कूष्माण्ड-बलि** देकर सभी कर्म पूर्व-वत् समाप्त करे।

सायं-काल में सकल कर्म-पूर्व-वत् कर **महा-गणपति की पूजा** करे। ऊर्ध्वाम्नाय से **श्रीमद्-बाला-त्रिपुर-सुन्दरी** का न्यास-ध्यान कर—

ॐ ऊर्ध्वाम्नाय-समाराध्ये, श्रीबाला-त्रिपुरेश्वरि!
घट - मध्ये समायाहि, सायाह्ने पूजयाम्यहम्॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर **बाला त्रिपुर-सुन्दरी** की **षडक्षरी महा-विद्या** से **त्रिपुरेश्वर**-सहित **साङ्गावरण बाला-त्रिपुर-सुन्दरी की पूजा** कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

चतुर्थी-कृत्य

प्रातः सब कर्म पूर्व - वत् कर **चतुर्थ गण-षोढा-न्यास** कर घट में **सर्व-सौभाग्य-दायक चतुर्दशार-चक्र की भावना** कर **त्रिपुर-वासिनी का न्यास** तथा **ध्यान** कर—

ॐ आगच्छागच्छ देवेशि! त्रिपुर-वासिनीश्वरि!
सान्निध्यं कुरु कुम्भेन, पूजां तुभ्यं करोम्यहम्॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर **त्रिपुर-वासिनी** के मन्त्र से पाद्यादि, हरित-वस्त्र, हरित-यज्ञोपवीत, चतुष्म-चन्दन, मारुत-पुष्प-माला, यक्ष-कर्दम-धूप, हरित-वर्तिका-दीप, पायसान्न-नैवेद्य, घृत-पूरक-पक्वान्न, हरिण-मांस, सुगन्ध-रस-पात्र, निम्बू-फल, स्नायु-धातु, शुण्ठी-औषधि, काल-मास-व्रीहि, खर्जूर-मुख-शुद्धि तथा मरकत-दक्षिणा समर्पित कर अञ्जन प्रदान कर दक्ष, वाम, अग्र तथा पृष्ठ में **ईशित्व-सिद्धि, सर्व-वशङ्करी मुद्रा, सांख्यादि दर्शन** तथा **मायात्मक चक्र** की पूजा कर **सर्व-संक्षोभिण्यादि सम्प्रदाय-योगिनियों** की पूजा कर **वटुक-क्षेत्रपाल** को बलि देकर **चतुर्वर्षात्मिका कन्या** की **'मालिनी'**-संज्ञा से तथा **सुवासिनी** की **'महोच्छूष्मा'** संज्ञा से पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में सब पूर्व-वत् कर **चण्ड-नायिका का ध्यान** तथा **आवाहन** कर पाद्यादि, बिल्व-पत्र-पुष्प, अगर-धूप, घृत-दीप, मध्वोदन-नैवेद्य, वराह-मांस, कुरण्ट-व्रीहि, यष्टि-मधु-औषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा माणिक्य-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** और **कूष्माण्ड की बलि** देकर पूर्व-वत् समाप्त करे।

सायं-काल में सकल कर्म पूर्व-वत् कर **'गणानां त्वा'** इत्यादि वैदिक मन्त्र से **गण-पति की पूजा** कर ऊर्ध्वाम्नाय से **वेद-माता ब्रह्म-गायत्री का न्यास-ध्यान** कर—

ॐ चतुर्थ्यां वेद-जननि, ब्रह्म-विद्या-स्वरूपिणि!

घट - मध्ये समायाहि, गायत्रि! पूजयामि ते॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर साधारण पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

पञ्चमी-कृत्य

प्रातः सब कर्म पूर्व-वत् कर **पञ्चम गण-षोढा-न्यास** कर **घट में सर्वार्थ-साधक बहिर्दशार-चक्र की भावना** कर **त्रिपुरा-श्री** का **न्यास** तथा **ध्यान** कर—

ॐ आगच्छ वरदे देवि, त्रिपुरे! श्रीपरेश्वरि!

घट - मध्ये समायाहि, पूजये शारदीयकम्॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर पाद्यादि, रक्त-वस्त्र, रक्त-यज्ञोपवीत, कुंकुम-चन्दन, कुरण्टक-पुष्प, कुन्द-पुष्प-माला, शोह्ल-धूप, रक्त-वर्तिका-दीप, मुद्गोदन-नैवेद्य, फेन-पक्वान्न, मत्स्य, काञ्जीक-रस-पात्र, साखोट-फल, मेद्र-धातु, मांस-व्रीहि, कुष्ठौषधि, पिप्पली-मुख- शुद्धि तथा प्रवाल-दक्षिणा समर्पित कर दक्ष, वाम, अग्र और पृष्ठ में **वशित्व-सिद्धि, सर्वोन्मादिनी-मुद्रा, वैदिक दर्शन** तथा **वाय्वात्मक चक्र** की पूजा कर **सर्व-सिद्धि-प्रदादि कुल-कौल-योगिनियों** की पूजा कर **क्षेत्र-पाल** को बलि देकर **पञ्च-वर्षात्मिका कन्या** की **'वसुन्धरा'** संज्ञा से तथा **'करालिनी'** नाम से **सुवासिनी** की पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में सब कर्म पूर्व-वत् कर **चण्डा का ध्यान** तथा **आवाहन** कर पाद्यादि, वकुल-पुष्प, कर्पूर-धूप, घृत-दीप, दध्योदन-पक्वान्न, वाराह-मांस, श्वेत-सर्षप-व्रीहि, सूक्ष्मेलौषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा स्फटिक-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** और **कूष्माण्ड** की बलि देकर पूर्व-वत् समाप्त करे।

सायं-काल सब कर्म पूर्व-वत् कर **उच्छिष्ट-गणपति की पूजा** करे। उत्तराम्नाय से **दशानना श्रीमद्-गुह्य-काली की भरतोपासिता महा-विद्या के न्यासादि** तथा **ध्यान** कर—

ॐ उत्तराम्नाय-सम्पूज्ये, श्रीमत्-सिद्धि-करालिके!

घट-मध्ये समायाहि, तिष्ठ श्रीगुह्य-कालिके!॥

पञ्चम्यामद्य देवि! त्वां, सायाह्ने पूजयाम्यहम्॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर **गुह्येश्वर**-सहित **सावरण-पूजा** कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

षष्ठी-कृत्य

प्रातः-काल सब कर्म पूर्व-वत् कर **षष्ठम गण-षोढा-न्यास** कर **सर्व-रक्षा-करान्तर्दशार-चक्र की भावना** कर **त्रिपुरा-मालिनी का न्यास-ध्यान** कर—

ॐ त्रिपुरा-मालिनि परे, षष्ठिके ब्रह्म-रूपिणे!

आगच्छागच्छ वरदे! पूजां तुभ्यं करोम्यहम्॥

उक्त मन्त्र से आवाहन कर पाद्यादि, कुंकुमाभ-वस्त्र, कुंकुमाभ-यज्ञोपवीत, गोरोचन-चन्दन, रूप-केशर-पुष्प, विचित्र-पुष्प-माला, वाल-धूप, कुंकुमाभ-वर्तिका-दीप, दध्योदन-नैवेद्य, लड्डू-पक्वान्न, शल्लकी-मांस, मधु-पात्र, आम्र-फल, गोर्द-धातु, कलाप-व्रीहि, वंश-रोचन-

औषधि, यष्टि-मधु-मुख-शुद्धि तथा शङ्ख-दक्षिणा समर्पित कर मुक्ता, प्रवाल, वज्र तथा नील-मणि से सुशोभित सुवर्ण के अलङ्कार (कुण्डल तथा कण्ठ-माला) प्रदान करे। दक्ष, वाम, अग्र तथा पृष्ठ में **प्राकाम्य-सिद्धि, महांकुश-मुद्रा, सौर-दर्शन** तथा **तेजसात्मक चक्र** की पूजा कर **सर्वज्ञाद्या-निगर्भ-योगिनियों** की आवरण-पूजा करे। फिर **राज-राजेश्वर क्षेत्रपाल** को **बलि** देकर **षड्-वर्षात्मिका कन्या** की **'सरस्वती'**-संज्ञा से तथा **सुवासिनी** की **'इच्छा'**-संज्ञा से पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में सब कर्म पूर्व-वत् कर **'चण्डवती'** के **न्यास** तथा **ध्यान** कर पाद्यादि, काश-पुष्प, गुग्गुल धूप, घृत-दीप, पूख-पकान्न, वराह-मांस, येपानिका-व्रीहि, जातीफल-औषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा मुक्ता-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** देकर पूर्व-वत् समाप्त करे।

सायं-काल में सब पूर्व-वत् कर **विरञ्चि-गणपति** की पूजा कर पूर्वाम्नाय से **'भुवनेश्वरी'** की **पञ्चाक्षरी महा-विद्या के न्यास** और **ध्यान** कर—

ॐ भुवनेश्वरि, भो मातः! पूर्व-सिंहासनेश्वरि!
षष्ठ्यां सायाह्न-कालेऽस्मिन्, पूजां तुभ्यं करोम्यहम्॥
घट-मध्ये समायाहि, मूल-प्रकृति-रूपिणि!॥

इस मन्त्र से आवाहन कर **सदा-शिव** के सहित साङ्गावरण-पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मूल नक्षत्र— षष्ठी, सप्तमी अथवा **अष्टमी** जिस तिथि में हो, उस तिथि की **प्रातः-पूजा** के **आवरण-पूजन** के पश्चात् **मूर्ति** अथवा **यन्त्र** लिखकर **मूल कलश के वाम भाग में शारदा का आवाहन कर साङ्गावरण पूजा** करे।

सप्तमी-कृत्य

प्रातः सब कर्म पूर्व-वत् कर **सप्तम गण-षोढा-न्यास** कर **घट में सर्व-रोग-हर-अष्टार चक्र की भावना** कर **त्रिपुरा-सिद्धा** का **न्यास-ध्यान** कर—

आगच्छ त्रिपुरा-सिद्धे! वशिन्याद्य-समन्विते!
सर्व-रोग-हरे चक्रे, तिष्ठ त्वां पूजयाम्यहम्॥

इस मन्त्र से आवाहन कर पाद्यादि, रक्त-वस्त्र, रक्त-यज्ञोपवीत, रक्त-चन्दन, बन्धूक-पुष्प, जाति-पुष्प-माला, महा-धूप, रक्त-वर्तिका-दीप, रक्तोदन-नैवेद्य, मृग-मांस, रक्त-पात्र, कदली-फल, प्लीह-धातु, कुरंट-व्रीहि, वंश-रोचन-औषधि, पूग-मुख-शुद्धि तथा ताम्र-दक्षिणा समर्पित कर रत्न-खचित हिरण्य-पादुका प्रदान कर दक्ष, वाम, अग्र तथा पृष्ठ में **भुक्ति-सिद्धि, सर्व-खेचरी-मुद्रा, वैष्णव-दर्शन** तथा **कलात्मक चक्र** की पूजा कर **वशिन्यादि रहस्य-योगिनियों** की आवरण-पूजा कर **गणेश-बलि** देकर **सप्त-वर्षात्मिका कन्या** की **'रमा'** नाम से तथा **सुवासिनी** की **'ज्ञाना'** नाम से पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में सब कर्म पूर्व-वत् कर **चण्ड**-रूप का न्यास-ध्यान कर पाद्यादि, नील-कमल-पुष्प, कुंकुम-धूप, घृत-दीप, घृत-पक्वान्न, यावक-व्रीहि, वंश-रोचन-औषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा सीस-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** देकर पूर्व-वत् समाप्त करे। **अपराह्न** में **नव-पत्रिका** (१ कदली, २ दाडिमी, ३ धान्य, ४ हरिद्रा, ५ मानक, ६ कचि, ७ बिल्व, ८ अशोक तथा ६ जयन्ती) का **जय-दुर्गा-मन्त्र** से प्रोक्षण तथा पूजन कर मूल घट के ऊपर स्थापित करे। तब **कर्म-कुब्जिका की पूजा** करे।

सायं में सर्व-प्रथम **'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्थे स्व-कर्तव्य-शारदीयार्चन-महा-स्नानाङ्ग-भूतमधिवासन-कर्माहं करिष्ये।'** यह सङ्कल्प कर मूल घट के निकट, वाम ओर, माणिक्य, मरकत, पुष्प-राग अथवा स्फटिक में से किसी एक में अङ्कित **श्री-यन्त्र** की स्थापना कर यथोक्त विधि से **अधिवासन** करे। तत्पश्चात् सब कर्म पूर्व-वत् कर **'क्षिप्र-प्रसादन गणेश'** की पूजा कर उपाम्नाय से **नवार्ण-महा-विद्या** का **न्यास** कर **त्रि-शक्त्यात्मिका चामुण्डा का ध्यान** कर—

ॐ आरोपिताऽसि चामुण्डे! मृण्मये श्रीफलेऽपि च।
स्थिरी-भूत्वा तु सततं, गृहे त्वं कामदा भव।।

इस मन्त्र से आवाहन कर **'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्थे नव-पत्रिका-पूजनमहं करिष्ये'** यह सङ्कल्प कर यथोक्त विधि से **प्राण-प्रतिष्ठा** कर निम्न मन्त्र से **प्रार्थना** करे—

(मूलं) **यज्ञ-भागान् गृहाण त्वं, सर्वाभिः शक्तिभिः सह।**
शारदीयामिमां पूजां, ग्रहीतुं तमिहागता।
स्वागतं ते महा-देवि! प्रणामं त्वं गृहाण मे।।

अब **नवार्ण** से पाद्यादि, चन्दनाक्षतादि, पुष्प-मालाएँ, द्रोण-पुष्प, बिल्व-पत्र समर्पित कर **षडङ्ग-मन्त्र** से पूजा करे। फिर शतानि अलङ्काराणि, सिन्दूर, शय्या, आसन, जल-पात्र, भोजन-भाजन, यथा-लाभ नैवेद्य, ताम्बूल तथा वस्त्र समर्पित कर **महा-भीषण-भैरव** के सहित आवरण-पूजा कर धूप, दीप तथा नैवेद्यादि समर्पित कर पूर्व-स्थापित **नव-पत्रिकाओं** में से प्रत्येक में **शक्ति की प्रार्थना** तथा **पूजा** करे। इसके बाद १ खड्ग, २ कटार, ३ छुरिका, ४ शक्ति, ५ कुन्त, ६ शूल, ७ परशु, ८ परिघ, ९ मुद्गर, १० पट्टीश, ११ भिन्दिपाल, १२ चर्म, १३ कवच, १४ धनुः तथा १५ वाण— **दुर्गा के इन १५ आयुधों की स्थापना** कर पञ्चोपचार से पूजा कर यथोक्त विधि से **ध्वजारोहण** कर **छत्र, चामर** तथा **घण्टा** समर्पित कर **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** देकर पूर्व-वत् समाप्त करे।

महाऽष्टमी-कृत्य

प्रातः स्नान-सन्ध्यादि नित्य-कर्म समाप्त कर **महा-षोडशी**-मूल का **ऋष्यादि** कर **षडङ्ग-न्यास** कर **'ॐ अद्येत्यादि अमुकार्थे श्रीमन्महा-राज-राजेश्वरी श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी-देव्या महा-स्नान-कर्माहं करिष्ये'** यह **सङ्कल्प** कर भू-मण्डल में सिन्दूर से **त्रिकोण** से **चतुर्दशार** तक यन्त्र लिखकर स्वाग्रादि दक्षिणावर्त्त से छोटे-छोटे **कलश** स्थापित कर नीचे लिखे हुए अमृतों से उन्हें पूर्ण करे।

चतुर्दशार में शुद्ध-जल, नदी-सङ्गमोदक, शङ्खोदक, गङ्गोदक, उष्णोदक, चतुस्मोदक, शीतलोदक, गो-मूत्र, गो-मय, गो-दधि, गो-दुग्ध, गो-घृत, पञ्च-गव्य तथा पञ्चामृत। **बहिर्दशार** में गो-दुग्ध, गो-दधि, मधु, गो-घृत, शर्करा, पुष्पोदक, कुशोदक, फलोदक, इक्षूदक तथा नारिकेलोदक। **अन्तर्दशार** में गज-दन्त-लग्न-मृत्तिका - जल, शूकर-दन्त-लग्न-मृत्तिका - जल, सुवर्णोदक, रत्नोदक, सर्वौषधि-मिश्रित - जल, सहस्र - धारा जल, कस्तूरी - हरिद्रा - मिश्रित-जल, कर्पूर-श्रीखण्ड-मिश्रित-जल, कुंकुमोदक तथा गोरोचनोदक। **अष्ट-कोण** में गङ्गा - जल, मेघ - निःसृतोदक, वाग्मती - जल, समुद्रोदक, पद्म - केशर-मिश्रितोदक, निर्झरोदक, तीर्थोदक, सरोवर-जल। **त्रिकोण-मध्य** में सुधा-पूर्ण कलश।

एवं स्थापित कर यथोक्त-विधि से संस्कार करे। तत्पश्चात् पूर्व-अधिवासित **श्रीयन्त्र** को प्रत्येक कलश से यथोक्त पृथक्-पृथक् मन्त्र पढ़ स्नान कराए। **अष्ट-कोण-स्थित कलशोदक** से स्नान

कराने के समय मन्त्र के साथ-साथ **गीत** तथा **वाद्य** भी आवश्यक हैं। यथा—

मालव-राग और **विजय-वाद्य** सहित **गङ्गा-जल** से। **ललित-राग** तथा **देव-वाद्य— मेघ-निःसृतोदक** से। **विभास-रास** तथा **दुन्दुभि-वाद्य— वाग्मती-जल** से। **भैरव-राग** तथा **अमर-वाद्य— समुद्रोदक** से। **केदारा-राग** व **इन्द्राद्यभिषेक-वाद्य— पद्म-रेणुदक** से। **बैराटी-राग** तथा **शङ्ख-वाद्य— निर्झरोदक** से। **वसन्त-राग** और **पञ्च-शब्द-वाद्य— तीर्थोदक** से। **धानुषी-राग** तथा **देव-विजय-वाद्य— सरोवर-जल** से। **भैरवी-राग** तथा **सर्व-विजय-वाद्य— सुधा-पूर्ण कलश** से।

तत्पश्चात् **सकल-कलशोदक** एक कर '**ॐ राज-राजेश्वरी शक्ति०**' इत्यादि अभिषेक-मन्त्रों से **स्नान** कराए। तत्पश्चात् **स्नान-मण्डल** का **विसर्जन** करे। तब **भूत-बलि** देकर उसे **विसर्जन** कर **भूतान्यपसारण** कर यथोक्त-विधि से **द्वार-पूजा** करे। तब एक मन्त्र पढ़ **श्रीयन्त्र का चालन** करे। फिर उस **श्रीयन्त्र** को **रक्त-वस्त्र से वेष्ठित** करे।

तत्पश्चात् पूर्व-दिन के प्रातः-वत् कर्म कर, **अष्टम गण-षोढा-न्यास** तथा '**महा-षोडशी**' का न्यासादि कर '**त्रिपुराम्बा**' का **ऋष्यादि** कर **षडङ्ग-न्यास** कर, देवी के वाम ओर **मोहिनी-स्थापन** कर, कज्जल-साधन कर मूल-देवी **श्रीमहा-षोडशी महा-त्रिपुर-सुन्दरी का पीठार्चन, ध्यान, आवाहन** तथा **प्राण-प्रतिष्ठा** कर, **षोडशोपचार से पूजा** कर उनके दक्ष में **महा-कामेश्वर की पूजा** कर **नव-मुद्राएँ** दिखाए। तत्-पश्चात् **घट में सर्व-सिद्धि-प्रद त्रिकोण-चक्र की भावना** कर **त्रिपुराम्बा का ध्यान** कर निम्न मन्त्र से आवाहन करे—

ॐ आगच्छ मद्-गृहे देवि! सह शक्तिभिरष्टभिः।
पूजां गृहाण विधि-वत्, सर्व-कल्याण-हेतवे॥

अब पाद्यादि, रक्त-वस्त्र, रक्त-यज्ञोपवीत, चतुष्म-चन्दन, जाति-पुष्प, कर्पूर-रस-माला, कृष्णागरु-धूप, रक्त-वर्त्तिका-दीप, क्षीरान्न-नैवेद्य, तैल-पूरक-पकान्न, यकृन्मांस, दुग्ध-रस-पात्र, कलिङ्ग फल, वसा-धातु, सित-सर्षप-व्रीहि, इक्षु-सृङ्गी औषधि, कर्पूरान्वित-ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा रजत-दक्षिणा समर्पित कर दक्ष, वाम, अग्र तथा पृष्ठ में **इच्छा-सिद्धि, सर्व-वीजा-मुद्रा, शाक्त-दर्शन, विश्व-नादात्मक चक्र की पूजा** कर **कामेश्वरादि षोडश नित्या कलाओं, गुरु-सन्तति, षडङ्ग-युवतियों, चतुरायुध-शक्तियों** तथा **महा-कामेश्वरादि अति-रहस्य-योगिनियों की आवरण-पूजा** करे। इसके बाद **१ खड्ग, २ छुरिका, ३ कटार, ४ पञ्च-वाण, ५ इक्षु-चाप, ६ कुन्त, ७ शूल, ८ चर्म, ९ पाश, १० अंकुश** तथा **११ तुला—श्री के इन ११ आयुधों** के स्व-स्व-वीज-मन्त्र से प्रत्येक की पूजा तथा प्रार्थना कर **वटुकादि** तथा पूजित सर्व-देवताओं को **बलि** प्रदान कर **अष्ट-वर्षात्मिका कन्या** की '**गौरी**'-संज्ञा से तथा **सुवासिनी** की '**क्रिया**'-संज्ञा से पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में पूर्व-वत् कर्म कर '**अति-चण्डिका**' का **ध्यान-आवाहन** कर पाद्यादि, बन्धूक-पुष्प, अष्टाङ्ग - धूप, घृत - दीप, क्षीर-षष्ठिका-पक्वान्न, वराह - मांस, रायिका - व्रीहि, त्वगौषधि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा रजत-दक्षिणा समर्पित कर **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** देकर पूर्व-वत् समाप्त करे।

सायं-काल में पूर्व-वत् कर्म कर **विघ्न-गणपति की पूजा** कर **श्रीमन्महा-कुब्जिकेश्वरी** के **न्यास-ध्यानादि** कर निम्न मन्त्र से **आवाहन** करे—

ॐ ५ अवतीर्य क्रमान्तस्था, मण्डलोर्ध्वे तु पङ्कजे।
त्र्यस्नासन-समारूढां, सिद्ध-कूटेन संस्थिताम्॥

वक्त्रान्ते दूती-संयुक्तां, आयुधैः समलंकृताम्।

आराधये महा-देवीं, सर्वेषां सर्व-संस्थिताम्।।

या सा परापरा-शक्तिः, खगस्था ख - स्वरूपिणी।

सोम - सूर्य - पदान्तस्था, आयान्तु इह मण्डले।।

गृहाण मत्-कृतां पूजां, पश्चिमाम्नाय - नायिके!

अब **कुब्जिकेश्वर**-सहित साङ्गवरण-पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

रात्रि में **भूत-शुद्धि** और **प्राणायाम** कर—'**ॐ अद्येत्यादि अमुकार्ये भगवत्याः श्रीमन्महोग्र-चण्डा दुर्गा-देव्याः महा-पूजाऽहं करिष्ये।**' यह सङ्कल्प कर **उग्रचण्डा**-कल्पोक्त विधि से **न्यासादि** तथा **दीप, कलश, कुल-गणपति-पूजादि** आवरण-पूजा तक समाप्त कर विल्व-पत्र, द्रोण-पुष्प, करवीर पुष्प, पद्म-माला, जपा-कुसुम-माला, कुमुद-पुष्प-माला तुलसी-पत्र-माला, विल्व-पत्र-माला, घृत-गुग्गुल-धूप, तैल - दीप, घृत - दीप, घृत-वृक्ष-दीप, गुड़-पचित-पक्वान्न, घृत-पचित-पक्वान्न, मोदक, पञ्च-तत्त्वान्वित-चर्वण-नैवेद्य, कदली - फल, नारिकेल-फल, पनश-फल, ताम्बूल, कोषकार, काष्ठ-पादुका, उपानह, अलङ्कार तथा सुवर्ण-दक्षिणा समर्पित कर **आनन्द-कलश** में ८ दिशाओं में **असिताङ्गादि अष्ट-भैरवों** की तथा मध्य में **आनन्द-भैरव** की पूजा कर **बटुकादि** तथा सकल पूजित देवताओं को **माष-भक्त की बलि** देकर यथोक्त विधि से **छाग-बलि** तथा **कूष्माण्ड-बलि,** फिर भैरवादि के लिए मेष-बलि करे। तब मण्डप के बाहर स्तम्भ के पास **महिष, छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** कर **याग-मण्डप में पुनः प्रवेश** कर पूर्व-वत् प्रार्थना कर समाप्त करे।

नवमी-कृत्य

प्रातः-काल में सब कर्म पूर्व-वत् कर **नवम गण-षोढा-न्यास** कर घट में **सर्वानन्द-मय वैन्दव-चक्र की भावना** कर **'त्रिपुर-भैरवी'** का न्यास-ध्यान कर निम्न मन्त्र से आवाहन करे —

ॐ आगच्छ मद्-गृहे देवि! त्रिपुरे, भैरवीश्वरि!

गृहाण मत्-कृतां पूजां, नवम्यां परमेश्वरि!।।

अब पाद्यादि, रक्त-वस्त्र, रक्त-यज्ञोपवीत, अष्ट-सुगन्ध-चन्दन, सेफालिका-पुष्प, जपा-पुष्प-माला, कपि - धूप, रक्त - वर्तिका - दीप, मध्वोदन-नैवेद्य, लड्डू-पक्वान्न, छाग-मांस, शर्करा-रस-पात्र, वीजा-पूरक-फल, मांस-धातु, तिल-व्रीहि, हिंगु-औषधि, जाती-फल-मुख-शुद्धि तथा पृष्ठ में **प्राप्ति-सिद्धि, सर्व-योनि-मुद्रा, शैव-दर्शन** तथा **सम-रस-चक्र** की पूजा कर **रत्यादि परापर-योगिनियों** की आवरण-पूजा करे। तत्-पश्चात् **श्रीमहा-षोडशी का न्यासादि, ध्यान** तथा **पूजन** कर **कामेश्वर-सहित समस्त श्रीचक्रावरण की पूजा** कर **बटुकादि** तथा सभी पूजित देवताओं को **बलि** देकर **कुन्द-पुष्प** तथा रूप-केशर-पुष्प-माला समर्पित कर आसा-पूरि, गुग्गुल, शिह्ल, अगरु, कर्पूर, कस्तूरिका, कपि तथा घृत एकत्र कर धूप और घृत-दीप प्रदान कर पञ्च-तत्त्व के सहित **चर्वण नैवेद्य** समर्पित कर **नव-वर्षात्मिका कन्या** की **'दुर्गा'**-संज्ञा से पूजा करे। तत्पश्चात् **मूल-द्वार** से बाहर **आचार्य-द्वार** के मुख में बैठ-कर **भू-मण्डल में कुरु-कुल्लादि का विसर्जन** करे। ततः **सुवासिनी** की भी **'दुर्गा'**-नाम से पूजा कर पूर्व-वत् समाप्त करे।

मध्याह्न में सब कर्म पूर्व-वत् कर **'श्रीमन्महोग्र-चण्डा'** का **न्यास, ध्यान** तथा **आवाहन** कर पाद्यादि, मन्दार पुष्प, महा-धूप, सर्व-चरु-पक्वान्न, वराह-मांस, रूप-केशर-औषधि, सर्व-व्रीहि, ताम्बूल-मुख-शुद्धि तथा आयस-दक्षिणा समर्पित कर पूर्व-रात्रि-वत् सर्वावरण-पूजा कर वटुकादि तथा समस्त पूजित देवताओं को बलि प्रदान कर **छाग** तथा **कूष्माण्ड**

की बलि करे। फिर बहिः-स्तम्भ में पूर्व-रात्रि-वत् **महिषादि-बलि** कर सकल कर्म पूर्व-रात्रि-वत् समाप्त करे।

सायं-काल में सब कर्म पूर्व-वत् कर **महा-गणपति की पूजा** कर ऊर्ध्वाम्नाय से **श्रीविद्या-महा-षोडशी महा-त्रिपुर-सुन्दरी** का **न्यासादि** तथा **ध्यान** कर निम्न मन्त्र से आवाहन करे —

ॐ ११ महा-पद्म-वनान्तस्थे! कारणानन्द-विग्रहे!

सर्व - भूत - हिते मातरेह्येहि परमेश्वरि!॥

अब **महा-कामेश्वर-सहित श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी** की **समस्त श्रीचक्रावरणार्चन के साथ सपर्या** कर पूर्व-वत् समाप्त करे। **शिवा-बलि** भी करे।

दशमी-कृत्य

प्रातः-काल सब कर्म पूर्व-वत् कर **दशम गण-षोढा-न्यास** कर **श्रीविद्या-कल्पोक्त सकल न्यासादि** कर **दीप-कलश-महा-गणपति-पूजा** से **मूल-घट की पीठ-पूजा** तक समाप्त कर **'ॐ ४ कामेश्वराङ्क-सिद्धेश्वर-पीठाय नमः'** से विशेष पीठ-पूजा कर घट में मुक्ति-प्रद **महा-वैन्दव-चक्र की भावना** कर **पञ्च-दशी श्रीमन्महा-त्रिपुर-सुन्दरी का ध्यान** कर **'ॐ महा-पद्मेत्यादि'** से आवाहन कर षोडशोपचार से पूजा कर **समस्त श्रीचक्रावरण-पूजा** करे। ततः सकल स्थापित देवताओं को स्व-स्व-मन्त्र से **पुष्पाञ्जलि** प्रदान कर **बटुकादि को बलि** देकर **धूप-दीप-नैवेद्यादि** समर्पित कर—

ॐ रश्मि-रूपा-महा-देव्या, ह्यत्र पूजित - देवताः।

सुन्दर्यङ्गे विलीनास्ताः, सन्तु सर्वा शुभावहाः॥

इस मन्त्र से सकल पूजित देवताओं को **श्रीपीठ** (मूल-घट) में विलीन हुआ समझ कर **षोडश-वक्त्रा** (अष्टोत्तर-भुजा) **श्रीमन्निर्वाण-महा-त्रिपुर-सुन्दरी** का **ध्यान** कर, **श्रीविद्या की सर्वाधिकार-विद्या, निर्वाण-विद्या** के साथ **लघु-साम्राज्य-मेधा के दश-कूटा षोडशी मन्त्र** से साङ्गा सालङ्कारा उनकी यथा-शक्त्युपचार से पूजा कर, **मूल-सहस्राक्षरी विद्या** से **पुष्पाञ्जलि** समर्पण कर, **महा-वैन्दव-चक्र की तेजो-मय भावना** कर, **परा-पराति-रहस्य-योगिनी-स्वरूपिणी महा - त्रिपुर-सुन्दरी** के दक्ष, वाम, अग्र तथा पृष्ठ में **मोक्ष - सिद्धि, सर्व - त्रिखण्डा मुद्रा, कौल-दर्शन** तथा **कौलात्मक चक्र** की पूजा कर, **छाग** तथा **कूष्माण्ड की बलि** देकर, **लघु-साम्राज्य-मेधा की अलेखनी विद्या** का यथा-शक्ति **जप** कर, निवेदन कर, पद्धत्युक्त **स्तोत्र का पाठ** कर, यथा-विधि **विसर्जन** करे। **अपराजिता-पूजा** करे।

फिर **आश्विन शुक्ल त्रयोदशी** में **भूमण्डल-विसर्जन** करे।

'शारदीय महा-पूजा की प्राचीनता'

भगवान् रामचन्द्र को यह गौरव प्राप्त है कि उन्होंने अपने अनुष्ठान की महिमा से प्रति-वर्ष भक्तों के घर **जगदम्बा के पूजा-ग्रहण** की परिपाटी स्थापित कर दी।

ब्रह्मा ने **जगदम्बा का बोधन** करते हुए, उस समय जिस भाव-भरित, उदात्त और प्रशस्त स्तुति-मन्त्र का पाठ किया था, वह **'महा- भागवत पुराण'** में पठनीय है। तब से लेकर आज तक भक्त-समूह, **बिल्व**-वृक्ष के समीप अधिष्ठित होकर, प्रति-वर्ष अकाल में **जगदम्बा** को सप्रेम जगाता है। उसे त्रेता की उस स्मरणीय घटना का स्मरण कराकर, जागने की प्रेरणा देता है और जगाकर **श्री-चरणों** में अपना हार्दिक भक्ति-सम्भार उपस्थित कर अपने को धन्य और कृत-कृत्य बनाता है, सफल-मनोरथ होता है।

श्रीमद्-देवी-भागवत में शारदीय नवरात्र

❖ पण्डित रघुवीर मिश्र शास्त्री

शरत्-काल अर्थात् **आश्विन** के **'नव-रात्रि'** में विशेष-तया **भगवती श्रीजगदम्बा चण्डिका देवी का व्रत** करना चाहिए। इसी प्रकार **वसन्त ऋतु** के **'नव-रात्र'** में भी यह व्रत विधेय है। ये दोनों ही ऋतुएँ **'यम-दंष्ट्रा'** कही गई हैं क्योंकि इनमें विविध प्रकार के रोगादि उत्पन्न होते हैं और प्राणियों का व्यापक रूप से नाश होता है। अतएव **आत्म-कल्याण** की इच्छा करनेवाले व्यक्तियों को प्रयत्न-पूर्वक **'नव-रात्र' का व्रत** विधि-पूर्वक करना चाहिए। इस व्रत का प्रारम्भ **'शुक्ल प्रतिपदा'** से होता है। इसलिए इसकी तैयारी **अमावास्या** के दिन ही बुद्धिमान लोगों को कर लेनी चाहिए।

अमावास्या के दिन

व्रत से सम्बन्धित सभी वस्तुओं को पहले एकत्र करे। भोजन केवल एक बार करे और **हविष्य पदार्थों** को ही ग्रहण करे। अपने घर में या घर के निकट किसी सम-तल और पवित्र स्थान में सोलह हाथ लम्बा-चौड़ा **'मण्डप'** बनाए। इस **'मण्डप'** को सुन्दर स्तम्भों और पताकाओं से सजाए। सारे स्थान को श्वेत मिट्टी-गोबर से लिपवाए।

उक्त **'मण्डप'** के मध्य में एक सुन्दर, चौकोर और टिकाऊ **'वेदी'** बनाए। यह **'वेदी'** चार हाथ लम्बी-चौड़ी और एक हाथ ऊँची होनी चाहिए। इस **'वेदी'** या **'पीठ'** के ऊपर चाँदनी तनवाए और चारों ओर रङ्ग-बिरङ्गे **तोरण** बनाकर तथा **बन्दन-वार** लटका कर उसे शोभा-युक्त करे। रात्रि के समय ऐसे विद्वान् ब्राह्मणों को सादर बुलाए, जो **श्री जगदम्बा की उपासना के तत्त्व** को जानते हों और सदाचारी, संयमी तथा वेद-वेदाङ्गों के ज्ञाता हों।

प्रातः-काल नदी, नद, तड़ाग, बावली, कुँए पर जाकर अथवा घर में ही विधि-वत् स्नान करे। फिर **'नित्य-कर्म'** समाप्त कर अनुष्ठान करने के लिए **ब्राह्मणों का वरण** करे। **'मधु-पर्क'** और **'अर्घ्य-पाद्य'** से उनका पूजन कर उन्हें यथा-शक्ति वस्त्र तथा आभूषण भेंट कर सन्तुष्ट करे। इस कार्य में कञ्जूसी न करे क्योंकि सब प्रकार से सन्तुष्ट ब्राह्मणों के द्वारा किए गए पूजनादि कर्म ही फल-दायक होते हैं।

'श्रीमद्-देवी-भागवत्' और **'चण्डी-माहात्म्य'** (**श्रीदुर्गा-सप्तशती**) का पाठ करने के लिए यथा-सामर्थ्य **नौ, पाँच, तीन** अथवा **एक ब्राह्मण** की नियुक्ति करे। **'श्रीमद्-देवी-भागवत' का पारायण** करने के महत्-कार्य में किसी शान्त स्वभाववाले ब्राह्मण को नियुक्त करना चाहिए।

सबसे पहले वैदिक मन्त्रों से **'स्वस्त्ययन'** अर्थात् **मङ्गल-पाठ** कराए। तदनन्तर पूर्वोक्त **'वेदी'** के ऊपर एक **'सिंहासन'** स्थापित करे। **'सिंहासन'** में एक नवीन रेशमी वस्त्र बिछाए। इस वस्त्र के ऊपर **शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म** से युक्त चार भुजाओंवाली अथवा विविध आयुधों से युक्त **अठारह भुजाओंवाली सनातनी भगवती की 'प्रतिमा'** को प्रतिष्ठित करे। देवी की यह **'प्रतिमा'** यथा-शक्ति रत्न-जटित आभूषणों, मोतियों के हार तथा सुन्दर वस्त्रों से शोभायमान होनी चाहिए। **'प्रतिमा'** की आकृति सौम्य और

शुभ लक्षणों से युक्त हो, इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए।

यदि **'प्रतिमा'** की प्रतिष्ठा करना सम्भव न हो, तो उसके स्थान पर **नवार्ण-मन्त्र** से युक्त **'श्रीदुर्गा-यन्त्र'** की स्थापना करे।

'वेदी' के दाहिनी ओर एक **'कलश'** स्थापित करे। इस **'कलश'** को वैदिक मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर उत्तम **तीर्थ-जल** से परिपूर्ण करे और जल में सुवर्ण तथा रत्न छोड़ दे। **'कलश'** को **'पञ्च-पल्लवों'** से शोभायमान करे। पूजा में लगनेवाली सभी सामग्रियों को **'वेदी'** के चारों ओर सजा कर रख ले। **मङ्गलाचार** के लिए **गायन-वादन** की व्यवस्था कर ले।

प्रतिपदा से पूजनारम्भ

हस्ति-नक्षत्र से युक्त **नन्दा (प्रतिपदा) तिथि** में विधि-वत् पूजा प्रारम्भ करना शुभ होता है। इस पूजा से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। सम्भव हो, तो इस दिन **उपवास** रखे अथवा केवल एक बार रात्रि में **हविष्य का भोजन** करे।

पूजन प्रारम्भ करने के पहले **देवी से प्रार्थना** करे। यथा—

करिष्यामि व्रतं मातर्नव - रात्रमुत्तमम्।
साहाय्यं कुरु मे देवि! जगदम्ब! ममाखिलम्॥

अर्थात् हे मातः! मैं नव-रात्र के उत्तम व्रत को करूँगा। हे देवि, हे जगदम्ब! मेरी पूर्ण सहायता करिए।

इसके बाद विधि-पूर्वक मन्त्रों का उच्चारण करते हुए **जगदम्बा का पूजन** करे। पूजन में **चन्दन-अगरु-कपूर; मन्दार-करञ्ज-अशोक-चम्पा-कनैल-मालती-ब्राह्मी** आदि के सुगन्धित **पुष्पं** और **बिल्व-पत्र; धूप** तथा **दीप** का सविधि प्रयोग करे। **नारियल-नीबू-अनार-केला-नारङ्गी - कटहल - बिल्व** फलों के साथ अन्न प्रदान करे। मांसाहारी लोगों को **पशु-बलि** करनी चाहिए।

होम के लिए त्रिकोणाकार **'कुण्ड'** अथवा **'स्थण्डिल'** की रचना करे, जिसका प्रमाण (नाप) शुभ-दायक रखे।

प्रातः, मध्याह्न और **सायं—** तीनों काल पूजन करे और **गीत-वाद्य-नृत्य** द्वारा अधिक-से-अधिक उत्सव मनाए। प्रति-दिन **भूमि पर ही शयन** करे।

प्रति-दिन **'कुमारी'-पूजन** करे। चाहे तो केवल **एक कुमारी का नित्य पूजन** करे या प्रति-दिन एक-एक कर कुमारी की संख्या बढ़ाता जाए अर्थात् पहले दिन **एक कुमारी** का, दूसरे दिन **दो कुमारियों** का, तीसरे दिन **तीन** का— इसी प्रकार नवें दिन **नौ कुमारियों** की पूजा करे। अथवा **प्रति-दिन नौ कुमारियों का पूजन** करे। जैसी श्रद्धा और शक्ति हो, वैसा करे, किन्तु कञ्जूसी न करे।

ब्राह्मणों को ब्राह्मण-जाति की कन्या का कुमारी-रूप में पूजन करना चाहिए। क्षत्रिय को ब्राह्मण-क्षत्रिय दोनों जाति की कन्या का, वैश्य को ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य तीनों जातियों का और शूद्र को चारों जातियों की कन्या का कुमारी-रूप में पूजन करने का अधिकार है। विविध धन्धों में लगे हुए लोगों को अपनी ही जाति की कन्या का पूजन करना चाहिए।

ब्राह्मण-कन्या के पूजन से सब कार्यों की सिद्धि, **क्षत्रिय-कन्या** के पूजन से विजय-प्राप्ति, **वैश्य-कन्या** के पूजन से धन-लाभ और **शूद्र-कन्या** के पूजन से वंश-वृद्धि होती है।

कुमारियों के नाम और उनकी पूजा से प्राप्त होनेवाले फल का विवरण निम्न प्रकार है—

एक वर्ष— "कुमारिका"

दुःख-दारिद्रय- शत्रु-नाश, धन-आयु-बल-वृद्धि

तीन वर्ष— "त्रि-मूर्ति"

धर्म-अर्थ-काम, धन-धान्य पुत्र-पौत्रादि-वृद्धि

चार वर्ष— "कल्याणी"

विद्या (ज्ञान), विजय, सुखादि कामना-पूर्ति

पाँच वर्ष— "रोहिणी"

रोग-नाश

छः वर्ष— "कालिका"

शत्रु-नाश

सात वर्ष— "चण्डिका"

धन और ऐश्वर्य की प्राप्ति

आठ वर्ष— "शाम्भवी"

मोह-दुःख-दारिद्रय- नाश, संग्राम में विजय

नौ वर्ष— "दुर्गा"

शत्रु-नाश, साधना-सिद्धि, पर-लोक में सुख

दस वर्ष— "सुभद्रा"

सभी कामनाओं की पूर्ति

दस वर्ष से अधिक आयुवाली कन्याओं का पूजन **कुमारी**-रूप में नहीं करना चाहिए। ऊपर लिखे नामों से ही विधि-वत् **कुमारियों का पूजन** करे। **पूजन के मन्त्र** क्रमशः निम्न प्रकार हैं—

मन्त्रों के पूर्व में **'श्रीरस्तु'** अथवा **'श्री'** या किसी अन्य बीज-मन्त्र से युक्त मन्त्र का उच्चारण करे।

कुमारिका

कुमारस्य च तत्त्वानि, या सृजत्यपि लीलया।
कादीनापि च देवांस्तां, कुमारीं पूजयाम्यहम्।।

जो कुमार कार्तिकेय के तत्त्वों को और ब्रह्मा आदि देवताओं को अपनी लीला से रचती हैं, उन **भगवती 'कुमारी'** का मैं पूजन करता हूँ।

त्रि-मूर्ति

सत्वादिभिस्त्रिमूर्तिर्या [illegible]र्हि नाना-स्वरूपिणी।
त्रि-काल-व्यापिनी श[illegible]स्त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम्।।

सत्त्व आदि तीन गुणों के द्वारा जो तीन मूर्तिवाली हैं और उन्हीं (गुणों) के द्वारा जो विविध स्वरूपवाली हैं, तीनों कालों में व्याप्त रहनेवाली शक्ति हैं, उन **भगवती 'त्रि-मूर्ति'** का मैं पूजन करता हूँ।

कल्याणी

कल्याण-कारिणी नित्यं, भक्तानां पूजिताऽनिशम्।
पूजयामि च तां भक्त्या, कल्याणीं सर्व-कामदाम्।।

अहर्निश पूजा किए जाने पर जो अपने भक्तों का नित्य कल्याण करनेवाली हैं, उन सब कामनाओं की देनेवाली **भगवती कल्याणी** का मैं भक्ति-पूर्वक पूजन करता हूँ।

रोहिणी

रोहयन्ती च बीजानि, प्राग्-जन्म-सञ्चितानि वै।
या देवी सर्व-भूतानां, रोहिणीं पूजयाम्यहम्।।

समस्त प्राणियों के पूर्व-जन्मों के सञ्चित कर्म-बीजों को जो उगाती हैं, उन **भगवती 'रोहिणी'** का मैं पूजन करता हूँ।

कालिका

काली कालयते सर्वं, ब्रह्माण्डं स - चराचरम्।
कल्पान्त-समये या तां, कालिकां पूजयाम्यहम्।।

कल्प के अन्तिम समय में चर-अचर के सहित सम्पूर्ण विश्व का जो लय करती हैं, उन **भगवती 'कालिका'** का मैं पूजन करता हूँ।

चण्डिका

चण्डिकां चण्ड-रूपां च, चण्ड-मुण्ड-विनाशिनीम्।
तां चण्ड-पाप-हरणीं, चण्डिकां पूजयाम्यहम्।।

प्रचण्ड रूपवाली और चण्ड-मुण्ड का विनाश करनेवाली और महा-पापों को दूर करनेवाली **भगवती 'चण्डिका'** का मैं पूजन करता हूँ।

शाम्भवी

अकारणात् समुत्पत्तिर्यन्वेदैः परि-कीर्तिता।
यस्यास्तां सुखदां देवीं, शाम्भवीं पूजयाम्यहम्।।

वेदों द्वारा जिनकी उत्पत्ति बिना किसी कारण अर्थात् स्वतः बताई गई है, उन सुख देनेवाली **भगवती 'शाम्भवी'** का मैं पूजन करता हूँ।

दुर्गा

दुर्गात् त्रायति भक्तं या, सदा दुर्गति-नाशिनी।
दुर्ज्ञेया सर्व-देवानां, तां दुर्गां पूजयाम्यहम्।।

दुर्दशा को नष्ट करनेवाली जो अपनें भक्त को विपत्ति से सदा बचाती है और जो समस्त देवताओं के लिए भी कठिनाई से जानने योग्य हैं, उन **भगवती 'दुर्गा'** का मैं पूजन करता हूँ।

सुभद्रा

सुभद्राणि च भक्तानां, कुरुते पूजिता सदा।
अभद्र-नाशिनीं देवीं, सुभद्रां पूजयाम्यहम्।।

पूजा किए जाने पर जो अपने भक्तों का सदा कल्याण करती हैं, अमङ्गल का नाश करनेवाली उन **भगवती 'सुभद्रा'** का मैं पूजन करता हूँ।

उक्त मन्त्रों का उच्चारण कर वस्त्र, आभूषण, पुष्प-मालाओं और सुगन्ध आदि से **कन्याओं का सदा भक्ति-पूर्वक पूजन** करना चाहिए।

'नव-रात्र' के **नवों दिन** पूजन करने में यदि असमर्थ हो, तो केवल **अष्टमी के दिन विशेष रूप से भगवती का पूजन** करे क्योंकि **दक्ष-यज्ञ** को ध्वस्त करनेवाली **भद्र-काली का आविर्भाव करोड़ों योगिनियों के सहित 'अष्टमी' को** ही हुआ था। अतः **अष्टमी को विशेष पूजन** का अत्यधिक महत्त्व है।

अष्टमी के दिन **खीर** तथा **मांस** से **हवन** कर **ब्राह्मण-भोजन** कराना चाहिए तथा **फल-फूल** का उपहार अर्पित कर **श्रीजगदम्बा** को प्रसन्न करना चाहिए।

जो लोग पूरे **'नव-रात्र'** भर **उपवास**-पूर्वक **व्रत** करने में असमर्थ हों, उन्हें केवल **तीन दिन— सप्तमी, अष्टमी** और **नवमी** को— उपवास-सहित **व्रतानुष्ठान** करना चाहिए। इससे उन्हें पूर्ण फल की प्राप्ति होगी। **पूजन, हवन, कुमारी-पूजा** और **ब्राह्मण-भोजन** इन्हीं कर्मों से **'नव-रात्र'** का व्रत सम्पन्न होता है।

माँ का आगमन, उपस्थिति, गमन

'दुर्गा-पूजनोत्सव' के दो प्रधान अङ्ग हैं—एक **'आगमनी'**, अन्य **'विजया'**। **'आगमनी'** में **'कैलाश-धाम'** से माँ का **'हिमालय-गृह'** में आगमन एवं **सप्तमी, अष्टमी** व **नवमी**—इन तीन दिन **पितृ-गृह में माँ की उपस्थिति, दशमी** को **'विजया'** का विसर्जन अथवा **माँ का 'स्वामी-गृह-गमन'**। हम लोग शैशव-काल से ही **माँ का यह आगमन, उपस्थिति, गमन** या **विसर्जन** देखते आए हैं।

नव-पत्रिका-पूजन

❖ 'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

आश्विन शुक्ला सप्तमी के दिन प्रातः **बिल्व** (बेल) के वृक्ष के पास जाए। वहाँ **आचमन** कर **सङ्कल्प**-पूर्वक पञ्चोपचारों से **बिल्व-वृक्ष की पूजा** कर हाथ जोड़ निम्न **प्रार्थना** करे—

ॐ बिल्व-वृक्ष! महा-भाग! सदा त्वं शङ्कर-प्रियः।

गृहीत्वा तव शाखां च, दुर्गा-पूजां करोम्यहम्॥

ॐ शाखोच्छेदोद्भवं दुःखं, न च कार्यं त्वया प्रभो!

देवैर्गृहीत्वा ते शाखां, पूज्या दुर्गेति विश्रुतिः॥

अर्थात् हे महा-भाग बिल्व-वृक्ष! आप सदा से शङ्कर के प्रिय हैं। आपकी शाखा को लेकर मैं दुर्गा की पूजा करता हूँ। हे प्रभो! शाखा के तोड़ने से होनेवाले कष्ट का दुःख आप न करें क्योंकि देवता भी आपकी शाखा लेकर दुर्गा की पूजा करते हैं, ऐसी ख्याति है।

उक्त प्रार्थना कर खड्ग से एक ऐसी शाखा को, जिसमें दो फल लगे हों, निम्न मन्त्र से काटे— **ॐ छिन्दि छिन्दि फट् फट् स्वाहा।**

इस शाखा में **नव-पत्रिकाओं** को बाँधे। **नव-पत्रिकाएँ** ये हैं— १ **रम्भा** (केला), २ **कच्ची** (अरवी), ३ **हरिद्रा** (हल्दी), ४ **जयन्ती** (जैती), ५ **बिल्व** (बेल), ६ **दाडिम** (अनार), ७ **अशोक**, ८ **मानक** (मानकच्चू), ९ **धान**—इनकी पत्तियाँ। **सप्तमी** के पहले ही अर्थात् **षष्ठी** के दिन सायं-काल एक छोटे केले के पौधे में अन्य आठ वस्तुओं की शाखाओं को लपेटकर **बिल्व**-वृक्ष के पास रख देना चाहिए।

'नव-पत्रिका'-युक्त **बिल्व**-शाखा को, सम्भव हो, तो ले जाकर **गङ्गाजी में विधि-पूर्वक स्नान** कराए अथवा **पूजा-गृह के आँगन में ही स्नान** करा कर उसका पूजन करे और साड़ी तथा सिन्दूर आदि से सुशोभित कर **गणेशजी** की मूर्ति के दाहिनी ओर स्थापित करे।

पूजा-गृह में **'नव-पत्रिका'** को ले जाने के पूर्व निम्न मन्त्रों को पढ़े—

ॐ पुत्रायुर्धन-वृद्ध्यर्थं, नेष्यामि चण्डिकाऽऽलयम्।

बिल्व-शाखां समाश्रित्य, लक्ष्मी-राज्यं प्रयच्छ मे॥

ॐ आगच्छ चण्डिके देवि! सर्व-कल्याण-हेतवे।

पूजां गृहाण सु-मुखि! नमस्ते शङ्कर-प्रिये!॥

अब उसे स्नान कराने के पूर्व **'ॐ नव-पत्रिका-वासिन्यै दुर्गायै नमः'** मन्त्र से उसकी पूजा करे। फिर निम्न नौ मन्त्रों से उसे स्नान कराए—

ॐ कदली-तरु-संस्थाऽसि, विष्णोर्वृक्षः-स्थलाश्रये!

नमस्ते नव-पत्रि! त्वं, नमस्ते चण्ड-नायिके!॥

ॐ कच्वि! त्वं स्थावरस्थाऽसि, सदा सिद्धि-प्रदायिनी।

दुर्गा - रूपेण सर्वत्र, स्नानेन विजयं कुरु॥

ॐ हरिद्रे! हर - रूपाऽसि, शङ्करस्य सदा प्रिये!

रुद्र - रूपेण देवि! त्वं, सर्व - शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ जयन्ति! जय-रूपाऽसि, जगतां जय-कारिणि!

स्नापयामीह देवि! त्वं, जयं देहि गृहे मम॥

ॐ श्रीफल! श्री-निकेतोऽसि, सदा विजय-वर्धन!

देहि मे हित - कामांश्च, प्रसन्नो भव सर्वदा॥

ॐ दाडिम्यघ - विनाशाय, क्षुन्नाशाय सदा भुवि।

निर्मिता फल - कामाय, प्रसीद त्वं हर-प्रिये!॥

ॐ स्थिरा भव सदा दुर्गे! अशोके शोक-हारिणि!।।
मया त्वं पूजिता दुर्गे! मामशोक सदा कुरु।।
ॐ मानो! मान्येषु वृक्षेषु, माननीयः सुरासुरैः।
स्नापयामि महा - देवि! मानं देहि नमोऽस्तु ते।।
ॐ लक्ष्मीः! त्वं धान्य-रूपाऽसि, प्राणिनां प्राण-दायिनि!
स्थिरात्यन्तं हि नो भूत्वा, गृहे काम-प्रदा भव।।

इसके बाद निम्न मन्त्रों से पञ्चोपचारों से प्रत्येक वृक्ष की अलग-अलग पूजा कर प्रणाम-मन्त्रों से प्रत्येक को **नमस्कार** करे—

१ ॐ रम्भाऽधिष्ठात्रि ब्रह्माणि! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ रम्भाऽधिष्ठात्र्यै ब्रह्माण्यै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ दुर्गे देवि! समागच्छ, सान्निध्यमिह कल्पय।
रम्भा-रूपेण सर्वत्र, शान्तिं कुरु नमोऽस्तु ते।।

२ ॐ कच्व्यधिष्ठात्रि कालिके! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ कच्व्यधिष्ठात्र्यै कालिकायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ महिषासुर-युद्धेषु, कच्वी-भूताऽसि सुव्रते!
मम चानुग्रहार्थाय, आगताऽसि हरि-प्रिये!।।

३ ॐ हरिद्राऽधिष्ठात्रि दुर्गे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ हरिद्राधिष्ठात्र्यै दुर्गायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ हारिद्रे वरदे देवि! उमा-रूपाऽसि सुव्रते!
मम विघ्न-विनाशाय, पूजां गृह्ण प्रसीद मे।।

४ ॐ जयन्त्यधिष्ठात्रि कार्तिकि! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ जयन्त्यधिष्ठात्र्यै कार्तिक्यै गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ निशुम्भ-शुम्भ-मथने! इन्द्रैर्देव-गणै सह।
जयन्ति! पूजिताऽसि, त्वमस्माकं वरदा भव।।

५ ॐ बिल्वाधिष्ठात्रि शिवे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ बिल्वाधिष्ठात्र्यै शिवायै गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ महादेव - प्रिय-करो, वासुदेव-प्रियः सदा।
उमा-प्रीति-करो वृक्षो, बिल्व-वृक्ष! नमोऽस्तु ते।।

६ ॐ दाडिम्यधिष्ठात्रि रक्त-दन्तिके! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ दाडिम्यधिष्ठात्र्यै रक्त-दन्तिकायै गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ दाडिमि! त्वं पुरा युद्धे, रक्त-वीजस्य सम्मुखे।
उमा - कार्यं कृतं यस्मादस्माकं वरदा भव।।

७ ॐ अशोकाधिष्ठात्रि शोक-रहिते! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ अशोकाधिष्ठात्र्यै शोक-रहितायै गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ हर-प्रीति-करो वृक्षो, ह्यशोकः शोक-नाशनः।
दुर्गा - प्रीति - करः यस्मादस्माकं वरदा भव।।

८ ॐ मानाधिष्ठात्रि चामुण्डे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव। ॐ मानाधिष्ठात्र्यै चामुण्डायै गन्धं समर्पयामि नमः इत्यादि।

ॐ यस्य पत्रे वसेद् देवी, मान-वृक्षः शची-प्रियः।
मम चानुग्रहार्थाय, पूजां गृह्ण प्रसीद मे।।
*

शारदीय नव-रात्र में कलश-स्थापन

❖ आचार्य पण्डित राधाकान्त पाठक

चारों नव-रात्रों में **'शारदीय नव-रात्र'** का विशेष महत्त्व है। कहा भी है—

शरत्-काले महा-पूजा, क्रियते या च वार्षिकी।

तस्याह सकलां बाधां, नाशयिष्याम्यसंशयम्॥

ऐसी दशा में **'शारदीय नव-रात्र'** के पूजा-विधान पर विशेष रूप से ध्यान देना आवश्यक है। **भगवान् आशुतोष** कथित अनेक तन्त्र-शास्त्र एवं स्मार्त-शास्त्र इस पूजा के उत्तमोत्तम विधि-विधानों से भरे पड़े हैं। **'कलश-स्थापन'** के सम्बन्ध में भी अनेक मत हैं। **पूजा** और **कलश-स्थापन** के विभिन्न मतों के अवलोकन से सामान्य साधक या जिज्ञासु संशय में पड़ जाता है। उसके सामने **पूजा** प्रायः दुरूह लगने लगती है। यद्यपि **माँ की अर्चना** सर्व-काल में मङ्गल-मय है, वह कभी अनिष्ट नहीं कर सकती, तथापि जन-सामान्य के कल्याण की भावना से कुछ शास्त्रीय प्रमाण यहाँ उल्लेखनीय हैं—

१ भगवती काली की पूजा का आरम्भ **अमा-युक्त प्रतिपदा** में न करें। **(काली-तन्त्र)**

२ **'देवी-पुराण'** एवं **'डामर-तन्त्र'** में लिखा है कि **अमावास्या से युक्त प्रतिपदा** में पूजा आरम्भ न करें। यदि एक पल भी **प्रतिपदा** मिले, तो **द्वितीया में पूजा** आरम्भ करें।

३ **प्रतिपदा से युक्त अमा** अमङ्गल-कारिणी है। अतः **अमा-सहित प्रतिपदा** को त्याग दें। **(मार्कण्डेय-पुराण)**

४ हे राजन्! **अमा से युक्त प्रतिपदा** प्रयत्नतः त्याग दें। **(डामर-तन्त्र)**

५ हे राजन्! **आश्विन शुक्ल पक्ष** की **द्वितीया** आदि तिथियों में जो मेरी पूजा करता है तथा **प्रतिपदा-युक्त द्वितीया** में जो मेरी पूजा आरम्भ करता है, वह निश्चित रूप से सुखी और कल्याण का भागी होता है, इसमें संशय नहीं। **(देवी-पुराण)**

६ जो व्यक्ति **अमावास्या से युक्त प्रतिपदा** में, जो अत्यन्त निन्दित मुहूर्त है, पूजा आरम्भ करता है, वह दुर्भिक्ष-ग्रस्त होता है। **(रुद्र-यामल)**

७ प्रातः-काल में **भगवती का आवाहन, पत्रिका-प्रवेश, पूजा** एवं **विसर्जन** करे। **(देवी-पुराण, निर्णय-सिन्धु)**

८ यदि **शुभ लग्न, नक्षत्र** एवं **योगों** का अभाव हो, तो **सूर्यास्त-काल, चन्द्रोदय-काल-व्यापी गोधूलि** के **अभिजित-काल में पूजा** आरम्भ करे, पर **वैधृति** में कदापि न करे। **(चण्डी-तन्त्र)**

९ **प्रातः** या **सन्ध्या**-काल उतना दोष-प्रद नहीं है, जितना **वैधृति** या **अमा-प्रतिपदा का योग। (चण्डी-रहस्य)**

१० यदि **तिथि की वृद्धि** या **ह्रास** हो जाय, तो उसका कोई प्रभाव **'नव-रात्र'** पर नहीं होता। **तिथि-ह्रास** में **अष्ट-रात्र** ही **'नव-रात्र'** हो जाता है। **(निर्णय-सिन्धु)**

११ **आश्विन शुक्ल पक्ष** की **प्रतिपदा** को यदि **वैधृति योग** हो, **चित्रा** हो, तो उसका **प्रथम चरण** त्याग कर **'नव-रात्र'** आरम्भ किया जा सकता है। **(निर्णय-सिन्धु)**

१२ **वैधृति** एवं **चित्रा** में **'कलश-स्थापन'** से क्रमशः पुत्र एवं धन का नाश होता है, इसलिए पुत्र और धन की कामना करनेवाले साधक **चित्रा-वैधृति** में भूलकर भी **कलश की स्थापना** न करें। **(रुद्र-यामल)**

१३ **सूर्योदय से दस घटी पर्यन्त** की प्रातः-कालीन संज्ञा है। **(विष्णु-धर्मोत्तर-पुराण)**

१४ **रात्रि में 'कलश-स्थापन'** या **'कुम्भाभिषेक'** न करें। **(मत्स्य-पुराण)**

१५ **सायं-काल स्थापना** एवं **अभिषेक** के लिए उतना दोष-पूर्ण नहीं, जितना **वैधृति** या **चित्रा। (भवानी-तन्त्र)**

१६ सुमेधा को उपदेश करती हुई स्वयं भगवती ने कहा है— राजन्! **आश्विन शुक्ल प्रतिपदा** की ऊर्ध्व-गामिनी शुद्ध तिथि में **भगवती चण्डिका की पूजा** प्रारम्भ करें। **(कालिका-पुराण)**

१७ **पूर्वाह्न में देवी-घट स्थापित** करनेवाला **वैश्व-देव** न करे, परन्तु **अपराह्न** में करनेवाले को **वैश्व-देव** करना पड़ता है।

१८ कल्याण की कामना करनेवाला **पूर्वा विद्धा प्रतिपदा में कलश** स्थापित न करें। **(स्कन्द-पुराण)**

१९ यदि **प्रतिपदा** को **चित्रा-वैधृति** आदि योग उपस्थित हो जाए, तो उसके अन्त में घर में **कलश** स्थापित करें। **(दुर्गार्चन-कल्पतरु)**

२० यदि **वैधृति** आदि योगों का परिहार करते-करते **प्रतिपदा- द्वितीया** नहीं मिले, तो **आदि-पाद** को छोड़कर **भगवती का स्मरण** कर **मध्याह्न में अभिजित-मुहूर्त में कलश** को स्थापित करें। **(रुद्र-यामल)**

२१ **कलश की स्थापना— 'हस्त'** नक्षत्र में करना चाहिए। **आर्द्रा में भगवती का अवबोधन** कर **'हस्त'** में **कलश** स्थापित करें। **मूल** में **आवाहित** कर **'पूर्वा उत्तरा'** में **पूजनादि** एवं **बलिदान** आदि से भगवती को सन्तुष्ट कर **'श्रवण'** में सादर **विसर्जित** कर आगामी दिन **विजयोत्सव** माने, किन्तु कभी भी प्रमाद-वश **महाऽष्टमी** में **'बलि-दान'** न करें। **(दुर्गार्चन-प्रदीप)**

उक्त शास्त्रीय प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि **'कलश-स्थापन'— प्रतिपदा-द्वितीया** के **योगवाली प्रतिपदा को प्रातः-काल** करें। प्रातः **'हस्त'** नक्षत्र प्राप्त रहे, **'वैधृति'** का अभाव हो, **चन्द्रादि** ग्रह विहित स्थान में हों, तो प्रातः-कालीन **'कलश-स्थापन'** अत्यन्त मङ्गल-कारी होता है। यदि **अमावास्या-प्रतिपदा** के योग में **'हस्त'** हो, **वैधृति** का अभाव हो और **ग्रह-लग्न** आदि उत्तम बनते हों, तो भी **'कलश-स्थापन'** उस दिन न करे, प्रत्युत दूसरे दिन करें। यदि **प्रतिपदा** दिन-रात हो और दूसरे दिन एक पल भी मिलती हो, तो दूसरे ही दिन **'कलश'** स्थापित करें।

यदि **प्रतिपदा** के पूर्वाह्न में **'चित्रा'** या **'वैधृति'** हो, तो उसके बीत जाने पर **'कलश'** स्थापित करें। अपराह्न तक भी **'वैधृति'** और **'चित्रा'** मिले, तो **सन्ध्या में चन्द्रोदय-काल में 'कलश' स्थापित** करें। पश्चात् **रात्रि में 'कलश'** स्थापित न करें। यदि **सन्ध्या में पूजा आरम्भ हो जाय और अन्त होते-होते रात्रि हो जाय, तो उसे रात्रि-दोष नहीं माना जाता।** यदि **प्रतिपदा** में कभी भी **शुभ लग्न** न मिले, तो **मध्याह्न** में ही **'कलश'** स्थापित करें। **वामा-क्रम** से **मध्य-रात्रि में भी कलश स्थापित** कर सकते हैं, ऐसा प्रमाण आगमों में प्राप्त है।

* * *

श्रीदुर्गा-विधान

❖ **परम पूज्य श्री १००८ स्वामी अक्षोभ्यानन्द सरस्वती जी महाराज**

भगवान् शङ्कर ने **भगवती दुर्गा** के प्रस्तुत विधान को, **'रुद्र-यामल तन्त्र'** में **भगवान् विष्णु** द्वारा प्रसन्न करने पर कहा है। यह विधान सर्वदा श्रेष्ठ है तथा सिद्ध है। इस विधान के अनुकूल उपासना करने पर साधक अपने उद्देश्य को अवश्य सिद्ध कर सकता है। **महा-माया चण्डी** कलि-युग में **धर्मार्थ-काम-मोक्ष को देनेवाली हैं, सर्व-शक्ति-मयी हैं, ब्रह्मा-विष्णु-महेश की उपास्या देवी** हैं। ऐसी **महा-माया** को प्रणाम कर **'रुद्र-यामल'** के **चण्डी-विधान** का वर्णन करता हूँ।

शङ्कर भगवान् ने **विष्णु** से कहा—जो साधक नित्य **देवी की पूजा** करता है, वह दीर्घायु, पुत्रवान् और सुख-भोक्ता होता है। वह समस्त विद्याओं का ईश्वर बन जाता है। वे देवी दिव्य-रूपा हैं, चण्डिका हैं, भक्त-वत्सला हैं। जो साधक भक्ति-संयुक्त होकर **चण्डिका का पूजन** करता है, लक्ष्मी उसकी किङ्करी बन जाती हैं। समस्त राजा लोग उसके वशीभूत हो जाते हैं। स्त्रियाँ भी उसके अनुकूल हो जाती हैं। जो साधक आदर के साथ नित्य **भवानी शङ्करी का पूजन** करते हैं, वे इस लोग में नाना प्रकार के सुखों के भोक्ता बन जाते हैं और देहावसान होने पर **पर-ब्रह्म परमात्मा महा-माया** से मिल जाते हैं, तद्-रूप बन जाते हैं।

जिस साधक पर **दुर्गा** प्रसन्न हो जाती हैं, वही साधक उपर्युक्त सुखों के भोक्ता बनते हैं और उनकी सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध होती हैं और जिस साधक से **दुर्गा** रुष्ट—अप्रसन्न हो जाती हैं, उसको उन सुखों का अनुभव नहीं होता। जिस साधक के शुभ कार्यों में या किसी प्रकार के कार्यों में उत्तमोत्तम **गौरी-पूजन** होता है, उसकी साधना में किसी प्रकार के विघ्नादि-मोहोत्पातादि हों, उनका विनाश हो जाता है। जो साधक माङ्गल्य कार्यों में **गणप और गौरी का पूजन** करते हैं, उनके गृह में सर्वदा मङ्गल हुआ करता है। हे **विष्णु!** इसलिए **सर्वेश्वरी महा-माया भगवती** कां, त्रिकाल में भक्ति-संयुत होकर, नाना प्रकार के पुष्पों और गन्धों से, विविध फलों से, नाना प्रकार के नैवेद्यों से, नाना प्रकार के दिव्य वस्त्रों से, नाना प्रकार की दिव्य स्तुतियों से और देवी के नाना प्रकार के सूक्तों से तथा नाना प्रकार के नाम-मन्त्रों से पूजन करे। देवी को निवेदित अन्न-नैवेद्य और हविः-शेष अन्न को प्रथमतः ब्राह्मणों को देकर फिर स्वयं खा लेना चाहिए। इसी प्रकार प्रति-दिन पूजन करने का विधान है। प्रतिमा के अभाव में **पीठ-यन्त्र में देवी का पूजन** करे।

माघ, चैत्र, आषाढ़, पौष या **आश्विन** मास की वैधी **शुक्ल तिथि** में पूजन प्रारम्भ करे। **महा-पूजा** का विधान करके मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा आदि सामग्री उपस्थित कर प्रथमतः **गुरुदेव की पूजा** करे। पश्चात् अतन्द्रित होकर **चण्डिका-यज्ञ** का प्रारम्भ करे। प्रातः-काल स्वर्ण-रौप्य-ताम्र या मृत्तिका का यथा-प्राप्त **कुम्भ** स्थापित करे। पुराण, वेद, आगमेत्यादि के मन्त्रों से **घट** को तीर्थ-जल से पूरित करे। घटोपरि पात्र स्थापित करे। तदुपरि त्रि-शक्ति— **महा-**

काली, महा-लक्ष्मी, महा-सरस्वती का आवाहन-न्यास करे। **दर्भ का ब्रह्मा** निर्मित कर स्थापित करे। मृद्-गोमय से **मण्डप** को स्वच्छ पवित्र कर **तोरणादि** पुष्प-मालाओं से अलंकृत कर **वेदी** में धान्य बोकर उसे शनैः-शनैः जल से सिञ्चित करे। पाँच रङ्गों से **मण्डप** को सुशोभित करे। **मण्डप की शोभा** मौक्तिकादि भी लगाकर बढ़ानी चाहिए। इसके बाद साधक गुरु-मार्गानुसार यथा-विभव **देवी की त्रिकाल-पूजा** करे।

यदि साधक **त्रिकाल-पूजन** करने में अशक्त हो, तो वह **पञ्चमी** या **अष्टमी** या **चतुर्दशी** में या **नवमी** के दिन पूजन का विधान करे। **चण्डिका** की प्रसन्नता के लिए **रात्रि में जागरण** करे। ब्राह्मण को भोजन कराए। **कुमारिका-पूजन** करे, परमान्न भोजन कराए।

दुर्गा का थोड़ा भी पूजन कल्याण-कांक्षी मनुष्यों के लिए सुख-दायक होता है। जल, पुष्प, गन्ध आदि यथा-प्राप्त सामग्री से **भगवती का यजन-पूजन** करे। इस प्रकार जो साधक **भक्ति से पूजन** और **चण्डी का पाठ** करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर अन्त में **देवी का सायुज्य** प्राप्त करता है।

माघ-मास में देवी-पूजन का विधान

अब मास-विशेष में **देवी-पूजन** का विधान सुनो। **माघ-मास,** शुक्ल **प्रतिपदा-युक्त द्वितीया** के दिन **कुम्भ-स्थापन** कर उसमें **भगवती नन्दा का पूजन** करे। **नवमी**-पर्यन्त उपचारों से प्रति-दिन पूजन करे। भगवती की प्रसन्नता के लिए **अखण्ड दीप** प्रदान करे। **देवी नन्दा** के पूजन का विधान **माघीय 'नव-रात्र'** में कहा गया है। **शिशिर के 'नव-रात्र'** में शुभ चाहनेवाले **नन्दा देवी का पूजन** करें।

पूर्वाह्ण में **देवी-घट** स्थापित करनेवाला **वैश्वदेव** न करे, परन्तु अपराह्ण में करनेवाले को **वैश्वदेव** करना पड़ता है। साधक को यह ध्यान में रखना चाहिए कि **व्यतीपात-योग** न रहे। **व्यतीपात-योग** में **देवी-घट** कभी न स्थापित करे। **ऋक्ष-दग्धा तिथि** ग्राह्य भी है, परन्तु **व्यतीपात** सर्वथा वर्जित है। यदि **व्यतीपात** में **कलश** स्थापित करेगा, तो अग्नि-भय होगा। यदि **ऋक्ष-दग्धा तिथि व्यतीपात** हो, तो **अभिजित मुहूर्त** निकालकर उसी **अभिजित में देवी-कलश** स्थापित करे। अज्ञान से अथवा मोह से **व्यतीपात** में जो **'कलश'** स्थापित करता है, वह महान् दोष का भागी होता है। देश का भी विनाश होता है और छत्र-भङ्ग होता है। दुर्भिक्ष होता है, संसार में अनावृष्टि होती है, पुत्र-पौत्रों का विनाश होता है, शरीर में व्याकुलता आ जाती है। इससे **भगवती का कुम्भ** उत्तरा-व्यतीपात को वर्जित करके स्थापित करे।

कुम्भ के आगे **स्तुति-पाठ, जप, वेद-पारायण, सप्तशती-पाठ, देवी-सूक्त** या पौराणिक अनेक प्रकार के **स्तुति-पाठ** करे। प्रति-दिन भक्ति में तत्पर होकर **त्रिकाल-पूजन** करे। **अष्टमी** के दिन **रात्रि में जागरण** करे और **'पञ्च तत्त्वों'** से **'महा-पूजा'** करे। **'महा-रात्रि'** में **हवन** और **बलिदान** करे। हे माधव! प्रातः-काल **देवी का पूजन** करे। ब्राह्मणों को भोजन कराए। **नव-कुमारिकाओं** को विविध प्रकार का भोजन कराए। स्वयं भी पारण करे। **रात्रि में जागरण** करे। **दशमी** के दिन **अभिषेक** कर **मूर्ति का विसर्जन** करे। **विसर्जित मूर्ति** को लेकर नगर, बाजार, ग्राम में भ्रमण कराए। भ्रमण कराकर **महा-नदी गङ्गा** में अथवा तड़ाग में या अगाध जलाशय में मूर्ति को स्थापित करे। यही पूजन **'नन्दोत्सव'** कहा गया है।

चैत्र-मास में देवी-पूजन का विधान

चैत्र मास के **शुक्ल-पक्ष** में **रक्त-दन्तिका का पूजन** करना चाहिए। **रेवती** या **अश्विनी** में **देवी-घट** स्थापित करे। प्रति-दिन जवा-कुसुम, रक्त-करवीर, ब्रह्म-पुष्प या श्वेत-पुष्प-पल्लव से पूजा करे। **अहिर्बुध्न, वैधृति** और **अपराह्न में कुम्भ** स्थापित न करे। **देवी-स्थापन** के उद्देश्य से **कलश-स्थापन** होता है। **वैधृति में कुम्भ-स्थापन** करने से राज्य-नाश, चौर-भय, अग्नि-भय होता है। इसलिए **वैधृति—त्याज्य** है। **अपराह्न में कुम्भ-स्थापन** करने से कलत्र का विनाश होता है, बुद्धि भ्रष्ट होती है। इसलिए **अपराह्न भी वर्जित** है। जो साधक मोह से **दुर्गा-कलश** को अपराह्न में स्थापित करते हैं, उन साधकों का गृह-भङ्ग होता है, यश की हानि होती है। इसलिए **अपराह्न त्याज्य** है।

विहित समय पर **कलश-स्थापन** कर प्रति-दिन **वेद-पाठादि, सप्तशती-पाठ, नाना प्रकार के स्तोत्रादिकों का पाठ** करना चाहिए। **'रक्त-दन्तिका'** के प्रसन्नार्थ **त्रिकाल-पूजन** करे। **अष्टमी** के दिन **रात्रि में जागरण** करे। **नवमी** के दिन **पारण** करे। **दशमी** के दिन **कलश-विसर्जन** और **अभिषेक** करे। इस प्रकार **'रक्त-दन्तिकोत्सव'** करे। इससे साधक के आयुर्बल की वृद्धि होती है और पुत्र प्राप्त होता है। दैवी शक्ति उस साधक को मिलती है।

आषाढ़-मास में देवी-पूजन का विधान

आषाढ़ के **'नव-रात्र'** में **'शुम्भासुर-निवर्हिणी महा-सरस्वती'** को स्थापित करे। **प्रतिपद्** के प्रातः **रजत-कुम्भ का स्थापन** करे। उसका अभाव होने पर **ताम्र-कुम्भ** को पुष्प-चन्दन से चर्चित कर उसमें पूजा करे। प्रति-दिन श्वेत-पुष्प, चम्पा-पुष्प और श्वेत-वस्त्र से **'महा-सरस्वती' का पूजन** करे। ग्रीष्म के इस **'नव-रात्र'** में शीतल जल से शीतोपचार—कर्पूर, श्वेत चन्दन से पूजन और अष्टाङ्ग-धूप से धूपित करे। दीप दिखाकर नाना प्रकार के नैवेद्यों को चढ़ाए। **पुनर्वसु** या **पुष्य**-नक्षत्र में शुभ **कलश** को स्थापित करे।

रौद्र, व्याघात योगों में और **अपराह्न** में **कुम्भ-स्थापन** न करे। **रौद्र** में **कुम्भ** स्थापित करने से अति-वृष्टि, अन्न का विनाश, कुत्ते और सर्प द्वारा काटे जाने का भय होता है। इसलिए सर्व-दुष्ट समयों को त्याग कर **अभिजित मुहूर्त में घट को स्थापित** करे।

दुर्गा-मख में प्रति-दिन **शुम्भासुर-निवर्हणी महा-सरस्वती** का **पूजन-स्तुति-पाठादि** सब पूर्व-वत् साधक करे। इस प्रकार **महा-सरस्वती** को प्रति-वर्ष स्थापित कर पूजन करे। इससे साधक के गृह में सदा कल्याण होता है और लक्ष्मी अचला होकर रहती है।

आश्विन-मास में देवी-पूजन का विधान

भगवान् शङ्कर विष्णु से बोले—**आश्विन शुक्ल पक्ष** के **'नव-रात्र'** में मन को समाहित कर **त्रिमूर्ति-रूपिणी सावरणा दुर्गा** को स्थापित कर पूजन करे।

विष्णु ने **भगवान् शङ्कर** से पूछा—हे देव-देव महा-देव! हमारे मन में सन्देह है, इससे मुक्त कीजिए। आप चराचर के स्वामी, संसार के बनानेवाले, पालन करनेवाले और संहार करनेवाले हैं। आप किस **देवी की स्तुति-पूजा** और किस **परम मन्त्र का जप-तप** और **ध्यान** किया करते हैं? **हे शम्भो!** आपसे बड़ा और कौन है?

भगवान् शङ्कर ने उत्तर दिया—हे सुर-श्रेष्ठ! आपने जो पूछा है, उसे अभी तक मैंने **षण्मुख**

से भी गुप्त रखा है। वही रहस्य मैं आपसे कह रहा हूँ। पूर्व-काल में युग-क्षय होने पर लोकों को बनाने के लिए **गुण-त्रय-मयी चिद्-रूपा** ने मुझे उत्पन्न किया। मुझसे आप उत्पन्न हुए। आपसे लोक-कर्ता **ब्रह्मा** उत्पन्न हुए। तब **ब्रह्मा** ऋषि बने, **विष्णु** ऋषि बने और मैं भी ऋषि बना।

तीनों ऋषियों को देखकर **ब्रह्म-रूपिणी चेतना महा-शक्ति** ने मेरा आलिङ्गन किया। कारण से कार्य होता है। उस **महा-माया** के इच्छानुसार परमा-शक्ति **'इच्छा'** के रहस्य-रूप में सङ्गम होने से **वाग्-शब्द-ब्रह्म-मयी महा-माया** उत्पन्न हुई। वही **जगन्माता** है, **सरस्वती** है, **वैष्णवी** है, **रौद्री** है, **शिवा** है, **क्षमा** है। वही **कौमारी** है, **पार्वती** है, **सर्व-मङ्गल-दायिनी** है। **सर्व-शक्ति की आद्या महा-लक्ष्मी** है, वही **शिवात्मिका** भी है।

हे **विष्णु!** उसी ने इस विश्व को बनाया है। इस अनाधार विश्व को उसी ने धारण भी किया है। वही **महा-माया** इस विश्व का पालन भी करती है। उसी **महा-माया** में यह विश्व लय हो जाता है। वही भगवती **पूजन-ध्यान** करने से प्रणतों को सर्व-प्रकार का सुख देती है। **आराधन-स्तुति** करने से सर्व प्रकार का मङ्गल करती है। उस **महा-माया** के अनुग्रह से मैंने परम पद को प्राप्त किया है।

हे **विष्णु!** उसी **महा-माया** के **महा-लक्ष्मी-रूप** का मैं निरन्तर भजन करता हूँ। प्रसन्न होकर **महा-लक्ष्मी** वर-प्रदा होती हैं। मेरे ध्यान करने पर उस सुप्रीता ने मुझमें प्रवेश किया। उस समय मैंने **काशी** ऐसे महत्त्व-पूर्ण स्थान को प्राप्त किया। उसी की प्रसन्नता से मैंने चराचर जगत् को बनाया है। सुर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, मनुष्य, समुद्र, पर्वत, वन, ग्रह-राशि, नक्षत्र, सूर्य-मण्डल, चतुर्विध प्राणि-जाति, पञ्च-भूत-समन्वित इस विश्व की मैंने रचना की है।

शङ्कर का यह वचन सुनकर **विष्णु** बोले—भगवान्! मैं आपका भक्त हूँ। आपका दास हूँ। मुझ पर प्रसन्न होकर आप उस **महा-माया** के सुर-दुर्लभ माहात्म्य का वर्णन करिए। हे देव! मुझे सुनने की इच्छा है। जगत् के हित के लिए आप उसका वर्णन करिए।

शङ्कर बोले—हे **विष्णु,** सुनो! **महा-देवी के उत्तमोत्तम माहात्म्य का वर्णन** करता हूँ, जिसे श्रवण करने पर साधक सर्व-प्रकार के पापों से छूट जाते हैं। विश्व की आद्या जो **महा-लक्ष्मी** मेरी माता है, वही **महा-माया** कार्य-भेद से नाना प्रकार के रूप धारण करती है। **चतुर्भुजा महा-लक्ष्मी** इस संसार में व्याप्त है। **बीजापूर, गदा, चर्म, सीधु-पात्र** को वह धारण किए है। **नाग-लिङ्ग, योनि** को भी धारण किए है। वह **अपरा-सुन्दरी** है। हिरण्य-वर्ण के समान **रुचिरा** है। सुवर्ण का मुकुट धारण किए है। अपने शरीर के प्रकाश से त्रैलोक्य को प्रकाशित करती है।

तीनों लोकों को शून्य देखकर केवल **तमो-गुण** से उसने रूपान्तर धारण किया है। नव-मेध के समान कृष्ण वर्ण, अञ्जन के समान श्याम-वर्णवाली मत्त-मातङ्ग-गामिनी **महा-काली** को **महा-लक्ष्मी** ने देखा। वह **चार भुजावाली** है। **खड्ग, पाश, शिर, खेटक** को धारण किए है और **मुण्ड-माला** कण्ठ में पहने है। मूर्ध्नि में **सहस्र सर्पों** को धारण किए है, **त्रैलोक्य-सुन्दरी** है। इस अवस्था में **महा-काली** को देखकर **महा-लक्ष्मी** ने कहा—"हे **चामुण्डे!** तेरा नाम-करण करती हूँ। तेरे नाम **महा-माया, महा-काली, महा-मारी, क्षुधा, तृषा, निद्रा, कृष्णा, एक-वीरा, काल-रात्रि, दुरत्यया** हैं। हे **कालिके,** तेरे नामों को जानकर जो साधक कार्य करते हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त करते हैं।"

ऐसा **महा-काली** से कहकर **महा-लक्ष्मी** ने केवल **सत्त्व-गुण** से दूसरा इन्दु-प्रभ शुभ्र-रूप धारण किया। उस रूप के भी **चार भुजाएँ** हैं। वह **श्वेत पर्वत** के समान है। **अक्ष-माला, अम्बुज, वीणा, पुस्तक** को धारण किए है। **महा-लक्ष्मी** ने **महा-सरस्वती** का भी नाम-करण किया। यथा—**महा-विद्या, महा-वाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, महा-धेनु, वेद-गर्भा, धीश्वरी। आद्या-लक्ष्मी** ने **महा-सरस्वती** से कहा—"हे **सरस्वती,** तेरे नामों को जान कर जो साधक कार्य करते हैं, वे पूर्ण फल को प्राप्त करते हैं।"

इसके बाद **महा-लक्ष्मी** ने **महा-काली** और **महा-सरस्वती** से कहा—'तुम दोनों अपने-अपने अनुरूप पुरुष व नारी उत्पन्न करो।' **महा-लक्ष्मी** और **महा-सरस्वती** से ऐसा कहकर उसने स्वयं भी अपने मिथुन से योग्य पुरुष उत्पन्न किया और नारी भी उत्पन्न की। पुरुष और नारी इन दोनों का भी **महा-लक्ष्मी** ने नाम-करण किया। यथा : पुरुष के नाम—**ब्रह्मा, विधि, विरञ्चि** और **धाता।** नारी के नाम—**श्रीः, पद्मा, कमला, लक्ष्मी** और **माता।**

महा-काली और **महा-सरस्वती** ने अपने-अपने मिथुन से जिन अनुकूल पुरुषों को उत्पन्न किया, उनका भी सुरेश्वरी **महा-लक्ष्मी** ने नाम-करण किया। यथा—**नील-कण्ठ, रक्त-बाहु, श्वेताङ्ग** और **चन्द्र-शेखर।** जिस पुरुष को **महा-काली** ने उत्पन्न किया, वही **रुद्र, शङ्कर, स्थाणु, कपर्दी** और **त्रिलोचन** हैं।

हे **विष्णु!** जिस स्त्री की सृष्टि की, उसके नाम ये हैं—**त्रयी, विद्या, कामधेनु, वाणी, भाषा, अक्षरा** और **स्वरा।** इस प्रकार तमो-गुण **महा-काली** ने इन्हें उत्पन्न किया।

सरस्वती ने अपने मिथुन से जिस पुरुष को उत्पन्न किया, उसके नाम हैं—**विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव, जनार्दन।** उसके द्वारा उत्पन्न नारी के नाम हैं—**उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा** और **कृशा।**

हे **हृषीकेश!** इस प्रकार **महा-काली, महा-लक्ष्मी** और **महा-सरस्वती** ने पुरुषत्व को प्राप्त किया। इन बातों को ज्ञानी पुरुष देखते हैं। इतर नहीं जानते। तदनन्तर **महा-लक्ष्मी** ने **ब्रह्मा** के लिए पत्नी-रूप **महा-सरस्वती** को दिया। **रुद्र** को **गौरी** दिया। **वासुदेव** को **लक्ष्मी** दिया। **सरस्वती** के साथ **ब्रह्मा** ने ध्यान किया, उन्मीलित हुए, जिससे एक अण्ड उत्पन्न हुआ। उस अण्ड के भीतर प्राणि-जात सर्व-जीव-समस्त सृष्टि मात्र भरा हुआ है। उस सब सृष्टि का **भगवान् विष्णु** पालन करते हैं और **भगवान् महेश्वर गौरी महा-काली** के साथ उसका संहार करते हैं।

हे **विष्णु!** इस प्रकार चराचर विश्व **महा-लक्ष्मी** से उत्पन्न हुआ। मैं, आप और ब्रह्मा तथा देव-गण इसीलिए उस **महा-माया का निरन्तर ध्यान** कर उसे प्रणाम करते हैं।

इस प्रकार **भगवान् विष्णु** के प्रश्न का उत्तर **भगवान् शङ्कर** ने दिया और कहा कि 'और जो कुछ पूछना चाहो, पूछ सकते हो, मैं कहूँगा।'

भगवान् विष्णु ने **शङ्कर** से कहा—हे विश्वेश! **देवी के प्रभाव** का मुझसे पुनः वर्णन करो और **देवी के रूप** का भी वर्णन करो। किस-किस कार्य को देवी ने किया है, उसका भी वर्णन करो, जिससे मुझे शान्ति मिले।

शङ्कर भगवान् ने कहा—हे **विष्णु!** देवी ने जिस-जिस कार्य को पूर्व में किया है, वह सब विस्तार से कहता हूँ और उसके रूप का भी वर्णन करता हूँ, सुनो। मैंने जो प्रथम केवल **तमो-गुण** से उत्पन्न होनेवाली **महा-काली** का

वर्णन किया है, उसे **ब्रह्मा** ने स्तुति करके प्रसन्न किया था। यथा—**'ऐसी महा-माया जगद्धात्री, योग-निद्रा-स्वरूपिणी को मैं नमस्कार करता हूँ, सर्वस्याद्या, विशालाक्षी, नित्या, बुद्धि-स्वरूपिणी को मैं नमस्कार करता हूँ।'**

हे **विष्णु,** इस तरह आपको जगाने के लिए **ब्रह्मा** ने **महा-काली की स्तुति** की। पश्चात् शत्रु-वध करने के निमित्त **महा-काली** ने परम रूप धारण किया। उस **महा-काली** की **योग-निद्रा** से मुक्त होने पर आप शयन से उठकर बैठ गए और प्रसन्न होकर **मधु-कैटभ** से युद्ध किया। देवताओं के लिए भी आश्चर्य-जनक युद्ध पाँच हजार वर्ष तक आपने किया। इसके बाद देवताओं के हित के लिए **मधु** और **कैटभ—दोनों भाइयों का वध** किया।

हे **महा-मते!** अब मैं उसी **महा-काली** के रूप का वर्णन करता हूँ। अञ्जनाचल पर्वत जैसा उसका वर्ण है, **दश मुखवाली** है, **दश-पदा** है, रूप-सम्पत्ति से पूर्ण है, लक्ष्मी का गृह है, परात्परा है, **खड्ग, बाण, गदा, शूल, शङ्ख, चक्र, भुशुण्डि, परिधि, कार्मुक, रुधिर चूता हुआ मुण्ड** धारण किए है। हे **विष्णु,** निश्चय करके यह **वैष्णवी माया** है। **महा-काली** दुरत्यया है। **मधु-कैटभ** का वध करने के लिए देवताओं के हितार्थ उसका यह रूप है। **शिशिर 'नव-रात्र'** में यह **अम्बिका** उत्पन्न हुई है।

इसके बाद **भगवती 'नन्दा'** उत्पन्न हुई उसका भी वर्णन करता हूँ, सुवर्ण के आभूषण वह धारण किए है। तप्त-काञ्चन की करधनी और सुवर्ण के सदृश वस्त्र धारण किए है। सुवर्ण-कमल-रूपी अलङ्कार चारों हाथों में धारण किए है। उसी को **श्रीः, पद्मा, कमला, लक्ष्मी** और **अम्बुजासना** नाम से कहा जाता है। उसे **राजस-गुणा** भी कहते हैं।

हे **माधव!** उसी भगवती ने देवताओं के कार्य करने के लिए केवल **रजो-गुण** से दूसरा रूप धारण किया है। वह **सर्व-देवताओं के शरीर के तेज से उत्पन्न** हुई है। अमित-प्रभा है। सर्व-देवताओं के हित के लिए साक्षात् **महिष-मर्दिनी** की उत्पत्ति हुई है। वह श्वेत-पर्वत के समान प्रकाशित हैं, श्वेत-वक्त्रा है, महा-सती है, नील-हस्ता है, रक्त-मध्या है सुश्वेत ही स्तन का मण्डल है, रक्त-पादा है, नील-जङ्घा है, सुचित्र-जघना है।

ह **विष्णु!** वह चित्र-माल्य और अम्बर को धारण किए है। चित्र-गन्ध का अनुलेप किए है। स्वर्ण-भूषणों को धारण किए है। रूप-सौभाग्य को देनेवाला है। उसके **अठारह भुजाएँ** हैं। अन्य स्वरूप में **एक सहस्र भुजाएँ** भी हैं। अब आयुध भी क्रम से कहता हूँ। दक्षिण-हस्त अधः-भाग के क्रम से वर्णन करता हूँ। **अक्ष-माला, कमल, वाण, खड्ग, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, ढाल, धनुष, पान-पात्र, कमण्डलु**—इन सब अस्त्रों को हाथों में धारण किए है। कमल के आसन पर बैठी हुई है। इस साक्षात् **महा-लक्ष्मी महिष-मर्दिनी** का पूजन करे। **वासन्तिक चैत्र 'नव-रात्र'** में यह देवी **महिष-मर्दिनी** उत्पन्न हुई है।

इसी प्रकार **'रक्त-चामुण्डा'** भी एक दूसरा रूप उसी का है। जवा-कुसुम के रङ्ग जैसा उसके शरीर का रङ्ग है। रक्त-वस्त्र को धारण किए है। रक्त-आयुध भी धारण किए है। लाल-लाल उसके नेत्र हैं। लाल-वर्ण के उसके केश भी हैं। केश ऊपर को उठे हुए हैं। लाल रङ्ग के उसके दाँत हैं। लाल रङ्ग के उसके नख हैं और लाल ही रङ्ग की उसकी दो दंष्ट्राएँ सामने हैं। वह अति भीषणा है। वसुधा के समान विशाल है। सुमेरु गिरि पर्वत के समान ऊँचे दो स्तन हैं और

उतने ही वे लम्बे तथा मोटे हैं और कठिन हैं। स्तनों में सर्व-प्रकार के आनन्द के समुद्र भरे हुए हैं, सर्व-प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। अपने भक्तों को पान कराती है, अपने भक्तों की सर्व-प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करती है। अपने भक्तों को आलिङ्गन करके रहती है। किसी प्रकार के दुःख नहीं आने देती। उसके चार भुजाएँ हैं, इस संसार में सर्व-व्यापिनी बनकर वह स्थित है। वह **१ खड्ग, २ पान-पात्र, ३ मूशल** और **४ लाङ्गल**—इन अस्त्रों को लोक-हित के लिए धारण किए है। इस देवी का नाम **'रक्त-चामुण्डा'** विख्यात है। फलेच्छु साधक **चैत्र शुक्ल पक्ष** में **'रक्त-चामुण्डा'** का सावरण पूजन करे।

हे **विष्णु!** इसके बाद **'भीमा-देवी'** की उत्पत्ति हुई। उस **भीमा देवी** का रूप बहुत ही सुन्दर और मनोहर है। नील-अञ्जन के समान वह तेजस्वी, महा-दंष्ट्रा, महाऽऽनना है। बड़े-बड़े नेत्रवाली, मोटे-मोटे गोल स्तन, चार भुजावाली है। चारों भुजाओं में **चन्द्र-हास, डमरु, मुण्ड, पान-पात्र** को धारण किए है। अस्त्रों को देवताओं के हित के लिए धारण किए है। इसी देवी के अपर नाम **एक-वीरा, काल-रात्रि, कामदा** और **शिवा** भी हैं। **चैत्र नव-रात्र** में **'भीमा देवी'** का पूजन करने से पुत्र की प्राप्ति होती है।

इसके बाद हे भगवन्! जो सात्विक-गुणा **'सरस्वती'** कही जाती है, वह देवताओं के कार्य-वश एक तीसरा रूप उत्पन्न हुई। वह **कौशिकी** भी कही जाती है। तब **'सती' कृष्ण-वर्णा** बन गई। हिमालय में अपना स्थान किया। उसी का नाम **'कालिका'** भी है। इसके बाद रूपान्तर धारण करके **शुम्भ-निशुम्भ** के दो दूतों **चण्ड-मुण्ड** को भगवती ने प्रथम दर्शन दिया।

चण्ड-मुण्ड ने भगवती को देखकर राजा **शुम्भ-निशुम्भ** से निवेदन किया कि—'हे राजन्, हिमालय पर्वत पर एक दिव्याङ्गना आई है। उसका रूप त्रैलोक्य-सुन्दर है।'

देवी के रूप का वर्णन सुनकर **शुम्भ-निशुम्भ** दोनों विह्वल हो गए। उन्होंने **सुग्रीव** नाम का दूसरा दूत बुलाकर **महा-देवी** के पास भेजा। वह दूत हिमालय पर पहुँचा। देवी को देखकर वह मूर्छित होकर गिर पड़ा। सचेत होने पर उसने **शुम्भ-निशुम्भ** की सब बात **महा-देवी** से निवेदन की। दूत के वचन सुनकर देवी मुस्कराती हुई बोली कि—'मेरे विवाह में कुछ कारण है। बाल्यावस्था में मैंने घोर प्रतिज्ञा की है कि 'मुझे संग्राम में जो जीतेगा, वही मुझसे विवाह करेगा।'

दूत इस प्रतिज्ञा को सुनकर क्रोधित हो उठा और **शुम्भ-निशुम्भ** के पराक्रम का वर्णन करने लगा। तब **काली** अट्टहास करके हँसने लगी। दूत से कहा—'जाओ, अपने राजा से निवेदन करो।'

दूत क्रोध कर सहस्रों दैत्यों को साथ ले **काली** के पास उत्पात करने के लिए गया। भगवती ने सब दैत्यों का वध किया। देवी ने क्रोध कर **निशुम्भादि दैत्यों** का भी वध किया और उसके बाद **दैत्य-राज** का भी अनुयायियों के साथ वध किया। इस प्रकार **महा-सरस्वती** देवी **शुम्भासुर** को मारनेवाली है।

इस प्रकार हे **विष्णु, महा-सरस्वती** ने **शुम्भासुर** का विनाश किया है। अब उसके रूप का भी वर्णन करता हूँ। **महा-सरस्वती** के अष्ट-बाहु हैं। **वाण, मूशल, शूल, चक्र, शङ्ख, घण्टा, लाङ्गल, धनुष** —इन दिव्य अस्त्रों को हाथों में धारण किए है। श्वेत पर्वत के समान तेजस्वी है और श्वेत ही वस्त्र धारण किए है।

नाना प्रकार के रत्नों, आभूषणों को भी पहिने है। **वेद-विद्या** से विनोद करती है। **शास्त्र-वेद** को धारण किए है। उसे **भारती** भी कहते हैं। वही **सरस्वती, वागीश्वरी, वाणी** है। इसे **कमलालया** भी कहते हैं। हे **विष्णु! आषाढ़ के नव-रात्र** में इसके पूजन का विधान है।

इसके बाद **'भगवती शाकम्भरी'** की उत्पत्ति हुई। इसके रूप का मैं वर्णन करता हूँ। वह कृष्ण-वर्णा है, महा-लम्बा है। नील-कमल के सदृश उसके नेत्र हैं। गम्भीर नाभिवाली है, त्रिवली है, नत-मध्या है, मनोहरा है, सु-कर्कशा है। चन्द्र-भासा है। गोले-गोले स्तन हैं, चतुर्भुजा है, विशाल-नेत्रा है। **वाण, कमल, धनुष, पुष्प-पल्लव-मूलादि फल-शाक** बहुत से लिए हुए है। **पायस, परमान्न** इन वस्तुओं को लिए है। क्षुधा, तृष्णा, मृत्यु, जरा अवस्थाओं के विनाश के लिए धारण किए है। प्राणियों के जीवितार्थ सब हस्तों में लिए है। इस देवी का नाम **'शाकम्भरी'** है। **शताक्षी** भी इसे कहते हैं। **आषाढ़ के 'नव-रात्र'** में इसके पूजन का विधान है। अन्न की कामनावाला साधक **आषाढ़-मास में शाकम्भरी के पूजन का विधान** करे। हे **जनार्दन!** इस प्रकार आपसे **शताक्षी 'शाकम्भरी' के पूजन का विधान** और रूप-वर्णन किया, जो गोप्य था। अब क्या पूछते हो, कहो। उसका भी मैं वर्णन करूँगा।

भगवान् बोले—हे **नीलकण्ठ! दुर्गा देवी की उत्पत्ति** जिस प्रकार हुई है, कृपया उसका वर्णन करिए।

शङ्कर बोले—हे विभो! एक समय **रुरु** नाम का दैत्य देव-ब्राह्मणों का कण्टक था। उसके **दुर्ग** नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। **दुर्ग** ने कठिन तपस्या की। **ब्रह्मा** ने उसको वर दिया कि तुमको कोई पुरुष जीत नहीं सकेगा। वर पाने के बाद उसने भूर्भुवः-स्वर्लोकों को अपने पराक्रम से जीत लिया। देव, दानव, दैत्य, मनुष्य, पशु-पक्षी इत्यादिकों को विजय कर उसने अपने अधीन कर लिया। वह स्वयं **इन्द्र, सूर्य, वायु, यम, चन्द्र, धनद, बली** बन गया। उसके भय से तारा-गण उदय नहीं होते थे। सब प्रकार के धर्म-कर्म लुप्त हो गए। सभी जीव पाप में रत हो गए। स-पत्नीक देवताओं को उसने कारागार में डाल दिया। शेष देवता घोर जङ्गल में भाग गए। वासवादिक कुछ देवताओं ने मेरी शरण में आकर सब वृत्तान्त सुनाया। देवताओं के दुःख को सुनकर मैंने **महेश्वरी देवी** की स्तुति की, जिस पर **भगवती असुर-मर्दिनी** प्रकट हुईं। उन्होंने **काल-रात्रि महा-काली** का आवाहन किया, जो तत्क्षण आ उपस्थित हुईं। भगवती ने उन्हें दानव के पास भेजा। **महा-काली** ने जाकर उस दैत्य को भगवती का यह सन्देश सुनाया कि "हे दैत्याधिपते! त्रैलोक्य-सम्पदा को इन्द्र भोगेंगे। तुम रसातल को चले जाओ और यदि तुझे लड़ने का गर्व हो, तो शीघ्र आओ, मुझसे युद्ध कर विनष्ट होओ। यदि जीने की इच्छा चाहते हो, तो महेन्द्र की शरण में जाओ। ऐसा **महा-देवी** ने कहा और मुझे यही कहने के लिए आपके पास भेजा है। हे महाऽसुर! इसमें जो करने का विचार हो, सो करो।"

काल-रात्रि महा-काली का वचन सुनकर **दैत्य-राज दुर्ग** क्रोध-पूर्वक अपने गणों से बोला— "पकड़ो इस स्त्री को! यह त्रैलोक्य-सुन्दरी है। मेरे भाग्य से आई है। इस स्त्री के लिए देवताओं की कन्याओं को बन्द किया गया है कारागार में। अतः अवश्य पकड़ो, भागने न पाए। इसे पकड़ मेरे महल ले जाओ, वहाँ रखो। इससे सेवा लेंगे। इसके रहने

के लिए रमणीक स्थान सजाकर ठीक करो।''

असुराधिपति की आज्ञा पाकर परिचारक-गण दौड़ पड़े। इस पर **भगवती** ने **दुर्ग** से कहा—''हे दैत्य-पुङ्गव! दूती के प्रति ऐसा व्यवहार कोई नहीं करता। तुझे यह उचित नहीं है। हे दैत्य-राज! मेरी स्वामिनी को संग्राम में जीतकर मेरी ऐसी सहस्त्रों से सेवा लो, अनायास सबके पति बनो। मुझे देखकर तुम मोहित हुए हो, किन्तु विश्व-मोहिनी सर्व-रूप-मयी त्रैलोक्य-सुन्दरी मेरी स्वामिनी को तो देखा मेरे साथ तू चल, सृष्टि उत्पन्न करनेवाली जगन्माता को तुझे दिखाऊँगी। स्वामिनी को त्याग कर मैं कहीं नहीं जाती। इसलिए परिचारकों को भेजो, यहाँ का हाल वहाँ स्वामिनी से कहूँ।''

इस प्रकार के वचन सुनकर **दुर्ग** और भी क्रोधित होकर परिचारकों से बोला—''हे असुर-गण! शुद्ध वचन बोलनेवाली दूती और दूत से कुछ न कहना चाहिए, पर यह बहुत क्रूर बोलनेवाली है। इसे पकड़ना ही चाहिए।''

आज्ञा पाकर परिचारक-गण **काली** को पकड़ने के लिए दौड़ पड़े। बलवान दैत्य-गणों को जबर्दस्ती पकड़ने के लिए उद्यत देखकर **महा-काली** ने उन दैत्य-गणों को **हुंकार-जनित अग्नि-ज्वाला** से भस्म कर डाला। यह देखकर **दैत्य-पति दुर्ग** ने क्षण-मात्र ही में तीन कोटि दैत्यों को आज्ञा दी कि 'इस दुष्टा को पकड़कर पाश से बाँधो और मेरे पास लाओ।' सैन्य के साथ स्वयं **दुर्ग** भी चला। **काली** ने देखा कि दैत्यों का समूह आ रहा है और **दुर्ग** भी पीछे से सौ कोटि दैत्यों को लिए हुए चतुरङ्गिणी सेना के साथ हाथी-घोड़ा-रथ आदि लेकर आ रहा है। **दुर्ग** ने आकर **महा-देवी विन्ध्याचल-निवासिनी** को देखा कि **हजारों भुजावाली भगवती** रण में खेल की तरह सैन्य को चबा रही है। **महा-काली** की ऐसी अवस्था देखकर वह चिन्तित हो उठा और **जम्भादिक दैत्यों** को तुरन्त आज्ञा दी कि 'मेरी आज्ञा से **विन्ध्य-वासिनी** को बुद्धि-बल-छल से ले आओ। मैं इन्द्र का राज्य उसको दे दूँगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।'

इस प्रकार **दुर्ग** की आज्ञा पाकर **जम्भादिक दैत्यों** ने उससे निवेदन किया कि—''हे दैत्य-राज! बिना मारे हुए उसे जीवित लाना बहुत ही कठिन है। हे प्रभो! कोई और यत्न-विशेष किया जाए। प्रलय-काल की अग्नि के समान **महा-ज्वालावाली** है, **महा-तेजस्वी** है, जलने के लिए आप आज्ञा देते हैं। **सर्प का आभूषण** पहिने हुए है, **व्याघ्र-चर्म** धारण किए हुए है। बैल पर चढ़नेवाले **शम्भु** को भी अपने पराक्रम से आपने जीत लिया है। नाना प्रकार के रत्नों को समुद्र प्रति-दिन आपके यहाँ उपहार में भेजता है। आपके पास कल्प-वृक्ष है, जो नाना प्रकार की कामनाओं का आकर्षण करता रहता है। चिन्ता-मणियों के समूह आपके हैं। आपकी प्रसन्नता से हम सब स्वर्ग में निवास करते हैं। आज्ञा दें, तो हम सब जल सकते हैं। आपकी आज्ञा का अवश्य पालन करेंगे। **महर्लोक, जन-लोक, तप-लोक, सत्य-लोकादि** लोकों के आप अधिकारी हैं। आपकी आज्ञा से हमको कुछ भी असाध्य नहीं है। **वैकुण्ठ-नायक भगवान्** नित्य आपकी आज्ञा का पालन करते हैं। हम लोगों के भय से **कैलास-नायक शङ्कर** भी डरते हैं, जो स्वयं **विषासी** हैं, **भाल-नयन** हैं, **त्रिलोचन** हैं, **भस्म** लगाए हैं। पवित्र जल आपके यहाँ **वरुण** देते रहते हैं। **वायु** आपके यहाँ हवा चलाते रहते हैं। **अग्नि** आपके वस्त्र धोया करते हैं। **चन्द्रमा** आपके छत्र किए रहते हैं। **सूर्य** आपके यहाँ प्रकाश देने का काम किया करते हैं। कौन ऐसा है, जो आपके दृष्टि-कोर के सङ्केत

को नहीं चाहता? हर लोक में सब आपके अनुसार चलनेवाले हैं। आप ही की प्रसन्नता से सब जी रहे हैं। सुरासुर, मनुष्य, पशु-पक्षी सभी आपके अधीन हैं। इस अबला को हम लोग जबर्दस्ती पकड़ कर ले आएँगे।''

यह कह कर दैत्य-गण बादल के समान गर्जने लगे। दैत्यों की यह तैयारी देखकर देव-गण भय से दुखी हो गए। वसुधा काँपने लगी। **भगवती** ने देखा कि दैत्य-गण लड़ने के लिए आ गए। तदनन्तर **काल-रात्रि महा-काली** के शरीर से सब शक्तियाँ उत्पन्न हुईं। उन्होंने दानवों के बल का विनाश किया। **जम्भादिक महा-बली दैत्य** भी सेना का विनाश देखकर क्रोध से अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगे। **विन्ध्य-वासिनी योग-माया** ने अपने वायव्यास्त्र से दैत्यों के अस्त्र-शस्त्रों को खेल की तरह काट डाला। अस्त्र-जालों को दूर ही से विनाश कर दिया।

तदनन्तर **महाऽसुर दुर्ग** एक जलती हुई अग्नि के समान शक्ति लेकर भगवती के प्रति दौड़ा। **भगवती** ने अपने चाप से बाणों की वर्षा कर शक्ति का विनाश कर डाला। **दैत्य** ने अपने भाले का विनाश देखकर चक्र चलाया। **देवी** ने चक्र को भी अपने बाणों से काट डाला, सैकड़ों टुकड़े कर दिए।

तदनन्तर **दैत्य** ने शार्ङ उठाकर बाणों से **देवी** के हृदय में मारा। साथ-ही-साथ **देवी** ने अपने बाणों से **दैत्य-राज** के बाणों को चूर्ण कर डाला। बाणों के कट जाने पर **दैत्य-राज** ने क्रोध कर शूल लेकर **देवी** के प्रति फेंका। **चण्डिका** ने अपने शूल से उस शूल को भी चूर्ण कर दिया। तब **देवी** के प्रति गदा लेकर दौड़ पड़ा और गदा से **देवी** की भुजा के मूल में प्रहार किया। **देवी** ने अपनी गदा से उसकी गदा को वञ्चित कर; उसकी भुजा के मूल में मार कर, उसके हजारों टुकड़े कर दिए। फिर **देवी** ने एक लात **दैत्य-राज** को मारी, जिससे वह **पृथ्वी** पर गिर गया। तत्काल ही वह पुनः उठा और अदृश्य हो गया।

तदनन्तर **जगत्-माता** ने अपनी शक्तियों को प्रेरणा की और **दैत्य-राज** की सेना में शक्तियों का समूह घूमने लगा। जैसे वन के मध्य में अग्नि लगती है, वैसे ही **दैत्य की सेना का विनाश** होने लगा।

विष्णु ने **भगवान् शङ्कर** से पूछा—हे कपर्दिन्! **भगवती दुर्गा** के शरीर से कौन-कौन-सी शक्तियाँ उत्पन्न हुईं दया करके कहिए।

शङ्कर बोले—हे सुराधीश, **विष्णु** सुनो! **दुर्गा देवी** के शरीर से उत्पन्न होनेवाली शक्तियों का मैं कीर्त्तन करता हूँ। **त्रिपुरा, विजया, भीमा, तारा, त्रैलोक्य-सुन्दरी, शाम्भवी, त्रि-जगन्माता, स्वरा, त्रिपुर-सुन्दरी, कामाक्षा, कमलाक्षी, धृति, त्रिपुर-तापिनी, जया, जयन्ती, शिवा, जलेशी, रण-प्रिया, गज-वक्त्रा, त्रि-नेत्रा, शङ्खिनी, अपराजिता, महिषघ्नी, शुभा, आनन्दा, स्वधा, शिवाशना, विद्युज्जिह्वा, त्रिवक्त्रा, चतुर्वक्त्रा, सदा-शिवा, कोटराक्षी, शिखि, वरा, त्रि-पादा, सर्व-मङ्गला, मयूर-वदना, सिद्धि, बुद्धि, काक-वरासिनी, लङ्कार-ताल-केशी, सर्व-तारा, सुन्दरी, सर्पास्या, महा-जिह्वा, पाश-पाणि, गरुन्मती, पद्मावती, सुकेशी, पद्म-केशी, क्षमावती, निद्रावती, खर-मुखी, पद्म-वक्त्रा, षडानना, त्रि-वर्ग-फलदा, माया, रक्षोघ्नी, पद्म-वासिनी, प्रणवेशी, महोल्काभा, विघ्नेशी, स्तम्भिनी, मातृका, वर्ण-रूपा, अक्षवोढारनी, गुहा, अजपा, मोहिनी, श्यामा, जय-रूपा, बलोत्कटा, वाराही, वैष्णवी, जम्भा, वार्त्ताली, दैत्य-तापिनी, क्षेमङ्करी, सिद्धि-करी, रण-माया, सुरेश्वरी, छिन्न-मूर्द्धा, छिन्न-केशी,**

दानवेन्द्र-क्षयङ्करी, शाकम्भरी, मोक्ष-लक्ष्मी, जम्भिनी, बगला-मुखी, अश्वारूढ़ा, महा-क्लिन्ना, नारसिंही, गजेश्वरी, सिद्धेश्वरी, विश्व-दुर्गा, चामुण्डा, शव-वाहना, ज्वाला-मुखी, कराली, चिपिटा, खेचरेश्वरी, शुम्भघ्नी, दैत्य-दर्पघ्नी, विन्ध्याचल-निवासिनी, योगिनी, विशालाक्षी, त्रिपुर-भैरवी, मातङ्गी, करालाक्षी, गजारूढ़ा, महेश्वरी, पार्वती, कमला, लक्ष्मी, श्वेताचल-निभा, उमा, कात्यायनी, शङ्ख-रवा, घुर्घुरा, सिंह-वाहिनी, नारायणी, ईश्वरी, चण्डा, घण्टाली, देव-सुन्दरी, विरूपा, वामनी, कुब्जा, कर्ण-कुब्जा, घन-स्तनी आदि नव-कोटि शक्तियाँ **'नव-दुर्गा'** के शरीर से उत्पन्न हुईं। सब शक्तियों ने मिलकर दानवों के बल का विनाश किया।

तदनन्तर **दैत्य-राज दुर्ग** करकों की वृष्टि करने लगा। **भगवती दुर्गा** ने शोषणास्त्र चलाकर दैत्य के करकों का शोषण किया। उपलमयी वृष्टि को क्षण-मात्र में खेल की तरह विलीन कर दिया। फिर **दुर्ग** अपनी भुजाओं से पर्वतों के शृङ्ग-देवी के प्रति उठा-उठा कर फेंकने लगा। **दुर्गा देवी** ने ऊपर से पर्वतों के शृङ्ग आते हुए देख कर अपने खड्ग से उनके सैकड़ों टुकड़े कर चूर-चूर करके गिरा दिया। इसके बाद **दुर्ग** आभूषणों को धारण कर गज-रूप से देवी के प्रति दौड़ा। उस हाथी को दौड़े हुए आते देखकर **भगवती** ने अपने पाश से उसे फँसा कर उसके शुण्ड को काट डाला। शुण्ड कटने पर चिल्ला कर हाथी का रूप छोड़कर **दुर्ग— प्रचण्ड महिष** बन गया।

महिष बनकर वह **पृथ्वी-मण्डल** में वेग से दौड़ने लगा। उसके दौड़ने से वसुधा कम्पायमान हो गई। ब्रह्माण्ड उसके भय से काँपने लगा और त्रैलोक्य भयभीत हो गया। **भगवती** ने ऐसे महत् आश्चर्य को देखकर शूल को उठाकर **दानव के कण्ठ-देश** में मारा। **त्रिशूल** के लगने पर दानव विभ्रान्त होकर गिर पड़ा, किन्तु शीघ्र ही उठ गया। **महिष**-रूप को छोड़कर वह **सहस्र-भुज** बन गया। वह पुरुष देवी को पकड़ कर आकाश में उड़ गया और वहाँ देवी को उसने क्षण-मात्र में हजारों वाणों से आच्छादित कर दिया। **भगवती** ने भी आकाश से अपने बाण को चलाकर उसके बाणों को काट डाला और अपने बाणों से **दैत्य-राज** को घेर दिया।

तब **भगवती** ने **दुर्ग** को विनाश करनेवाले अपने बाणों को चला-कर **दुर्ग** को जर्जर कर दिया और शीघ्रता से **महा-बाण** को उठाया। उस बाण में कोटि सूर्यों का तेज है, विष ज्वाला के समान है। उस बाण से **दैत्य-राज दुर्ग** को देवी ने हृदय में मारा। उससे वह विह्वल हो गया। रुधिर की धारा बह निकली। **आश्विन शुक्ल अष्टमी** के दिन **भगवती दुर्गा देवी** ने इस प्रकार **दुर्ग दैत्य** का संग्राम-भूमि में वध किया। **दुर्ग** के मरने पर **देवताओं** ने दुन्दुभी बजाई और **तीनों लोक** प्रसन्न हो गए। **सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि** अपने-अपने तेज को प्राप्त हुए। **नदियाँ** पवित्र जल-सहित बहने लगीं। **देव-गण** पुष्पों की वर्षा करने लगे। **गन्धर्व** गाने लगे और **अप्सराएँ** नाचने लगीं। ब्रह्मादि **देव-गण,** सनकादि **ऋषि-गण— भगवती की स्तुति** करने लगे।

शङ्कर से **विष्णु** ने पूछा—हे देव, ब्रह्मादि **देव-गण** ने किस प्रकार स्तुति की? वह भी मेरे सुनने की इच्छा है।

विश्व-नाथ कहने लगे—हे **विष्णो,** सुनो! **भवानी की स्तुति** जिस प्रकार देवताओं ने की, वह मैं कहता हूँ। स्तुति पाप को हरनेवाली है और यशस्करी है, पुत्र-पौत्र को बढ़ानेवाली है,

सुनो। देवता-गण बोले—

मातस्त्वयाऽद्य विनिहत्य महा-सुरेन्द्रं,
दुर्गं निसर्ग - विबुधार्पित - दैत्य-सैन्यम्।
त्राता स्म देवि! सततं नमता शरण्ये,
त्वत्तोऽपरः क इह यं शरणं व्रजामः।।
लोके त एव धन - धान्य - समृद्धि—
भाजास्ते पुत्र-पौत्र-सुकलत्र-सुमित्र-वन्तः।
तेषां यशः प्रचुर - चन्द्र - कलावदातं,
विश्वम्भरे! त्वमसि येषु सु-दृक्त्वमीशे!।।
त्वद्-भक्ति-चेतसि जने न विपत्ति-लेशः,
क्लेशः क्व चानुभवती नति-कृत्सु पुंसु।
त्वन्नाम-संस्मृति-युषां सफलायुषां क्व,
भूयः पुनर्जनिरिह त्रिपुरारि - पत्नि!।।
चित्रं यदत्र समरे स हि दुर्ग-दैत्यस्त्वद्—
दृष्टि - पातमधिगम्य सुधा - निधानम्।
मृत्योर्वशत्वमगमद् विदितं भवानि,
दुष्टोऽपि ते दृशि-गतः कु-गतिं न याति।।
त्वच्छस्त्र - वह्नि - शलभत्वमिता अपीह,
दैत्याः पतङ्ग-रुचिं नामाय दिवं व्रजन्ति।
सन्तः खलेष्वपि दुष्ट-धियो यतः स्युः,
साधुष्विह प्रणयिनः सु-पथं दिशन्ति।।
प्राच्यां मृणानि परि-पाहि सदा-नतान्नो,
याम्यामव - प्रतिपदं विपदो भवानि!
प्रत्यदिशि त्रिपुर - तापत - पत्नि! रक्ष,
त्वं वैष्णवि! प्रति - पदं परि-पालयाघः।।
रुद्राग्निर्निऋति सदा गति-दिक्षु पान्तु,
त्वं पाह्युदीचि निज-भक्त-जनान् महेशि!
ब्रह्माणि! रक्ष सततं नत - मौलि-देशं,
मृत्युञ्जय - त्रिनयन - त्रिपुरारि - शक्त्यः।।
पातु त्रिशूलममलेतर - मौलि जान्वो,
भाल - स्थलं शशि-कला-मृदुमाभ्रुवौ च।
नेत्रे त्रिलोचन - वधूर्गिरिजा च नासा—
मोष्ठं जया च विजया त्वधर-प्रदेशम्।
श्रोत्र - द्वयं श्रुति - रवा दशनावली-श्री—
श्चण्डी कपोल - युगलं रसानां च वाणी।।
पायात् सदैव चिबुकं जय-मङ्गला नः,
कात्यायनी वदन - मण्डलमेव सर्वम्।
कण्ठ - प्रदेशमवतादिह नील - कण्ठी,
भू-तार-शक्तिरनिशं च कृकाटिकां ताम्।।
कार्म्यं सदेशमनिशं भुज - दण्डमैन्द्री,
पद्मा च पाणि-फलकं नेति कारिणान्नः।
हस्तांगुलीः कमलजा गिरिजा नखांश्च,
कक्षान्तरं तरणि - मण्डलं सा तमोघ्नी।।
वक्ष - स्थलं स्थल - चरी हृदयं धरित्री,
कुक्षि - द्वयं त्ववतु नः क्षणदाचरघ्नी।
अव्यात् सदोदर - दरीं जगदीश्वरी नो,
नाभिं नभो - गतिरजत्वथ पृष्ठ-देशम्।।
पायात् कटिं च विकटा परमा स्फिचौ नो,
गुह्यं गुहारणिरपानमपाप - हन्त्री।
ऊरु - द्वयं च विपुला ललिता च जानुं,
जङ्घे जपाऽवतु कठोर-तराऽत्र गुल्फौ।।
पादौ रसातल - चरांगुलि - देशमुग्रा,
चैन्द्री नखान् पद-तलं तल-वासिनी च।
गृहं रक्षतु नो लक्ष्मीः, क्षेत्रं क्षेम-करी सदा,
पातु पुत्रान् प्रिय-करी, पायदायु सनातनी।
यशः पातु महा-देवी, धर्मं पातु धनुर्धरी,

कुल-देवी कुलं पातु, सद्-गतिं सद्-गति-प्रदा।
रणे राज - कुले द्यूते, संग्रामे शत्रु - सङ्कटे,
गृहे वने जले चैव, सर्वाणी सर्वतोऽवतु।।
इति स्तुत्वा जगद्धात्रीं, प्रणेमुस्ते पुनः पुनः,
सर्वे स-वासवा देवाः, सर्षि-गन्धर्व-चारणाः।
ततस्तुष्टा जगन्माता, तानाह सुर-सत्तमान्,
स्वाधिकारान् सुरास्सर्वे, रक्षन्तु प्राग् यथा तथा।।
तुष्टाऽहमनया स्तुत्या, नितरां तु यथार्थया,
वरमन्यं प्रदास्यामि, तत् शृणुध्वं सुरोत्तमाः!।।

।।श्रीदुर्गोवाच।।

यस्तोष्यति तु मां भक्त्या, नरः स्तुत्याऽनया शुचिः,
तस्याहं नाशयिष्यामि, विपदं च पदे पदे।
एतां स्तुतिं महा-दिव्यं, परिधास्यति यो नरः,
तस्य क्वचिद् भयं नास्ति, वज्र-पञ्जरगस्य च।
अद्य-प्रभृति मे नाम, दुर्गेति ख्यातिमेष्यति,
दुर्ग - दैत्यस्य समरे, घातनादति - दुर्गमातु।।

महा-देव बोले—हे विष्णु, इस प्रकार **दुर्गा देवी** देवताओं के हित के लिए उत्पन्न हुई हैं। हे अनघ, यह **दुर्गा-चरित** मैंने आपसे वर्णन किया।

शङ्कर के मुख से **श्रीदुर्गा-चरित** को सुनकर **भगवान् विष्णु** बड़े प्रसन्न हुए और बारम्बार रोमाञ्चित होकर **सदा-शिव** में ध्यान लगा कर कृत-कृत्य हो गए।

शारदीय महोत्सव

श्रीभगवान् ने **शङ्कर** जी से कहा—हे **शङ्कर!** आपने **आश्विन 'नव-रात्रि'** में **दुर्गा-पूजन का विधान** कहा था, जिसे भक्तों ने किया था। उस विधान को कहिए। हे जगत्-पते, **'नव - रात्रि' के पूर्व - कृत्य, 'नव - रात्रि' में प्रतिदिन का विधान** और **'नव-रात्रि' के उत्तर-विधान** को कृपया मुझसे कहिए।

श्रीशङ्करजी बोले—हे **विष्णो,** हे **जगन्नाथ! शारदीय महोत्सव** को जिस-किसी से नहीं कहना चाहिए। मैं आपसे कह रहा हूँ। नास्तिक, पापी, पिशुन, लम्पट, आततायी और देवी के अभक्तों से कभी नहीं कहना चाहिए।

भाद्र-मास की शुक्ल चतुर्दशी तिथि में एक बार हविष्यान्न भोजन करे। हे **माधव, देवी-पीठ-यन्त्र में पूजन** विधि-वत् करे। **रात्रि में महोत्सव** और **अखण्ड जागरण** करे। उसके प्रभात-काल में शौचादि से निवृत्त होकर दन्त-धावन कर स्नान कर ब्राह्मणों को नमस्कार कर उन्हें निमन्त्रित करे। ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर अभ्यङ्ग-तिल-तैल अथवा सुगन्धित सर्षप-तैल लेपन कराकर स्नान कराए। तदनन्तर **देवी का पूजन** करे। पितृ-कार्यों से निवृत्त होकर सायं-काल में **गणेश की पूजा** कर **हवन** करे। इसके बाद ब्राह्मणों को नमस्कार कर दक्षिणा प्रदान करे। तदनन्तर सुवर्ण की बनी हुई मूर्ति अथवा **सुवर्ण-घट** को निर्मित कराकर एक बार हविष्य-भोजन कर **रात्रि में जागरण** करे। **पीठ-यन्त्र में देवी-पूजन** विधान से करे। उसके प्रभात-काल में विमल-जल में पूर्व-वत् स्नान करे। **वेद**-पारायणार्थ, **चण्डी**-पाठार्थ, **शान्ति-स्तोत्र**-पाठार्थ ब्राह्मणों के गृह जाकर ब्राह्मणों से प्रार्थना करे कि 'आप लोग मेरे गृह चलकर समादृत होकर मेरे ऊपर दया करके **नव-रात्रारम्भ** करिए।' इस प्रकार प्रत्येक ब्राह्मण से कहे। **विद्वान् ब्राह्मणों** और **कुमारियों** को निमन्त्रित करे और प्रसन्न करे।

हे **विष्णो!** शक्ति-शास्त्र-विशारद **गुरु** को भी वस्त्रांगुलीयक पुष्पादि देकर प्रसन्न करे। प्रसन्नता-पूर्वक **ब्राह्मणों, कुमारियों** और **गुरु** को

अपने घर लाए। अभ्यङ्ग कराकर उन्हें स्नान कराए। बन्धु-बान्धव-सह **कुमारियों** को आभूषणादि समर्पण करे। आए हुए ब्राह्मणों से **पुण्याहवाचन** कराए। ब्राह्मणों को दक्षिणा समर्पण कर **वेद**-परायणार्थ तथा **चण्डी**-पाठार्थ उनका वरण करे तथा **शान्ति-पाठार्थ** वरणित ब्राह्मणों को लेकर द्विजाग्रतः **गणेशार्चन** करे और **अम्बिका की पूजा** करे। फिर ब्राह्मणों से प्रार्थना-पूर्वक कहे कि 'हमारे इस **चण्डिका-यज्ञ** में आप लोग प्रतिदिन शुभ-प्राप्ति के लिए सावधानी से पारायण करें।'

तब **सङ्कल्प** को उच्चारण कर सौवर्ण, राजत, ताम्र या मृण्मय **कलश-स्थापनादि-पूर्वक वेदिका** बनाए। **गोधूम-मिश्रित यवः** वेदिका में वपन करे। फिर उस पर **मन्त्र-पूर्वक कुम्भ का स्थापन** करे। **कुम्भ में तीर्थोदक-पञ्च-रत्नादि** समर्पण करे। **चित्रा और वैधृति का त्याग** कर **कलश-स्थापन** करे।

चित्रा में कलश-स्थापन करने से राज्य नष्ट होता है और **वैधृति में कलश-स्थापन** करने से पुत्र-शोक तथा धन-धान्य का नाश होता है। अतः **चित्रा-वैधृति नक्षत्रों को छोड़कर कुम्भ-स्थापन** करे।

भगवान् ने पूछा—हे **शङ्कर! चित्रा और वैधृति का निषेध** क्यों किया गया है?

श्रीमहा-देव जी बोले—हे **विष्णो,** महा-बाहो! सुनो, मैं सब कारण कह रहा हूँ। पहिले **पुष्कर द्वीप** में एक राजा थे। उनका नाम **बभ्रु-वाहन** था। उनकी रानी का नाम **सत्यवती** था। उनके पुरोहित **गौतम** थे। राजा के चतुरङ्गिणी सेना, हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल सिपाही थे। धन-धान्य से राजा सम्पन्न थे। राजा ने एक समय **शरत्-कालीन आश्विन 'नव-रात्रि' में दुर्गोत्सव** किया। निमन्त्रित सब ब्राह्मण आए। हे **विष्णो, प्रतिपत्-तिथि में चित्रा-नक्षत्र** था, जो त्वाष्ट्र-संज्ञक था और **वैधृति नाम का योग** था। उसी में **गौतम** के मत से **घट-स्थापन** हुआ।

अन्य ब्राह्मणों ने कहा कि 'आज **चित्रा और वैधृति-योग** है। इसके बाद **चित्रा-वैधृति** के अन्त में **वायव्यर्क्ष उत्तरा में स्थापना** होनी चाहिए, किन्तु **गौतम** ने कहा कि 'मेरा मत **चित्रा** और **वैधृति** में है।' अन्य ब्राह्मणों ने विरोध किया। **गौतम** और अन्य ब्राह्मणों में बहुत वाग्-विवाद हुआ। राजा को बहुत सन्देह उत्पन्न हुआ और वे कहने लगे कि 'मैंने क्या किया! शुभ के लिए बुलाया और आप सब आपस में झगड़ रहे हैं, क्या करें?' **रानी सत्यवती** ने कहा कि 'इसका फल आप लोग विचार करें और दोष भी देखें, क्या होगा? राजा सन्देह में हैं।' **ब्राह्मणों** ने कहा कि 'फल तो कुछ नहीं है। दोष अवश्य महा-कठिन है।' **गौतम** का गुरोर्वचन माननीय था, परन्तु **ब्राह्मणों** का वचन सत्य था।

राजा और **रानी** ने ब्राह्मणों का वचन न मान कर **गौतम** की माया से मोहित होकर **चित्रा** और **वैधृति** में ही **देवी का घट** स्थापित किया। **'नवरात्रि'** के बाद **राजा का राज्य** नष्ट हो गया, शत्रुओं ने जीत लिया, **धन-धान्य-पुत्र** सब नष्ट हो गए। अतः **चित्रा** और **वैधृति** त्याज्य हैं।

इसी प्रकार पूर्व में **प्रसेनजित्** नाम के एक राजा थे, धन-धान्य से सम्पन्न थे। उन्होंने भी **वैधृति योग** में **घट-स्थापन** किया था। फलतः राजा तत्काल ही मर गए और राज्य भी नष्ट हो गया। अतः **चित्रा** और **वैधृति** दोनों **देवी-घट-स्थापन-कर्म में निषिद्ध** हैं। **चित्रा-वैधृति** दोनों को त्याग कर **घट-स्थापन** करने से राज्य-प्राप्ति और धन-धान्य की वृद्धि होती है।

सावित्र में **कुम्भ-स्थापन** करने से राज्य-प्राप्ति होती है। **वायव्य** में **कुम्भ-स्थापन** से सु-वृष्टि होती है। पृथिवी-मण्डल में सम्पूर्ण प्रति-पद यदि **चित्रा**-युक्त हो और **वैधृति**-युक्त हो, तब मध्याह्न में **अभिजित्-मुहूर्त** होता है। उस मुहूर्त में **कुम्भ-स्थापन** करे। तिथि के पूर्व-दल में यदि **चित्रा** है, तब उत्तर-दल तिथि में **कुम्भ-स्थापन** करे। **कलश-स्थापन— रात्रि में विशेष फल-दायक** होता है। जब **चित्रा** का अवसान होता है, उसी समय **कुम्भ-स्थापना** करनी चाहिए।

हे **माधव, कुम्भ-स्थापन** करने में **चित्रा-वैधृति त्याज्य** हैं। जब पूर्व दिन में **नन्दा** है, **पूर्वार्द्ध-व्याप्य** है, तब **उत्तरार्द्ध द्वितीयोऽह्नि** में **कुम्भ**-स्थापित करना चाहिए। यदि **अमा-युक्त प्रतिपद्** है, तो निन्दित है। **कुम्भ-स्थापन** नहीं करना चाहिए। **अमा-युक्त प्रतिपद् में कुम्भ-स्थापना** से राज्य में दुर्भिक्ष होता है और मारी-भय होता है तथा राजा की मृत्यु होती है।

द्वितीया-युक्त प्रतिपद् कुम्भ-स्थापन में श्रेष्ठ है। **द्वितीया-युक्त प्रतिपद् में कुम्भ-स्थापन** में महती सु-वृष्टि होती है तथा सु-भिक्ष होता है, प्रजा की आरोग्यता होती है। लोक-हितैषी राजा दीर्घायु होता है। तिथि-वृद्धि होने से परा-कार्या-तिथि ह्रास में पूर्वा-तिथि में स्थापन-कार्य शुभ है। प्रतिपद् परा-कार्या साम्य में सामान्य से **कलश-स्थापन** शुभ है। **उत्तर दिन** श्रेष्ठ है तथा **पूर्व-दिन** में स्थापन श्रेष्ठ नहीं है। यथा—

प्रतिपद्-वृद्धि-गामी चेत्, द्वितीये दिवसे यदा।
तदा मुहूर्त-त्रितयं, व्याप्य द्वयं वा ग्राह्य।।

हे **माधव, चित्रा** या **वैधृति** के मध्याह्न में विराम करे, ऐसी अवस्था में **द्वितीया-मिश्रित में स्थापन** कर्तव्य है। इस प्रकार **तिथि-शोधन कर कलश-स्थापन** करे।

स्थापित कलश के ऊपर अक्षत आदि स्थापित करे। **दुर्गा जी की प्रतिमा** भी **घट के समीप** स्थापित करे। अथवा **दुर्गा-यन्त्र घट के समीप** स्थापित करे और पूजन करे। रोचना, अगरु, कस्तूरी, चन्दन से **यन्त्र** लिखे।

कर्णिका-केशर-युक्त **अष्ट-दल-कमल,** उसके मध्य में **षट्-कोण,** तन्मध्य **त्रिकोण** लिखे। पूर्वादि अष्ट-दिशाओं में भू-पुर से वेष्ठित करे। **त्रिकोण** के कोनों में **आदि-त्रय-वीज** लिखे और **षट्-कोण** में शेष **छहों बीजों** को कोण में लिखे। **कमल** के मध्य में **आठों स्वरों** को लिखे। **मातृका-वर्णों से वेष्ठित** करे और **त्रिकोण** के मध्य में **माया-वीज** को लिखे। **वाग्भव**-वीज से वेष्ठित करे और **कामराज**-वीज से भी वेष्ठित करे। **षट्-कोण** के मध्य में **अष्टाक्षर-मन्त्र** लिखे। **कमल** को **जात-वेदार्ण मन्त्र** से क्रमशः वेष्ठित करे।

इस प्रकार का **यन्त्र** लिखकर **दुर्गा-मन्त्र** से **यन्त्र में न्यास** करे। तत्-पश्चात् **दुर्गा देवी का पूजन** करे। यह सब आपने जो पूछा था, कहा।

भगवान् बोले—हे **महादेव,** साधक **दुर्गा देवी का पूजन** कैसे करे, यह विस्तार से कहिए। मेरी सुनने की इच्छा है।

महादेव बोले—हे **मधु-सूदन,** सुनो। **आश्विन शुक्ल-पक्ष-प्रतिपद् से आरम्भ कर रात्रि-पर्यन्त दुर्गा-पूजन** करे। उपवास करके या रात्रि में भोजन कर या एक बार भोजन कर या हविष्यान्न-भोजन करके प्रति-दिन **दुर्गा महा-माया का पूजन** करे। व्रतोपवास-पूजा में हे देव, **दिन की हानि** न करे। जानते हुए **तिथि-वृद्धि** भी न करे। जो मनुष्य जान कर अथवा अज्ञान से करते हैं, उनको परलोक में पीड़ा होती है और

मृतक भी हो जाते हैं। बिल्कुल उपवास से रहने से **भगवती** को पीड़ा होती है। हे **केशव,** इसलिए **दिन की वृद्धि** न करे। **दुर्गा-पूजन** प्रति-दिन विधि-वत् करे। महर्षियों ने कहा है कि न **तिथि-वृद्धि** करे और न **दिन-वृद्धि** करे।

हे **विष्णो,** अब मैं **दुर्गा-पूजन** कहता हूँ, सुनो! **प्रतिपद्-दिवस** को प्रातःकाल **अ-व्रण घट-स्थापन** करके **महिष-मर्दिनी दुर्गा का पूजन** विधान से करे। उपोषणादि **सङ्कल्प** कर व्रतों का नियम कर **वेद-पारायण** करे या **चण्डी-पाठ** करे या अन्य ब्राह्मणों से कराए या **चण्डी देवी-सूक्त** पाठ करे-कराए। पूर्वोक्त **न्यास**-वर्ग को कर सङ्कल्पित होकर सब **पूजा-द्रव्यों का मूल-मन्त्र से सिञ्चन** करे। तिल-पिष्ट-मय मुद्रा का अस्त्र-मन्त्र से **अवगुण्ठन** करे। **अर्घ्य-पात्र** स्थापित करे। **तीर्थ-वारि** से **अर्घ्य** को पूरित करे। चन्दनाक्षत, पुष्प **अर्घ्य** में विधान से डाल दे। **सर्व-तीर्थों** का अंकुश मुद्रा से **आवाहन** कर, **अर्घ्य** की **चक्र** तथा **अस्त्र-मुद्रा** से रक्षा करे। **अर्घ्यस्थ जल से पूजा-द्रव्यों का प्रोक्षण** करे। **आत्मा** का भी प्रोक्षण करे। **गुरु** के चरणों को प्रोक्षित करे।

षट्-कोण के मध्य **त्रिकोण,** त्रिकोण के मध्य माया-वीज-व्यवस्थित **महा-काली-महा-सरस्वती,** दक्षिणोत्तर वामे दक्षिणे **सिंह** और **महिष,** वामे **अष्टादश-भुजा महा-लक्ष्मी** को प्रणाम कर **ध्यान** करे। तदनन्तर तीनों पीठों की मूल-वीज-त्रय (**ऐं ह्रीं क्लीं**) से पूजा करे। **ॐकार— प्रथम पीठ** है। **द्वितीय पीठ— पूर्ण-पीठ** है। **तृतीय—काम-पीठ** है। सम्प्रदायानुसार पूजन करे।

पूर्वादि दिक्षु पीठ से गणेशादि-चतुष्टय (**गणेश, क्षेत्रपाल, धर्म, ज्ञान**) की पूजा करे। आग्नेयादि चतुष्कोण में चारों देवियों—**जया, विजया, जयन्ती, अपराजिता** की पूजा करे। ये कमल के मध्य में पूजनीया हैं। हे देव! प्रागादि-क्रम से पञ्च-षटक् त्रिकं (तीन) हैं। हे सुरेशान! **विष्णु-माया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, शक्ति, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, वृति, स्मृति, दया, तुष्टि, मातृ, भ्रान्ति, व्याप्ति, चिति**—ये देवियाँ पूजनीय हैं। कमल-नाल-मूल में **माधवादि-चतुष्टय की पूजा** करे। आधार में **कूर्म, शेष, पृथिवी** की पूजा करे।

पूर्व-पत्रादि से **मातृ-मण्डल की पूजा** करे। आदि-पत्र में **हंस-वाहना ब्रह्माणी** की पूजा करे। आग्नेय-दल में **वृषारूढा माहेश्वरी** की पूजा करे। दक्षिण-दल में **मयूर-वाहना कौमारी** की पूजा करे। नैर्ऋति-कोण में **गरुड़-वाहना वैष्णवी** की पूजा करे। पश्चिम में **दंष्ट्रोद्धृत-वसुन्धरा यज्ञ-वाराही** की पूजा करे। वायु-कोण में **ऊर्ध्व-निःस्वना नारसिंही** की पूजा करे। उत्तर-दल में **गज-राज-समारूढा ऐन्द्री** की पूजा और ईशान में सदा गण-नाथ-परिवारा, अरुण-नेत्र-संयुता, मुण्ड-मण्डिता **चामुण्डा** की पूजा करे। कर्णिका के मध्य में **ब्रह्माणी** की पूजा करे।

क्रम से **षट्-कोण** में **नन्दजा, हेम-वर्णाभा, सुरक्ता, रक्त-दन्तिका, नीला, शाकम्भरी, दुर्गा, सर्व-दुर्गार्ति-हारिणी, दंष्ट्राङ्कित-मुखा, भीमा, नील-पत्र-शिरोधरा, तेजो-मण्डल-दुर्धर्षा भ्रामरी वरदार्चिता।** त्रिकोण में आदि-वीज **'ऐं'** से **काली** की पूजा करे। हे सुव्रत, तृतीये **अष्ट-भुजा देवी** पूजनीया है। तदनन्तर पृथक्-पृथक् **महिष** और **सिंह** की पूजा करे। द्वितीय-वीज **'ह्रीं'** से **महा-लक्ष्मी** की पूजा करे। हे **सुरेश्वर,** देवी की **महा-काल्यादि मूर्ति-त्रय का ध्यान** करे। यथा—

महिषघ्नीं महा-देवीं, कुमारीं सिंह-वाहिनीम्।
दानवान्तर्नयन्तीं च, सर्व-काम-दुघां शिवाम्।
ध्यायामि मनसा दुर्गां, नाभि-मध्ये व्यवस्थिताम्।।

फिर निम्न मन्त्रों से आवाहनादि पूजन करे—

१ आवाहन

संसार-भय-तारिणीं कल्याण-जननीं सत्यां कामदाम्।
करुणा-करामनन्त-शक्ति-सम्पन्नां दुर्गामावाहयाम्यहम्।

२ आसन

दुर्गे देवि! सुरेशानि, ज्ञान-मार्ग-प्रदे शिवे!
आसनं मणि-भूषाढ्यं, गृहाण त्वं सुरेश्वरि!।।

३ पाद्य

कात्यायनि महा-दुर्गे, चामुण्डे शङ्कर-प्रिये!
पाद्यं गृहाण देवेशि, भद्र-कालि! नमोस्तु ते।।

४ अर्घ्य

जगत्-पूज्ये त्रि-लोकेशि, सर्व-दानव-भञ्जिनि!
अष्टाङ्गार्घ्यं गृहाण त्वं, देवि! विश्वार्ति-हारिणि!।।

५ स्नान

ज्ञान-मूर्ते भद्र-कालि, दिव्य-मूर्ते सुरेश्वरि!
स्नानं गृहाण देवेशि! तीर्थोदक-विभूषितम्।।

६ वस्त्र

वस्त्रं स्वच्छं महार्घं वै, पट्ट-सूत्र-विनिर्मितम्।
गृहाण सुभगे देवि! पट्ट-कल्पं सुरार्चिते!।।

७ अलङ्कार

सुरासुर - शिरो - रत्न - निर्घृष्ट-चरणाम्बुजे!
अलङ्कारं गृहाण त्वं, नाना-रत्नैर्विभूषितान्।।

८ गन्ध

श्रीखण्डागरु-कर्पूर - रोचना - नाभि-संयुतम्।
गन्धं गृहाण देवेशि! सर्व-काम-फल-प्रदम्।।

९ पुष्प-माला

नाना-पुष्प-विचित्राढ्यां, पुष्प-मालां सुसंस्कृताम्।
प्रयच्छामि महा-देवि! गृहाण त्वं सुरेश्वरि!।।

१० धूप

गुग्गुलं घृत - संयुक्तं, अगर्वादि-समायुतम्!
दशाङ्गं गृह्यतां देवि! भद्र-कालि! नमोऽस्तु ते।।

११ दीप

रक्त-सूत्र-लसद्-वर्ति, गो-घृतेन च पूरितम्।
दीपं गृहाण देवेशि! नमस्त्रैलोक्य-सुन्दरि!।।

१२ नैवेद्य

दिव्यान्न-रस-सम्पुष्टं, नाना-भक्ष्येस्तु संस्कृतम्।
चोष्य-पेय-समायुक्तं, अन्नं देवि! गृहाण मे।।

१३ ताम्बूल

गृहाण देवि! ताम्बूलं, कर्पूरेण सु-वासितम्।
पूगी-फल-समायुक्तं, स-चूर्णं मुख-मण्डनम्।।

१४ नीराजन

मङ्गले कालिके दुर्गे! महिषासुर-सूदिनि!
नीराजनं मया दत्तं, गृहाणेश्वर-सुन्दरि!।।

१५ पुष्पाञ्जलि

दुर्गे देवि! नमस्तुभ्यं, सकलासुर-नाशिनि!
पुष्पाञ्जलिं गृहाण त्वं, मया दत्तं सुरार्चिते!।।

१६ नमस्कार

सर्व - मङ्गल - माङ्गल्ये, शिवे सर्वार्थ-साधिके!
शरण्ये त्र्यम्बके दुर्गे, कात्यायनि! नमोऽस्तु ते।।

१७ प्रदक्षिणा

मया जन्म-सहस्रेषु, यत्-कृतं पाप-सञ्चयम्।
तत् - सर्वं नाशय क्षिप्रं, प्रदक्षिणं पदे पदे।।

१८ दक्षिणा

पूजायाः सद्-गतार्थे तु, दक्षिणा दीयते मया।
तां गृहाण महेशानि! पूजां मे सफलां कुरु।।

महिषघ्नि महा-माये, चामुण्डे पाप-हारिणि!

यशो देहि धनं देहि, तव भक्तिं च देहि मे॥

पूर्व दिशा में **मुण्डेश्वरी-नाथ** तथा **मुण्डाम्बा-पादुका** में न्यास करे। **मातृका-पीठ** का पश्चिम में न्यास करे। हे **माधव! मातृकेश्वर-नाथ** तथा **मातृका-पादुका** का न्यास करे। **कोलापुर-पीठ** का नैर्ऋत्य कोण में न्यास करे, पूजन करे। **जालन्धर-पीठ** का दक्षिण में न्यास करे। **ज्वाला-मुख-नाथ** तथा **ज्वालाम्बा-पादुका** का न्यास करे। **कोला-पुरेश्वर-नाथ** तथा **कोलाम्बा-पादुका** का न्यास करे। **पूर्ण-गिरीश-नाथ** का पश्चिम में न्यास करे। हे प्रभो! **पूर्णेश्वर-नाथ** तथा **पूर्णाम्बा-पादुका** का न्यास करे। **सोहार-पीठ** को वायव्य कोण में स्थापित कर पूजन करे। **सोहार-नाथ** तथा **सोहाराम्बिका-पादुका** का न्यास करे। **कोला-गिरि-पीठ** का उत्तर में न्यास करे। **कोलेश्वर-नाथ** तथा **कोलाम्बा-पादुका** का न्यास-पूजन करे। **काम-हंस-पीठ** को ईशान में स्थापित करे। **योगिनी-पीठ** को मध्य में स्थापित कर पूजन करे। **कामेश्वर-नाथ** तथा **कामाम्बा-पादुका** का न्यास-पूजन करे।

आग्नेयादि कोणों में चारों बेतालों की पूजा करे—आग्नेय-कोण में **अग्नि-मुख** की, नैर्ऋत्य-कोण में **प्रेत-वाहन** की, वायव्य-कोण में **ज्वाला-मुख** की, ईशान-कोण में **धूम्राक्ष** की पूजा करे। तदनन्तर वसु-दलों में अष्ट-शक्तियों को स्थापित कर उनका पूजन करे। **अष्ट-शक्तियाँ** ये हैं—**१ ब्राह्मी, २ माहेश्वरी, ३ कौमारी, ४ वैष्णवी, ५ वाराही, ६ माहेन्द्री, ७ चामुण्डा** और **८ चण्ड-विक्रमा।** इसी प्रकार अष्ट-भैरवों की वहाँ स्थापना कर उनकी पूजा करे। **अष्ट-भैरव** ये हैं —**१ असिताङ्ग, २ रुरु, ३ चण्ड, ४ क्रोध, ५ उन्मत्त, ६ कपाली, ७ भीषण** और **८ संहार भैरव।** इसी प्रकार अष्ट-लोक-पालों की स्थापना कर उनकी पूजा करे। **अष्ट-लोक-पाल** ये हैं—**१ इन्द्र, २ अग्नि, ३ यम, ४ नैर्ऋत्य, ५ वरुण, ६ वायु, ७ सोम** और **८ ईशान।**

हे **विष्णो!** षट्-दलों में **गुरु, परम गुरु, परमेष्ठि-गुरु** और **वायु, सोम, गणेश** की पूजा करे। फिर त्रिकोण में **हृषिकेश** का **महालक्ष्मी** के संहित, **सरस्वती** का पृष्ठ भाग में **विरञ्चि**-सहित और **महा-काली** का **रुद्र**-सहित दक्षिण में पूजन करे। दक्षिण-भाग में **सिंह की पूजा** करे और वाम-भाग में **मृत्यु** की। **सिंह** और **मृत्यु** के मध्य भाग में **गणप** और **महिष** की पूजा करे। मध्य में **चण्डिका की पूजा** करे। उत्तर-भाग में **काल** की और दक्षिण-भाग में **यम** की पूजा करे। इसके बाद **धेनु, शङ्ख, शूल, चक्र, संहार** आदि मुद्राएँ दिखा कर **विसर्जन** करे।

अब **कुमारिका देवी** की चन्दनादि द्रव्यों से पूजा करे। पहले भगवती-स्वरूप कौमारी का **आवाहन** करे। हे देवेश! **त्रिपुरा, कल्याणी, रोहिणी, कालिका, चण्डिका, शाकम्भरी, दुर्गा** और **सुभद्रा**-रूप कुमारिकाओं को अलंकृत कर तत्तत् कार्य-वशात् उन कन्याओं की पूजा करे। दो से लेकर दस वर्ष तक की कन्याओं की क्रम-पूर्वक पूजा करनी चाहिए। दो वर्ष की **'कौमारी'**, तीन वर्ष की **'त्रिपुरा'**, चार वर्ष की **'कल्याणी'**, पाँच वर्ष की **'रोहिणी'**, छः वर्ष की **'कालिका'**, सात वर्ष की **'चण्डिका'**, आठ वर्ष की **'शाकम्भरी'**, नौ वर्ष की **'दुर्गा'** और दस वर्ष की कन्या **'सुभद्रा'** कही गई है।

दस वर्ष से अधिक अवस्थावाली कन्या की पूजा देव-पूजन में निषिद्ध है। विवाह के बाद कन्या नहीं रह जाती। उनका पूजन न करे। कन्याओं की तब तक पूजा करे, जब तक वे

अ-पुष्पा हों। दुःख-विनाश के लिए, सिद्धि-प्राप्त्यर्थ, शत्रु-नाशार्थ, आयुर्बल बढ़ाने के लिए, कुल-वृद्धि-हेतु **कुमारिकाओं का पूजन** श्रेष्ठ है। हे **माधव!** शत्रु का नाश करने के लिए **'काली'**-कन्या की पूजा करे। संग्राम में विजय पाने के लिए **'चण्डिका'** की पूजा करे। सर्व-पापों के विनाशार्थ **'शाम्भवी'**-कन्या की पूजा करे। दुःख-विनाश के लिए **'दुर्गा'**-नाम की कन्या की पूजा करे। हे कमला-पते! सम्पूर्ण अभीष्टों की सिद्धि के लिए **'सुभद्रा'**-नाम की कन्या का पूजन करे।

एक-एक कन्या का प्रति-दिन पूजन करे अथवा **वृद्धि-क्रम** से प्रतिपदा को एक, द्वितीया को दो, तृतीया को तीन—इस प्रकार **नवमी**-पर्यन्त पूजन करे। अथवा **द्विगुण-त्रिगुण** प्रति-दिन पूजा करे। सर्व-कार्यों की सिद्धि के लिए **ब्राह्मण-कन्या** की, विजय-प्राप्त्यर्थ **क्षत्रिय-कन्या** की, धन के लिए **वैश्य-कन्या** की और कल्याण के लिए **शूद्र-कन्या** की पूजा करे। दारुण कार्यों की सिद्धि के लिए **अन्त्यज-जाति की कन्या** का पूजन करे। पूजा **देवी-भाव** से करनी चाहिए। घृणा इत्यादि न होना चाहिए। सर्वाङ्ग रोमवाली, रोगिणी, कुब्जा, खञ्जा, कु-रूपा, हीनाधिकाङ्गी, सदोषा कन्याएँ पूजा-कार्य में निषिद्ध हैं। उनकी पूजा न करे। कुलाचारी के गृह में उत्पन्न कन्या की पूजा सम्पूर्ण कार्यों को सिद्ध करती है। हे महा-मते! अब पूजन के मन्त्र कहते हैं—

कुमारी

जगत्-पूज्ये जगद्-वन्द्ये, सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि!
पूजां गृहाण कौमारि! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते॥

त्रिपुरा

त्रिपुरां त्रिगुणां धात्रीं, ज्ञान-मार्ग-स्वरूपिणीम्।
त्रैलोक्य-वन्दितां देवीं, त्रि-मूर्ति पूजयाम्यहम्॥

कल्याणी

कलात्मिकां कलातीतां, कारुण्य-हृदयां शिवाम्।
कारुण्य-जननीं नित्यां, कल्याणीं पूजयाम्यहम्॥

रोहिणी

अणिमादि-गुणोदारा, मकारादि-स्वरात्मिकाम्।
शक्ति-भेदात्मिकां लक्ष्मीं, रोहिणीं पूजयाम्यहम्॥

काली

कामाधारां काम-रूपां, काल-चण्ड-स्वरूपिणीम्।
कामदां करुणा-धारां, कालिकां पूजयाम्यहम्॥

चण्डिका

चण्ड-वीरां चण्ड-मायां, चण्ड-मुण्ड-विनाशिनीम्।
पूजयामि च देवेशीं, चण्डिकां पूजयाम्यहम्॥

शाम्भवी

सुखानन्द-करीं शान्तां, सर्व-देव-नमस्कृताम्।
सर्व-भूतात्मिकां देवीं, शाम्भवीं प्रणमाम्यहम्॥

दुर्गा

दुर्गमे दुस्तरे चैव, दुःख-त्रय-विनाशिनीम्।
पूजयामि सदा भक्त्या, दुर्गा दुर्गार्ति-नाशिनीम्॥

सुभद्रा

सुन्दरीं स्वर्ण-वर्णाभां, सुख-सौभाग्य-दायिनीम्।
सुभद्र - जननीं देवीं, सुभद्रां प्रणमाम्यहम्॥

सुन्दर वस्त्रों और गन्ध-पुष्पादि से **कुमारिकाओं का पूजन** कर उन्हें नाना प्रकार के भक्ष्य-भोज्य मधुर खीर आदि खिला कर सन्तुष्ट करे। राजादि सम्पन्न व्यक्तियों को मद्य-मांसादि वस्तुओं से **कुमारी-सत्कार** करना चाहिए। इसी प्रकार **प्रति-दिन कन्या-पूजन** करे।

चौंसठ-योगिनियों के नाम अब यहाँ कहे जाते हैं। इनमें से प्रत्येक सुख-दायिनी की पूजा अलग-अलग नामोच्चार-पूर्वक करनी चाहिए। उक्त **योगिनियों** के नाम इस प्रकार हैं—

१ गजानना, २ सिंह-मुखी, ३ गृद्धास्या, ४ महेश्वरी, ५ उष्ट्र-ग्रीवा, ६ हय-ग्रीवा, ७ काल-रात्रि, ८ निशाचरी, ९ कङ्काली, १० रौद्र-जित्-कारी, ११ फेत्कारी, १२ भूत-डामरी, १३ वाराही, १४ शरभास्या, १५ प्रेताक्षी, १६ मांस-भोजिनी, १७ रुद्र-काली, १८ डाकिनी, १९ काली, २० शुक्लाङ्गी, २१ कलह-प्रिया, २२ उल्लूकिका, २३ शिवा, २४ धूम्राक्षी, २५ चित्र-नादिनी, २६ ऊर्ध्व-केशी, २७ मद्र-केशी, २८ शव-हस्ता, २९ अस्थि-मालिनी, ३० कपाल-हस्ता, ३१ रक्ताक्षी, ३२ श्येनी, ३३ रुधिर-पायिनी, ३४ खड्गिनी, ३५ दीर्घ-लम्बोष्ठी, ३६ पाश-हस्ता, ३७ अवलोकिनी, ३८ काक-तुण्डा, ३९ पाश-हस्ता, ४० धूर्जटी, ४१ विष-भक्षिणी, ४२ शिशुघ्नी, ४३ पाप-हन्त्री, ४४ मयूरी, ४५ विकटानना, ४६ भय-विध्वंसिनी, ४७ प्रेतास्या, ४८ प्रेत-वाहिनी, ४९ कोटराक्षी, ५० ललजिह्वा, ५१ अष्ट-वक्त्रा, ५२ सुर-प्रिया, ५३ व्यात्तास्या, ५४ धूम-निःश्वासा, ५५ त्रिपुरा, ५६ भुवनेश्वरी, ५७ बृहत्-तुण्डा, ५८ दण्ड-हस्ता, ५९ प्रचण्डा, ६० चण्ड-विक्रमा, ६१ स्थूल-केशी, ६२ बृहत्-कुक्षि, ६३ यम-दूती, ६४ करालिनी।

उक्त नामों को जानकर साधक पूजन करे। हे देवेशि! इस पूजन के करनेवाले को किसी प्रकार की भूत-बाधा नहीं होती। पूजन के बाद उक्त नामों का पाठ करने से **योगिनी**-वृन्द आकर साधकों को भूत-भविष्य का परिचय दिया करता है। अतएव इस प्रकार **'नव-रात्रि'** में **त्रिकाल-पूजन** करे और **रात्रि-जागरण** करे।

प्रतिपदा-तिथि के दिन **देवी की प्रतिमा** स्थापित करे। प्रतिमा सुवर्ण या रजत की हो या मृण्मयी हो। जिसके कुल में जिसका पूजन होता है, उसके गृह में उसी की पूजा का विधान है। हे **माधव!** प्रतिपदा को **रात्रि में पूजन** का विधान है।

द्वितीया-तिथि में **विशेष अर्चन** का विधान है, सुनो। हे माधव! पूर्वोक्त विधान से **दो कुमारिकाओं का पूजन** करे और **रात्रि में जागरण** करे। गीत-वाद्य के साथ सुगन्धित जल से पूर्ण कलश से पूर्वोक्त **प्रतिमा का अभिषिञ्चन** करे और रात्रि में चन्दनादि से उसे अनुलेपित कर उसका **पूजन** करे। रक्त-चन्दन, रक्त-पुष्प चढ़ाकर नाना प्रकार के धूपों से धूपित करे। दाहिनी और बाईं ओर एक-एक **दीपक** स्थापित करे, जो अखण्ड हों। हे महा-भुज! **नवमी**-पर्यन्त इसी प्रकार पूजन करे।

हे **गरुड़-ध्वज! तृतीया-तिथि** में पूर्वोक्त प्रकार से पूजन-पूर्वक आभूषण प्रदान करे। देवी के चरणों को यावक से रँगे और देवी-भक्ति-परायण होकर **पत्रावली की रचना** करे।

चतुर्थी-तिथि में पूजन कर **विश्वेशी का केश-प्रसाधन** करे।

पञ्चमी-तिथि के प्रातः पूर्वोक्त विधान से देवी का पूजनादि कर तीर्थ-जल से पूर्ण **कलश की स्थापना** करे। फिर भगवती को विविध प्रकार के वस्त्र पहनाए।

षष्ठी-तिथि में हे महा-भाग! सिन्दूर के सीमान्त-मण्डल बनाकर चरणों में कुंकुम लगावे। फिर भगवती के समीप **महिष की स्थापना** करे और देवी के प्रति छाग या मेष का श्रद्धा-पूर्वक समर्पण करे। छाग के अभाव में कूष्माण्ड या श्रीफल को मनोहर वस्त्र से वेष्ठित कर चन्दन-चर्चित कर अर्पित करे।

सप्तमी-तिथि में बिल्व-पत्र और करवीर-पुष्पों से **पूजन** करे। अष्ट-धूपों से धूप प्रदान करे।

अष्टमी-तिथि में प्रातःकाल सहस्र-पल पञ्चामृत से **भगवती को स्नान** कराए। फिर मुक्ता-हार-मयी माला पहनाए या पुष्प-मयी मनोहर माला समर्पित करे। हे धराधीश! मूल-ऋक्ष से संयुक्त अष्टमी **महा-अष्टमी** कही गई है।

देवी के पूजन में **विद्या-प्राप्ति** की कामना रखनेवाले व्यक्ति को किसी ब्राह्मण के तत्त्वावधान में **दुर्गा-पुस्तक की स्थापना** कर प्रति-दिन **सरस्वती का पूजन** करना चाहिए। उस दिन **अनध्याय** करे अर्थात् न पढ़े, न लिखे और न पढ़ाए। हे **माधव!** जो इस नियम की उपेक्षा कर हठ-पूर्वक पढ़ता-लिखता है, उस मूढ़-चेतस मनुष्य का एक वर्ष का पुण्य नष्ट हो जाता है, धन का भी नाश हो जाता है और वह व्याकुल-चित्त बन जाता है। अतएव विद्या और धन की कामना करनेवाला साधक व्यक्ति सर्वात्मना **पुस्तक-रूपा सरस्वती का पूजन** करे, पढ़े नहीं।

मूल में स्थापन कर श्रवण में विसर्जन करे। धन की इच्छा रखने-वाला साधक **अष्टमी** के दिन भगवती की **महा-पूजा** पञ्च-तत्त्वों से करें। पूजा के बाद **दुग्ध-पान** करे। दुग्ध-पान करने से भगवती तृप्त होती है और **महा-काली** सन्तुष्ट हो जाती है। हे प्रभो! **मध्य-रात्रि में देवी के प्रसन्नार्थ हवन** करे।

विष्णु भगवान् बोले—हे प्रभो **शङ्कर!** देवी की प्रसन्नता के लिए किस प्रकार, किस विधान से **हवन** करे और उसे किस बेला या समय में करे? हे **महा-देव!** मुझसे यह विस्तार-पूर्वक कहो।

शङ्कर भगवान् ने कहा—हे महा-प्राज्ञ विष्णो! **'हवन का विधान'** सुनो। **अष्टमी की महा-रात्रि** में, जैसा कि लिखा है—

अर्द्ध - रात्रेरुर्ध्व - परं, मुहूर्त-द्वयमेव च।
सा महा-रात्रिरुदिता, जपार्चन-फल प्रदा।।

अर्द्ध-रात्रि के बाद दो मुहूर्त—दो बजे पर्यन्त **'महा-रात्रि'** कही जाती है। **'महा-रात्रि'** जप और अर्चन का फल देनेवाली है। उसी **'महा-रात्रि'** में अथवा **नवमी की 'महा-रात्रि'** में **'हवन'** करे। पूजनोत्तर काल में राजा देवी की प्रसन्नता के लिए **बलिदान**-विधान से महिष पशु का खड्ग से एक घात में हिंसन करे। अथवा छाग या मेष की **बलि** प्रदान करे। भक्ति में तत्पर होकर एक घात में बलि दे। अथवा पुरुष के प्रतिनिधि-स्वरूप कूष्माण्ड का छेदन करे। हे **विष्णो!** ब्राह्मण के लिए सदैव कूष्माण्ड की ही बलि देने का विधान है।

हे **सुराधीश!** अथवा **'श्री-फल'** को प्रदान करे। **'श्री-फल'** का छेदन करने का विधान नहीं है। विधि के साथ **बलि** दे। ब्राह्मण माषान्न से 'बटक' (बड़ा) बनाकर **बलि** प्रदान करे।

देवी के पूजन में **रवि-शुद्धा 'महाऽष्टमी'** श्रेष्ठ है। **रवि-शुद्धा महाऽष्टमी** में देवताओं के कार्य की सिद्धि के लिए **भद्र-काली की उत्पत्ति** हुई है। **सप्तमी से युक्त अष्टमी** में पूजन करने का विधान है। जल-दैवत में पूजा का विधान है। **'वैश्व-देव नक्षत्र'** में देवी की पूजा करने से दुःख मिलता है। इसलिए **'मूलर्क्ष' से युक्त अष्टमी** में पूजा करे। जिस काल में पूजा करे, उसमें **सूर्यास्त के समय अष्टमी** रहनी चाहिए। ऐसे ही समय में **पूजा** करने का विधान है, परन्तु विद्वान् व्यक्ति **नवमी से युक्त अष्टमी** में कभी पूजा न करे। सदा सुख

पाने की इच्छावाले साधक को **'सप्तमी से बिद्ध' अष्टमी** में **पूजा** करनी चाहिए; परन्तु **'नवमी-युक्ता' अष्टमी** में कभी पूजा न करे, क्योंकि उसमें पूजा करने से धन, पुत्र, राष्ट्र का नाश होता है, कुल के आयुर्बल का विनाश होता है। जो अज्ञान-वश **'पर-बिद्धा' अष्टमी** में पूजा करते हैं, उनके राष्ट्र में दुर्भिक्ष होता है। दस वर्ष अथवा पाँच वर्ष का दुर्भिक्ष होता है। **'पर-बिद्धा' अष्टमी** में जो पूजा करते हैं, उनको दुःख होता है और पुत्र का भी विनाश होता है।

'महा-अष्टमी भद्रायां'—अर्थात् **'भद्रा'** में देवी की पूजा श्रेष्ठ है क्योंकि **भद्रा—भद्र-काली-स्वरूपिणी** है। **'भद्रा'** में पूजा करने से कल्याण करती है। **'भद्रा'** में **भद्र-काली की पूजा** कल्याण-कारक है। अतएव **'सप्तमी-बिद्धा' अष्टमी** कल्याण-कारक है। **'हवन-पूजन'** के कर्म में प्रशस्त है।

हे विशालाक्ष भगवन्! **नवमी** में भी **हवन** का विधान है। **देवी-पूजन— पूर्वक 'पारण'** भी करे। **'अष्टमी-बिद्धा' नवमी— 'पारण' में श्रेष्ठ** है। **नवमी— 'दशमी-बिद्धा'** कभी न करे, अनिष्ट-कारक है। **'दशमी-बिद्धा' नवमी में पारण** करने से सात जन्म का किया पुण्य नष्ट हो जाता है। जो मोह-वश **दशमी-बिद्धा नवमी** में **चण्डिका का अर्चन** करता है और **'पारण'** करता है, उसका पुण्य निरर्थक होता है। **'अष्टमी पूर्व-बिद्धा'** और **'पर-बिद्धा अष्टमी'** ह्रास-वृद्धि के क्रम से जानना चाहिए, **नवमी अष्टमी-युता।** ऐसी अवस्था में **'पारण'** के पूर्व-दिवस रात्रि में **हवन** करना प्रशस्त है। **नवमी** शङ्कर-मिश्रित होने से **नवमी में 'पारण'** श्रेष्ठ है।

दुर्गा के 'पारण' में दिन की वृद्धि न करे। जो पुरुष मोह से **'पारण'** देर से करते हैं, उन्हें अशुभ होता है। जो मोह से **'पारण'** दशमी के दिन करते हैं, उस राजा का राज्य नष्ट हो जाता है और दुर्भिक्षादि-भय होता है। **दशमी में 'पारण'** करने से नृप-हीन राज्य हो जाता है। इससे **नवमी में भक्ति-पूर्वक 'पारण'** करे। दुर्गोत्सवे नव-रात्रि-व्रते हे देव! **सात उपवास** करे। **अष्टम दिन हवन** करे। उसी दिन किञ्चित् **भोजन** कर लेना चाहिए। तब **नवमी में 'पारण'** करे। अन्यथा दुःखदा होती है।

नवमी में 'पारण' करने से देवी कुल की वृद्धि करती है और **दशमी में 'पारण'** करने से भगवती कुल का विनाश करती है। इस कारण **'पारण'—नवमी में श्रेष्ठ** है। **दशमी में 'पारण'** राजा नल ने किया था। इसलिए उनका धन-नाश हो गया। राजा पुष्कर ने **नवमी में 'पारण'** किया था, इसलिए महा-सम्पदा प्राप्त की थी। इस कारण हे देव! **नवमी में ही 'पारण'** करने का विधान है। **दशमी** में कभी **'पारण'** न करे।

नवरात्र्यारम्भ के बाद यदि **'सूतक'** पड़े, तब भी देवी-भक्त को विधान है कि **भगवती की पूजा** करें। **कोई दोष नहीं** है। **नवमी में हवन भी करें, कोई दोष नहीं** है। अन्त में **ब्राह्मण-भोजन** भी करा सकते हैं, **दान** भी कर सकते हैं।

''मल-मास' में दुर्गोत्सव का निषेध है, नहीं करना चाहिए। यदि करे, तो सब किया हुआ निष्फल हो जाता है। **गुरु-शुक्र के अस्त होने** से, **सिंहस्थ होने** से, हे विष्णो! देवी-पूजा का विधान नहीं है।

नव-रात्र्यारम्भ में **'प्रतिपदा'** का ही सब विचार है, **'द्वितीया'** से विचार नहीं है। अब **'हवन की विधि'** सुनो।

हवन की विधि

सम-भूमि में हस्त-मात्र का **'चतुरस्र-कुण्ड'** अथवा **'योनि त्रिकोण-कुण्ड'** बनाए। **चतुरस्र** अथवा **योनि-कुण्ड** दोनों का विधान है। **संक्षिप्त होम** के विधान से **हवन** करे। देश-काल का कीर्तन करके बाद में अपनी कामना का

उच्चारण करे। आठों संस्कारों से **चतुरस्र** या **योनि-कुण्ड** को संस्कृत करे। **अग्नि-स्थापन** करे।

हे देव! माया-वीज **'ह्रीं'** का उच्चारण करके **'धेनु-मुद्रा'** दिखाए। **'मूल-मन्त्र'** से, स्व **इष्ट-वीज** से, **कुशा** से **वेदी** या **कुण्ड का मार्जन** करे। मार्जन के बाद **लेपन** करे। प्रागग्र स्रुव-मूल से **वेदी** या **कुण्ड** में तीन रेखा करे। रेखाओं से पांशु धूलि लेकर **कुशा से अभ्युक्षण** करे। तब **कुण्ड** का **गन्धादिक** से, **'मूल-मन्त्र'** से पूजन करे। **'मूल-मन्त्र'** से समीकरण करे। **'योनि-मुद्रा'** और **'लिङ्ग-मुद्रा'** दिखाए। ये ही आठ संस्कार हैं। मङ्गल नाम-करण कर **'अग्नि-स्थापन'** करे। अग्नि-स्थापित **कुण्ड** के दक्षिण चण्डिका-पाठ-तत्त्वज्ञ ब्राह्मण को बैठाए।

कुशा से परिसरण करे। तब **आज्य घी का संस्कार** करे। बाद में **हवन-द्रव्य का संस्कार** करे। प्रथम एक शमी से **हवन** करे। **दक्षिण-जानु भूमि में करके अग्नि-मुख में आहुति** दे। **स्रुव से अग्नि-मुख में आज्याहुति** करे। **नवाक्षर से आठ आहुति घी से** करे।

हे विष्णो! तदनन्तर **प्रधान देवता का हवन** त्रि-मधुर-प्लुत उत्तम प्रधान द्रव्य **पायसान्न तिल, किंशुक** (पलाश), **सर्षप, सिद्धार्थ** (पीली सरसों), **सुपारी, लावा, धान का दूर्वांकुर, यव, श्रीफल** (बेल) और नाना प्रकार के **फल** से, **लाल करवीर** के पुष्प, **लाल कमल, रक्त-चन्दन**-खण्ड, **गुग्गुल,** मनोहर सुगन्धित और द्रव्यों से **हवन** करे। **सप्त-द्वीपेश्वरी भगवती** का ध्यान कर विधि-वत् **हवन** करे। **'चण्डी-पाठ'** से **हवन** करे। प्रथम **'कवच'** करे। तदनन्तर **'अर्गला'**। इसके बाद **'कीलक'**। इसके बाद **'सप्तशती' का पाठ** करे। **'सप्तशती'** के बाद **'रहस्य-त्रय'** पल्लव-रूप करे। यथा—

चण्डी-पाठे तथा होमे, क्रम उक्तो मनीषिभिः।
प्रति-श्लोकं च जुहुयात्, सर्व-द्रव्याणि च क्रमात्॥
नवाक्षरे वा देव! नमो देव्या हुनेति वा।
ततो वै नव-दुर्गायाः, प्रीतये नवकं हुनेत्॥

अब **नव-दुर्गा का हवन** कहते हैं। यथा—

नन्दा, रक्त-दन्तिका, शाकम्भरी, दुर्गा, भीमा, भ्रामरी, कालिका, शिव-दूती, प्रजा-पति इत्यादि को हवन कर स्विष्ट-कृद्-हवन करे। तब **पूर्णाहुति** करे। गन्ध, पुष्प, फल, पत्र-स्रुव के अग्र-भाग पर धर घृत-प्लुत करे। **'मूल-मन्त्र' से हवन** करे। घृत की अक्षीण धारा देते हुए **पूर्णाहुति का सङ्कल्प** करके शेष कार्य को समाप्त करे। अपने शिर पर **चण्डी-पाठकों से अभिषेक** कराए। इसके बाद विविध प्रकार की दान-दक्षिणा ब्राह्मणों को दे। दुर्गा की प्रसन्नता के लिए **रात्रि में जागरण** करे।

महादेव बोले—होम के अन्त में **नवमी** में नव-संख्यक ब्राह्मणों को भोजन कराए। षड्-रसोपेत मधुर अन्नों को, दधि-मधु-आज्य खण्डों को खिलाए और **कुमारिकाओं को भोजन** कराए। आभूषण, वस्त्र, दक्षिणा देकर उन्हें प्रसन्न करे। **कुमारी** भी नव-संख्यक रहें। देवी में भक्ति-भाव से **बलिदान** भी रात्रि में करे और **दशमी** में महा-भक्ति के साथ **भगवती का पूजन** कर प्रतिमा को रथ पर बैठाकर अपने नगर में, ग्राम में घुमाए। घुमाने के समय गाना गाते हुए, बाजा बजाते हुए, वेद-पारायण करते हुए, नर-सिंहा बजाते हुए, महा-नदी की प्रवाह-धारा में **विसर्जन** करे। तब ब्राह्मण को दान-दक्षिणा देकर स्वयं भी भाइयों के साथ भोजन करे।

हे देव! यह मैंने कहा और अन्य भी कहते हैं, सुनो। हे रमा-पते! इस विधान से जो पुरुष या नारी **'नव-रात्रि'** को करते हैं, वे सहस्रों यज्ञ के फल के भागी बनते हैं। पुरुष अथवा नारी इस प्रकार से **'नव-रात्रि'** समाप्त करे। देवालय में, गृह में, तीर्थ में वह वाञ्छित फल को प्राप्त करता है। **अकिञ्चन, निर्धन, अशक्त प्राणी 'नव-रात्रि-व्रत' न करे।** एक-भुक्त हविष्यान्न करे अथवा नक्त-व्रत-रात्रि में भोजन करे या फलाहार करके

रहे और **'नव-रात्रि-व्रत'** को पूर्ण करे। या तीन दिन **सप्तमी से नवमी**-पर्यन्त रहे या **आदि प्रतिपद् से पञ्चमी**-पर्यन्त रहे। या **'अष्टमी व्रत'** रहे। एक दिन भी करने से **'नव-रात्रि-व्रत'** का फल होता है। हे देव! इसलिए **मात्र एक 'अष्टमी व्रत'** से ही **'नव-रात्रि-व्रत'** का फल होता है।

हे सुर-श्रेष्ठ! जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक **'नव-रात्रि-व्रत'** करते हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त करते हैं। पुत्र-पौत्रादि-सम्पदाओं को प्राप्त करते हैं। उनके ऊपर भगवती प्रसन्न रहती है और मैं भी प्रसन्न रहता हूँ। **दशमी** में सायं-काल के समय **शमी**-वृक्ष में रहनेवाली जगदम्बा को पूजते हैं। वे साधक पूजन करते ही घर में सुख का आवाहन कर लेते हैं।

हे देव! **'नव-रात्रि' का दूसरा कृत्य** सुनो, मैं कहता हूँ। **प्रतिपद् से नवमी**-पर्यन्त **शस्त्रों का पूजन** करे। प्रतिपद् को **खड्ग**-पूजन करे। द्वितीया को **धनुष** का पूजन करे। तृतीया को **चक्र** का पूजन करे। चतुर्थी को **ढाल** का पूजन करे। पञ्चमी में **शूल** का पूजन करे। षष्ठी में **परशु** का पूजन करे। सप्तमी में **गदा** का पूजन करे। अष्टमी में **शक्ति** (भाले) का पूजन करे। नवमी में **सायुधा देवी का पूजन कर पारण** करे।

हे विष्णो! इसी प्रकार **गजाश्वों** का भी पूजन करे। **प्रतिपदा** से लेकर **नवमी**-पर्यन्त गजाश्वों का **अभिषेक** करे। **प्रतिपदा** से लेकर एक-पिण्ड प्रति-दिन बनाकर, पायसान्न स-घृत गुड़-मिश्रित करके गजाश्वों को खिलावे। शहद भी मिलाकर पिण्ड बनावे और सुरा भी मिलाकर दे। **आश्विन नव-रात्रि शुक्ल-पक्ष प्रतिपद् से** शुरू करे। **स्वाति-योग** में पूर्व समय में **उच्चैःश्रवा** आया है। इसलिए हयों की पूजा करे। **त्वाष्ट्र** में **गजाश्वों** की पूजा आरम्भ न करे।

हे रमा-पते! **वायव्यर्क्ष** में **राज-चिह्नों का पूजन** करे। **प्रतिपद्** से लेकर **नवमी**-पर्यन्त **तुरगों** (अश्वों) का पूजन करे। न बाहर निकाले, न किसी सवारी में जोते, न चढ़े न कभी मारे और न ताड़न करे। रेशमी वस्त्रादि उढ़ावे। **छत्र, चामरादि राज-चिह्नों का पूजन** करे। अश्वों को, गजों को वस्त्रादि आभूषणों से भूषित कर गन्धादि अक्षत-पुष्प-मालाओं से पूजन कर दशाङ्ग धूपों से धूपित कर **दीप** दिखाए। नैवेद्य देकर **नाम-मन्त्रों से पूजन** करे।

हे **गरुड़-ध्वज!** अब **अश्वों के नाम** कहते हैं—**१ उच्चैःश्रवा, २ मेघ-पुष्पक, ३ क्षेम-कृद्, ४ बाजी-राज-हंस, ५ सर्व-सौख्य-प्रद श्रेष्ठ-बाजी मकरालय, ६ सुलोचन, ७ सुभ्रुवाह, ८ कालकेश** और **९ सिद्धि-दायक।** इन घोड़ों का पूजन करने से सब देवताओं की पूजा हो जाती है। **वेद**-मन्त्रों अथवा **पुराण** के मन्त्रों से पूजन करे।

अब **गजों** को कहते हैं। यथा—**१ ऐरावत, २ पुण्डरीक, ३ कुमुद, ४ वामन, ५ प्रतीक, ६ अञ्जन, ७ सर्व-भौम, ८ विजय** और **९ पुष्प-दन्त।**

प्रतिपद् से लेकर **नवमी**-पर्यन्त प्रत्येक का पूजन करे। अश्वों के पूजन में मन्त्र सुनो—

गन्धर्व-कुल-जातस्त्वं, मा भूयो कुल-नाशकः।
सत्य-वाक्येन सोमस्य, ब्रह्मणो वरुणस्य च॥
प्रसादाच्च हुताशस्य, वर्गय त्वं तुरङ्गम!
तेजसा चैव सूर्यस्य, ऋषीणां तपसा तथा॥
रुद्रस्य ब्रह्म-वीर्येण, वायोश्चैव बलेन च।
स्मर त्वं राज-पुत्रस्त्वं, कौस्तुभं च मणिस्त्वरः॥
निर्हन्तो यदि चाछिन्नो, युद्धं याति तुरङ्गमः।
रिपून् विजित्य समरे, सह भर्ता सुखी भव॥

उक्त मन्त्र से प्रति-दिन हयों का नवमी-पर्यन्त पूजन करे। अब गजों के पूजन का 'मन्त्र' कहते हैं —

पान्तु त्वां वसवो रुद्रा, आदित्याश्च मरुद्-गणाः।
भर्तारं रक्ष नागेन्द्र! स्वामिनं प्रतिपालय॥
अवाप्नुहि जयं युद्धे, गमने स्वस्ति-मान् भव।

वस्त्रैर्नाना - विधैश्चैव, पुष्पैर्गन्धैर्मनोहरैः।।
प्रथमो मत्स्य-रूपी स्याद्, द्वितीयः कूर्म-नायकः।
तृतीयो यज्ञ - वाराहश्चतुर्थो नृ-हरि-स्मृतः।।
वामनः पञ्चमः प्रोक्तो, षष्ठो भार्गव-संज्ञकः।
सप्तमो जानकी - नाथो, देवकी-नन्दनोऽष्टमः।।
नारायणस्तु नवमो, नव - नारायणा स्मृताः।

इस प्रकार प्रतिपद् से लेकर नवमी पर्यन्त गजों की पूजा करने से भगवती प्रसन्न होकर सुख देती है।

नवमी-युक्त दशमी में **शमी-वृक्ष** में **अपराजिता भगवती** की वैष्णवर्क्ष में पूजा करे। क्षेम के लिए, विजय के लिए, वेदोक्त विधान से पूजन करे। **एकादशी-बिद्धा दशमी** को पूजा-कार्य में न लेना चाहिए। **नवमी-विद्धा दशमी** में **इन्द्र** ने **शमी-पूजा** हेतु प्रस्थान किया था। इसलिए जम्भ-प्रभृति दैत्यों को विजय किया था। अतः **नवमी-बिद्धा दशमी-पूजन** श्रेष्ठ है। **दशमी** का उल्लङ्घन करके जो **एकादशी** में **शमी-पूजन** करते हैं, वह पूजन व्यर्थ हो जाता है। **एकादशी-बिद्धा दशमी** में विजय के लिए कभी प्रस्थान न करे। किञ्चित् सन्ध्या बीतने पर कुछ तारा उदय होने पर **'विजय'**-नामक योग होता है। उसी समय विजय हेतु प्रस्थान करे। यह **सर्वार्थ-साधक योग** है। मनोरथ की सिद्धि होती है। **शमी से प्रार्थना** इस प्रकार करे—

अपराजिते! नमस्तेऽस्तु, नमस्ते विजये जये!
जगन्मातः सुरेशानि! कुण्डल-द्योतिताननने!।।
त्वं चापराजिते देवि! शमी-वृक्ष-स्थिते जये!
राज्यं मे देहि विश्वेशि! शत्रूणां च पराजयम्।।
अमङ्गलानां शमनीं, दुःकृतस्य च शमनीम्।
दुःस्वप्न-शमनीं धन्यां, प्रपद्येऽहं शमीं शमाम्।।
शमी शमयते रोगान्, शमी शमयते रिपून्।
शमी शमयते पापं, शमी सर्वार्थ-साधिनी।।
अर्जुनस्य धनुर्धात्री, रामस्य शोक-नाशिनी।
लक्ष्मण-प्राण-दात्री च, सीता-शोक-शमङ्करी।।
अपराजिते! नमस्तेऽस्तु, जयदे! काम-दायिनी।
यात्रामहं करिष्यामि, सिद्धिं सर्वत्र मे कुरु।।
मन्त्रैर्वेद - मयैश्चैव, पूजयेच्च शमी-स्थिताम्।
अपराजितां भद्र-रूपां, विजयार्थ-प्रदां शिवाम्।।
क्रमेणेन्द्रस्य ककुभिः, विन्यसेत् तु पदं क्रमात्।
रिपोः प्रति-कृतिं कृत्वा, पांशुना तल-रूपिणीम्।।
शरेण शर - पुङ्खेण, बिद्धेद् हृदय - मर्मणि।
दिशां विजय-मन्त्राश्च, असि-रूपा द्वि-जातिभिः।
पठनीयास्ततो गेहं, गच्छेच्चैव पुरोधसा।
माङ्गल्यंमभिषेकं च, गुण - प्राशनमेव च।।
स्वस्ति-वाच्या द्विजाश्चैव, बन्दीभ्योऽभय-दक्षिणां।
देयाधिक्यं च रजतं, वस्त्रादि-नव-भूषणम्।।
परिधेयं स्वयं चैव, पत्नीभ्यो देयमेव च।
पुत्रादिभ्यो स्नुषादिभ्यो, मन्त्रिभ्यो देयमेव च।।
अदेयमपि तत्काले, देयं श्रद्धा - पुरःसरम्।
सम्भाव्य पौरान् भृत्यांश्च, तेषामुत्सर्जनं ततः।।
ततः पुरोधसा साकं, स्वयं गच्छेच्छमीं पुनः।
वाम-दक्षिण-पार्श्वेभ्यो, गृहीत्वा मृत्तिकां ततः।।
श्रीधरं च हिरण्यं च, पट्ट-कूलं समर्पयेत्।
गुरुं सम्पूज्य स-स्त्रीकं, ततो गच्छेद् गृहं प्रति।।

हे देव! जो मनुष्य प्रति वर्ष में ऐसा ही करता है, वह पुत्र-पौत्र, धन-धान्य प्राप्त कर नाना प्रकार के सुखों का भोग करता है। उसके राज्य में महा-मारी का भय नहीं होता है। विविध प्रकार के दुःख नहीं होते। इस कारण हे देव! इसी प्रकार **प्रति-वर्ष महोत्सव** करने का विधान है। उस साधक के ऊपर **दुर्गा** प्रसन्न रहती है। मैं भी प्रसन्न रहता हूँ और सब विश्व के देवता प्रसन्न रहते हैं। हे देव! यह **'नव-रात्र-महोत्सव'** संसार के हित के लिए आपसे कहा।

* * *

विशेष कड़ाही पूजा

* 'कुल-वाणी-रत्न' पं० रुद्रदत्त पाठक

[**'नवरात्र-व्रत'** के पारण के दिन **'अष्टमी'** या **'नवमी'** को भगवती की विशेष पूजा करनी चाहिए। यहाँ **'कड़ाही-पूजा'** की एक सरल विधि दी जा रही है। आशा है, पाठक-बन्धु इससे लाभ उठाएँगे-सं०]

'नवरात्र' में **'व्रत'** के पारण के दिन **'अष्टमी'** या **'नवमी'** को एक कड़ाही में **'हलुआ'** बनाए। फिर हलुए-सहित **कड़ाही** को भगवती के सामने रक्खे। तब **'कड़ाही'** की कड़ी में व चमचे में **'मौली'** बाँधकर **'ॐ अन्न-पूर्णायै नमः'**—इस मन्त्र से **'कड़ाही'** की पूजा करे। **'कड़ाही'** की पूजा करने के बाद भगवती को हलवे का **'प्रसाद'** लगाए। भगवती को **'प्रसाद'** रखने के पश्चात् **'अखण्ड ज्योति'** की पूजा करे। इसके लिए भगवती के सम्मुख **नारियल** पधारे (फोड़े) और **नारियल** के छोटे-छोटे टुकड़े कर हलवे के प्रसाद के साथ रखे तथा **'ज्योति'** को पाद्य-अर्घ्य-गन्ध-दीप समर्पित कर यह **'प्रसाद'** अर्पित करे। **'प्रसाद'** अर्पित करने के बाद **'ज्योति'** को **'घी'** से **'आचमन'** कराए तथा **'प्रणाम'** करे।

'ज्योति-पूजा' के बाद **'कुमारी-पूजा'** एवं **कुमारिकाओं, बटुकों** आदि को भोजन कराकर भगवती की **'आरती'** करे। **'आरती'** के पश्चात् **'विसर्जन'** करे। **'विसर्जन'** हेतु भगवती की पुनः पूजा कर **'प्रार्थना'** करे—

अचिन्त्य-रूप-चरिते! सर्व-शत्रु-विनाशिनि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।।
देहि सौभाग्यमारोग्यं, देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।।

उक्त प्रकार से **'प्रार्थना'** करने के बाद दाहिने हाथ में अक्षत व पुष्प लेकर **'विसर्जन'** हेतु कहे—

गच्छ - गच्छ, सुर - श्रेष्ठे, स्व-स्थानं परमेश्वरि !
पूजाराधन - काले च, पुनरागमनाय च ।।

यह कहकर अक्षत-पुष्प अपने चारों ओर छोड़े और **'नमस्कार'** कर **'कलश'** आदि का विसर्जन' करे।

देवी प्रसन्नार्थ एवं उपद्रव-शान्ति हेतु अनुभूत साधना

* परम पूज्य पण्डित कृष्णानन्द मिश्र 'वैद्य' प्रयाग-राज

पहले **'पूजा-स्थान'** को गाय के गोबर से लीपकर उसमें अबीर से एक षट्-कोण बनाए। **'षट्-कोण'** के बीच में सिन्दूर से **'ऐं'**-बीज लिखे। फिर उस पर **'घृत का दीपक'** रखकर **'सङ्कल्प'** करे। तब **न्यास** आदि कर **'नवार्ण-मन्त्र'** का १०८ बार **'जप'** करे। **'जप'** के बाद **'कुञ्जिका-स्तोत्र'** एवं **'श्रीदुर्गा द्वात्रिंशन्नामावली'** का पाठ (देखिए, **श्रीदुर्गा-स्तव-मञ्जरी, पृ०९९**) करे। अन्त में पुनः **'कुञ्जिका-स्तोत्र'** का पाठ कर **'नवार्ण-मन्त्र'** का जप करें। इस प्रकार साधना करने से **माँ दुर्गा की कृपा** प्राप्त होती है। समस्त दुःख नष्ट होते हैं।

* * *

श्रीदुर्गा-पूजा की विशिष्ट विधियाँ

❖ श्री के० पिच्चूमणि अयङ्गार

दक्षिण भारत में **नवार्ण मन्त्र** की **नव दुर्गाओं (१ शैल-पुत्री, २ ब्रह्म-चारिणी, ३ चन्द्र-घण्टा, ४ कूष्माण्डा, ५ स्कन्द-माता, ६ कात्यायनी, ७ काल-रात्रि, ८ महा-गौरी** और **९ सिद्धि-दात्री)** का पूजा-विधान जिस ढँग से किया जाता है, वह निराला है। **नौ माताओं की पूजा** दक्षिण भारत में स्थूल-रूप से की जाती है। सूक्ष्म-रूप से जिन **नौ माताओं की पूजा** होती है, उनमें दीक्षित साधक ही भाग लेते हैं। **सूक्ष्म माताओं के शुभ नाम** इस प्रकार हैं—

प्रथमा वन - दुर्गा च, द्वितीया शूलिनी मता। तृतीया जात-वेदा तु, चतुर्थी शान्तिरीरिता।।

पञ्चमी शबरी चेति, ज्वाला-दुर्गा ततः परम्। सप्तमी लवणा चेति, आसुरी अष्टमी स्मृता।।

नवमी दीप-दुर्गेति, नव-दुर्गाः प्रकीर्तिताः।।

अर्थात् १ वन-दुर्गा, २ शूलिनी-दुर्गा, ३ जात-वेदा-दुर्गा, ४ शान्ति-दुर्गा, ५ शबरी-दुर्गा, ६ ज्वाला-दुर्गा, ७ लवणा-दुर्गा, ८ आसुरी-दुर्गा और ९ दीप-दुर्गा।

उक्त **नव-दुर्गाओं की पूजा** 'नव-रात्र' के दिनों में तथा हर महीने की **अष्टमी, नवमी** तथा **त्रयोदशी** के दिनों में विशेष रूप से की जाती है। **'नव-रात्र'** के प्रथम तीन दिनों में दक्षिण भारत के सभी साधकों के घरों में **दुर्गा** की ही पूजा की जाती है।

श्रीदुर्गा-सप्तशती का पाठ प्रति-दिन **राहु-काल** में करना विशेष फल-दायक होता है। **अर्क-मङ्गल-गुरु-बुध-शुक्र-शनि-सोम**—इन सात दिनों में **'अर्क'** अर्थात् **रवि** के दिन सायं साढ़े चार बजे से छः बजे तक डेढ़ घण्टे का समय, **मङ्गल** के दिन तीसरे पहर तीन बजे से सायं साढ़े चार बजे तक डेढ़ घण्टे का समय, **सोम** के दिन सुबह साढ़े सात बजे से नौ बजे तक डेढ़ घण्टे का समय **राहु-काल** होता है। अतः **श्रीदुर्गा-सप्तशती का पाठ रवि के दिन राहु-काल में प्रारम्भ करके सोम के दिन सुबह राहु-काल में ही समाप्त किया जाता है।** जो लोग लौकिक और अन्य कार्यों में व्यस्त हैं, वे **राहु-काल में प्रति-दिन शत-श्लोकों का पाठ** अवश्य करते हैं। **रविवार के राहु-काल में नियमित रूप से श्रीदुर्गा-सप्तशती का पारायण** साधक लोग अवश्य करते हैं। जैसे कि **नेपाल** के द्विजों के लिए **श्रीदुर्गा-पूजा** के दिनों मांस-भक्षण अनिवार्य है, वैसे ही **दक्षिण** के कुछ द्विजों के घरों में भी **पशु-बलि** की जाती है और साधक **'महा-प्रसाद'** के रूप में उसे ग्रहण करते हैं।

राहु-काल में श्रीदुर्गा-पूजा

दक्षिण-भारत और **नेपाल** के पूजा-क्रम में अधिक भेद नहीं है। **'राहु-काल'** में **स्त्रियों द्वारा विशेषतः कन्याओं द्वारा दुर्गा-पूजा** करना एवं करवाना अधिकांश शाक्तों के घरों में प्रचलित है।

राहु-काल की समय-सारिणी

रविवार : ४॥ सायं से ६ सायं। **सोमवार :** प्रातः ७॥ से ९ प्रातः। **मङ्गलवार :** सायं ३

से ४॥ सायं। **बुधवार :** मध्याह्न १२ से १॥ बजे। **गुरुवार :** मध्याह्न १॥ से ३ सायं। **शुक्रवार :** प्रातः १०॥ से मध्याह्न १२। **शनिवार :** प्रातः ९ से १०॥ बजे।

सूर्योदय का समय जहाँ सुबह ६ बजे हो, उसी के अनुसार उपर्युक्त सारिणी दी गई है। **प्रयाग** के लिए सुबह छः बजकर सात मिनट के हिसाब से **'राहु-काल' की गणना** होती है।

अब हम यह देखें कि **'राहु'** और **'दुर्गा'** का क्या सम्बन्ध है। नौ ग्रहों में **'राहु'** और **'केतु'** आसुर-ग्रह के रूप में माने जाते हैं। **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के प्रथम अध्याय में ही है कि **मधु-कैटभ** नाम के असुर-युग्म से वर प्राप्त करने के बाद **शङ्ख-चक्र-गदा-धारी भगवान् विष्णु** ने उनके **जघन-भाग** और **शिरो-भाग** का छेदन किया, तदनन्तर **दुर्गा माता का अवतार** हुआ।

विष्णु-पुराण एवं अन्य-पुराणों में भी **दुर्गा माता** के प्रभाव का वर्णन हुआ है। उनमें यों बताया गया है कि **भगवान् विष्णु** ने **मोहिनी**-रूप धारण करके जब देवों के बीच अमृत बाँटा था, तब **'राहु'-'केतु'** भी देव-गोष्ठी में शामिल हुए, अमृत भी उन्हें मिल गया। **इन्द्र** ने उनका सिर काटा तो था, परन्तु अमृत के प्रभाव से दोनों जीवित ही रहे। एक का अमृत गले के नीचे उतर गया, अतः उसका सिर कटा हुआ धड़ ही जीवित रहा, यही **'केतु'** है। शाक्तों के अनुसार वही **केतु— 'मुण्ड'**-नाम का असुर है। दूसरे असुर का अमृत गले तक ही था, अतः उसका शिरो-भाग ही जीवित रहा। शिरो-भागवाले उसी असुर का नाम **'राहु'** है। शाक्तों के अनुसार वही **राहु— 'चण्ड'**-नाम का असुर है। **चण्डिका माता** के कहे अनुसार **काली** ने **चण्ड-मुण्ड का वध** किया, इसीलिए **काली** का नाम **चामुण्डा** बन गया। इस बात का विवरण **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के सप्तम अध्याय में मिलता है।

उसी **काली की 'राहु-काल' में पूजा** करने से हमारे अन्दर **चण्ड-मुण्ड** की जो आसुरी वृत्तियाँ हैं, उनका नाश होता है।

ज्योतिष-शास्त्र में कहा गया है कि—**'शनि-वत् राहुः, कुज-वत् केतुः'** अर्थात् **'राहु'— शनि के समान फल** देता है तथा **केतु— कुज या मङ्गल के समान।** **केतु** अर्थात् कुज— कुमार, जो उदीची दिशा का पालक है। **राहु— शनि— दक्षिण दिशा** का पालक है।

'चण्डी-कवच' में कहा गया है कि **'दक्षिणेऽवतु वाराही....उदीच्यां पातु कौमारी'**—अर्थात् **वाराही** एवं **कौमारी शक्तियों के अनुग्रह से चण्ड-मुण्ड पर विजय** मिल जाती है। **राहु-काल** में इन दोनों शक्तियों (**वाराही** और **कौमारी**) का मिलन होता है।

ज्योतिष-शास्त्र तथा **प्राणायाम-विज्ञान** में इस बात पर बल दिया जाता है कि प्रति-दिन **'राहु-काल'** में जीव का प्रवेश **सुषुम्णा नाड़ी** में सहज ही हो जाता है। उस समय जो भी मन्त्र जपा जाता है, उसकी सिद्धि हो जाती है। अन्य मन्त्रों की अपेक्षा **दुर्गा-मन्त्र** की—विशेषतः **नवार्ण मन्त्र** की—सिद्धि शीघ्र मिलती है।

शनि, राहु, कुज (मङ्गल) तथा **केतु**—ये चारों ग्रह **अग्नि** एवं **वायु** महा-भूतों के द्योतक हैं। अतः **राहु**, जो **शनि** के प्रतिनिधि हैं अर्थात् मृत्यु के द्योतक हैं, उनके चंगुल या पाश से

मुक्ति पाने के लिए **दुर्गा-मन्त्र** का जपना तथा **दुर्गा की पूजा** करना बड़ा फल-प्रद है। **दुर्गा माता** के ध्यान-श्लोक में इस बात का भी वर्णन है कि—**'गण्डौ यक्ष-यमौ'**।

निशुम्भ-शुम्भ-वध के बाद **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के **एकादश अध्याय** में **भद्र-काली की स्तुति** सभी देव-गण करते हैं। यथा—

ज्वाला-करालमत्युग्रमशेषासुर-सूदनम्। त्रिशूलं पातु नो भीतेः, भद्र-कालि! नमोऽस्तु ते॥

इन **भद्र-काली की पूजा— 'राहु-काल'** में ही करने का **ज्योतिष-शास्त्र** में विधान है। उसमें तथा **दक्षिणाम्नाय** में यह माना गया है कि **नैर्ऋति (दक्षिण-पश्चिम) दिशा— 'राहु'** की है तथा **वायव्य (उत्तर-पश्चिम) दिशा— 'केतु'** की है। **नैर्ऋति दिशा में खड्ग-धारिणी माता दुर्गा की उपासना** करने के लिए उक्त **'राहु-काल'** ही उपयुक्त है।

यह तो हम सब जानते हैं कि **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** का पाठ सभी दिनों में करना श्रेयस्कर है। यदि किसी अनिवार्य कारण-वश सभी दिनों में पाठ पूरा करने में असमर्थ हों, तो **रविवार** के **'राहु-काल'** में **प्रथमाध्याय-पाठ** का प्रारम्भ करना चाहिए। **सौ श्लोकों का पारायण** करना पर्याप्त है। **'राहु-काल' में सप्तशती के पाठ का क्रम** इस प्रकार है—

रविवार—सायं साढ़े चार बजे से छः बजे तक प्रथमाध्याय के सौ श्लोक **'भगवान् कमलेक्षणः'** (**'विशुद्ध चण्डी'—पृष्ठ ६५**) तक।

सोमवार—प्रातः साढ़े सात बजे से नौ बजे तक। प्रथम अध्याय के शेष श्लोक, द्वितीय अध्याय एवं तृतीय अध्याय के २८वें श्लोक **'तद्-वधाय तदाऽकरोत्'** (**'विशुद्ध चण्डी'—पृष्ठ** ७६) तक।

मङ्गलवार—तीसरे पहर तीन बजे से साढ़े चार बजे तक। तृतीय अध्याय के शेष श्लोक, चतुर्थ अध्याय एवं पञ्चम अध्याय के ४२वें श्लोक अर्थात् **'या देवी सर्व-भूतेषु, जाति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।'** (**'विशुद्ध चण्डी'-पृष्ठ** ८७) तक।

बुधवार—मध्याह्न १२ बजे से डेढ़ बजे तक। पञ्चमाध्याय के शेष श्लोक तथा षष्ठ अध्याय के १३वें श्लोक **'चकाराऽम्बिका ततः'** (**'विशुद्ध चण्डी'-पृष्ठ** ९४) तक।

गुरुवार—मध्याह्न डेढ़ बजे से तीन बजे तक। षष्ठ अध्याय के शेष श्लोक, सप्तम अध्याय एवं अष्टम अध्याय के ६२वें श्लोक **'रक्त-बीजो महाऽसुरः।'** (**'विशुद्ध चण्डी'—पृष्ठ** १०४) तक।

शुक्रवार—प्रातः साढ़े दस बजे से बारह बजे तक। अष्टम अध्याय का शेष एक श्लोक, नवम अध्याय, दशम अध्याय तथा एकादश अध्याय के २६वें श्लोक **'ज्वाला-करालमत्युग्रमशेषासुर-सूदनम्। त्रिशूलं पातु नो भीतेः, भद्र-कालि! नमोऽस्तु ते'** (**विशुद्ध चण्डी—पृष्ठ** ११४) तक।

विशेष— शुक्र के **'राहु-काल'** की घड़ी में उपर्युक्त श्लोक की १०८ आवृत्ति करने से

सभी कामनाओं की पूर्ति हो जाती है।

शनिवार— प्रातः ६ से १०।। बजे तक। एकादश अध्याय के शेष श्लोक से अन्तिम त्रयोदश अध्याय के अन्तिम श्लोक **'सावर्णिर्भविता मनुः'** (**'विशुद्ध चण्डी'— पृष्ठ १२४**) तक।

'सूर्य-सावर्णि' के बाद—**१ दक्ष-सावर्णि, २ ब्रह्म-सावर्णि, ३ पौष-सावर्णि (धर्म-सावर्णि), ४ रुद्र सावर्णि, ५ रौच्य-सावर्णि (देव-सावर्णि)** तथा **६ इन्द्र-सावर्णि**—इन मनुओं की भी पूजा होती है। इन मनुओं की पूजा से **'अनात्मा'** अर्थात् देह में जो आत्म-बुद्धि है, वह नष्ट हो जाती है और साधक की दृष्टि विशाल हो जाती है, वह अपनी संकुचित सीमा से बाहर आकर अपने आदि-पुरुषों के बारे में सोचने लगता है। इसलिए साधक को **चिरञ्जीवी मार्कण्डेय महर्षि** के शुभ नाम-स्मरण के बाद **चौदह मनुओं** के शुभ नामों का भी स्मरण करना अनिवार्य है। तभी साधक के विधि-वत् **प्राणायाम** करने के बाद **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के पाठ एवं पूजा के लिए उसका **'वैवस्वत-मन्वन्तरे'**-सङ्कल्प सार्थक हो सकता है।

यह तो सभी साधक जानते हैं कि क्षिप्र प्रसाद देनेवाले मन्त्रों में **श्रीदुर्गा का मन्त्र** सर्वोत्तम है। अतः यह मन्त्र सभी को सिद्ध न हो जाए, इस विचार से **ब्रह्मा, वशिष्ठ, विश्वामित्र ऋषियों के शाप** भी हुए हैं, जिनके **विमोचन** के लिए पहले निम्न प्रकार का **विनियोग** पढ़ना चाहिए—

ॐ अस्य श्रीचण्डिकायाः ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शाप-विमोचन-मन्त्रस्य वशिष्ठ-नारद-सम्वाद-साम-वेदाधिपति-ब्रह्मणः ऋषयः। सर्वैश्वर्य-कारिणी श्रीदुर्गा शक्तिः। चरित-त्रयं (ऐं ह्रीं क्लीं) वीजं। ह्रीं शक्तिः। त्रिगुणात्म-स्वरूपा-चण्डिका-शाप-विमुक्तौ मम सङ्कल्पित-कार्य-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः।

उक्त **विनियोग** के बाद विधिवत् **ऋष्यादि-न्यास, कर-षडङ्ग-न्यास, श्रीदुर्गा का ध्यान** और उनका **मानस-पूजन** कर अधिकांश साधक **श्रीदुर्गा-सप्तशती** के **पञ्चम अध्याय** के **'देवा ऊचुः—नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः'** (**विशुद्ध चण्डी'- पृ० ८५**) से प्रारम्भ करके **'भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः'** (**'विशुद्ध चण्डी'-पृ० ८८**) तक का पाठ करते हैं।

कुछ साधक लोग निम्न १८ मन्त्रों का जप करते हैं। प्रत्येक मन्त्र के अन्त में **'ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव'**—इस पद का उच्चारण करना चाहिए। यथा —

१ **ॐ ह्रीं रीं रेतः-स्वरूपिण्यै मधु-कैटभ-मर्दिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

२ **ॐ श्रीं बुद्धि-स्वरूपिण्यै महिषासुर-सैन्य-नाशिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

३ **ॐ रं रक्त-स्वरूपिण्यै महिषासुर-मर्दिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

४ **ॐ क्षुं क्षुधा-स्वरूपिण्यै देव-वन्दितायै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

५ **ॐ छां छाया-स्वरूपिण्यै दूत-सम्वादिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

६ **ॐ शं शक्ति-स्वरूपिण्यै धूम्र-लोचन-घातिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

७ **ॐ तृं तृषा-स्वरूपिण्यै चण्ड-मुण्ड-वध-कारिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।**

८ ॐ क्षां क्षान्ति-स्वरूपिण्यै रक्त-वीज-वध-कारिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

९ ॐ जां जाति-स्वरूपिण्यै निशुम्भ-वध-कारिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१० ॐ लं लज्जा-स्वरूपिण्यै शुम्भ-वध-कारिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

११ ॐ शं शान्ति-स्वरूपिण्यै देव-स्तुत्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१२ ॐ श्रं श्रद्धा-स्वरूपिण्यै सकल-फल-दायिन्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१३ ॐ कां कान्ति-स्वरूपिण्यै राज्य-वर-प्रदायै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१४ ॐ मां मातृ-स्वरूपिण्यै अनर्गल-महिम-सहितायै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१५ ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सर्वैश्वर्य-कारिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१६ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्य-कवच-स्वरूपिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१७ ॐ क्रीं काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेद-स्वरूपिण्यै ब्रह्मा-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापेभ्यः विमुक्ता भव।

१८ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महा-काली-महा-लक्ष्मी-महा-सरस्वती-स्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गा-देव्यै नमः।

कुछ साधक निम्न-लिखित एक ही मन्त्र का आदि और अन्त में सात बार जप करके शापोद्धार करते हैं—**ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिका-देव्यै शाप-नाशानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा।**

अन्य कुछ साधक **सप्तशती** के १३ : १, १२ : २, ११ : ३, १० : ४, ९ : ५, ८ : ६— इस क्रम से अध्यायों का पाठ करते हैं तथा अन्त में **सातवें अध्याय** का दो बार पाठ करते हैं।

जो भी हो, **महर्षि-वन्दना, मनु-पूजा** एवं **शापोद्धार** तथा **उत्कीलन** प्रायः सभी साधक लोग करते हैं। **उत्कीलन** के भी कई मन्त्र हैं। सबसे प्रसिद्ध मन्त्र है—**ॐ श्रीं श्रीं क्लीं हूं ओं ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय उत्कीलय ठं ठं।**

शापोद्धार एवं **उत्कीलन** से **आत्मा, जगत्** और **ब्रह्म** का एकीकरण होता है अर्थात् साम्यावस्था का दर्शन मिलता है, वही **मुक्ति** है।

दुर्गा-पूजा के प्रारम्भ में **भगवती दुर्गा** के वैष्णव-रूप का ध्यान किया जाता है। अतः **'चिदम्बर-संहिता'** के अनुसार पहले **'अर्गला'** का ही पाठ किया जाता है, बाद में **'कीलक'** और अन्त में **'कवच'** का। **दक्षिण-भारत** के **तमिलनाडु** में इसी विधान की महत्ता का प्रदर्शक **'चिदम्बरम्'** नामक नगर है, जहाँ **शिव-शक्ति के मिलन** का दिग्दर्शक **श्रीनटराज का दिव्य मन्दिर** है। संस्कृत-व्याकरण के अष्टाध्यायी के रचयिता **महर्षि पाणिनि** एवं **दुर्गा देवी** के अन्तरङ्ग उपासक **महर्षि कात्यायन** को इसी क्षेत्र में सिद्धि प्राप्त हुई, ऐसी किंवदन्ती है।

उक्त क्रम से **कवच** द्वारा **आत्म-रक्षा** कर **दुर्गा का आवाहन** आदि करना चाहिए। **'कवच'** में कुछ साधक लोग **'वन-दुर्गा'** को प्रधानता देते हैं। उनके अनुसार **'नौ दुर्गाओं'** के नाम इस प्रकार हैं —

प्रथमा वन - दुर्गेति, द्वितीया शूलिनी मता। तृतीया जात-वेदा च, चतुर्थी शान्तिरिष्यते।।

पञ्चमी शबरी चैव, षष्ठी ज्वालेति गीयते। सप्तमी लवणा चेति, अष्टम्यां आसुरी मता।।

नवमी दीप-दुर्गेति, नव-दुर्गाः प्रकीर्तिताः।।

उक्त **नव-दुर्गाओं की पूजा** का विधान भिन्न-भिन्न है। अतः **'सप्तशती'** के साधक इनके स्थान पर **भगवती दुर्गा** का ही **आवाहन-पूजनादि** करते हैं।

जैसा कि हमने प्रारम्भ में सूचित किया है, मनुओं के विधानानुसार ही **दुर्गा-पूजा** करनी चाहिए। इस प्रकार दक्षिण के हों या उत्तर के सभी साधकों को **'मन्वादि-काल'** का ज्ञान होना आवश्यक है। सभी शाक्तों को **'काल-पुरुष'** की गति तथा अपनी **'प्राण-शक्ति'** की गति को जानते हुए कर्म करते रहना चाहिए, परन्तु फल की कामना न हो, यही क्रम मोक्ष-प्रद है।

नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै, नियताः प्रणताः स्म ताम्॥

यही देवों की प्रार्थना है। हाँ, भू-देव शाक्तों की प्रार्थना है। कर्मेन्द्रियों को वश में करने से ज्ञानेन्द्रियों का विकास होता है। कर्मेन्द्रियों को वश में लाने के लिए **'काल'** की गति जानना आवश्यक है।

'सौर' सिंह मास एवं **'सौर' कन्या मास**—ये दोनों मास **दुर्गा माता की पूजा** के लिए श्रेष्ठ हैं। अन्य मासों में दिव्य साधक कैसे **दुर्गा-पूजा** करते हैं—यह ज्ञातव्य है। सभी दिनों में **राहु-काल** की घड़ियों में साधना करनी चाहिए। **प्राण** व **अपान** की गति रोकते हुए साम्यावस्था में अपनी शक्ति को लाना चाहिए, जिससे **देवी के दर्शन** सुलभ हों। **देवी की गायत्री** का १०८ बार जप करने से साधक की शक्ति स्वतः साम्यावस्था में आ जाती है। ध्यान **सिंहासन-गता देवी** का रहे। यथा—

ॐ सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः,
शङ्खं चक्र-धनुः-शराश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गद - हार - कङ्कण-रणत्-काञ्ची-रणन्-नूपुरा,
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला॥

इस उपासना में **षडङ्गों का न्यास** मुख्य है। **ध्यान** के बाद **गुरु** से आज्ञा लेकर **पूजा, जप** और **होम** करना चाहिए। **पूजा** सदैव दिन में **राहु-काल** में ही करनी चाहिए। रात के समय **राहु-काल** नहीं होता। **दुर्गा देवी** स्वयं **अग्नि**-स्वरूपा हैं। अतः सूर्य की किरणों के साथ उनका सम्बन्ध **'नित्या'** के रूप में जुड़ा हुआ है। हाँ, **पशु** और **वीर** साधकों के लिए रात में भी **दुर्गा की पूजा का विधान** है। उनके लिए रात की निम्न घड़ियाँ निर्दिष्ट हैं—

रवि : छः से साढ़े सात तक। **सोम :** तीन से साढ़े चार तक। **मङ्गल :** डेढ़ से तीन तक। **बुध :** बारह से डेढ़ तक। **गुरु :** साढ़े दस से बारह तक। **शुक्र :** नौ से साढ़े दस तक। **शनि :** साढ़े सात से नौ तक।

पुत्र, धन, नए साधन, अच्छा वर अथवा वधू आदि सभी लौकिक सुखों की प्राप्ति के लिए **रात की घड़ी** श्रेष्ठ मानी गई है।

चाहे पूजा दिन में हो या रात में, **नव दुर्गाओं के शुभ नाम-स्मरण** के बाद **आठ वसु, नौ**

निधि, **दश दिशाधिपति**, **एकादश रुद्र**, **द्वादश** आदित्य—इनके साथ **अश्विनी देवताओं** की भी उपासना करनी चाहिए।

आठ वसुओं के शुभ नाम हैं—**१ भव**, **२ ध्रुव**, **३ सोम**, **४ विष्णु**, **५ अनिल**, **६ अनल**, **७ प्रत्यूष** और **८ प्रभव**।

नौ निधियों के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं। कुछ लोग **नौ ग्रहों के प्रीति-कारक नौ रत्नों** की आराधना करते हैं। यथा—**सूर्य : माणिक्य। चन्द्रमा : मुक्ता। मङ्गल : प्रवाल। बुध : कौस्तुभ या हरा हीरा। गुरु : पुष्प-राग। शुक्र : वज्र। शनि : नीलम। राहु : गोमेधक (गोमेद)। केतु : वैदूर्य।**

अधिकांश साधक **नौ मुद्राओं** को ही **नौ निधि** के रूप में मानते हैं। यथा—**१ खड्ग**, **२ खेट**, **३ चक्र**, **४ गदा**, **५ चाप**, **६ बाण**, **७ तर्जनी**, **८ अनल** और **९ योनि-मुद्रा**। इनमें **'योनि-मुद्रा'** मुख्य-तम है।

दश दिशाधिपति और उनकी शक्तियों का विवरण

दिक्	अधिपति	शक्ति
प्राक् (पूर्व)	इन्द्र	ऐन्द्री
आग्नेयी (दक्षिण-पूर्व)	अग्नि	स्वाहा या स्वधा
दक्षिण	वराह	वाराही
नैर्ऋति (दक्षिण-पश्चिम)	निर्ऋति	चित्ता (खड्ग-हस्ता)
पश्चिम	वरुण	वारुणी
वायव्य (उत्तर-पश्चिम)	वायु	मृग-वाहिनी
उदीची (उत्तर)	कुबेर	कौमारी
ऐशानी (उत्तर-पूर्व)	ईशान	शूलिनी
ऊर्ध्व दिक्	ब्रह्मा	ब्रह्माणी (सरस्वती)
अधो दिक्	विष्णु	वैष्णवी (लक्ष्मी)

ऐशानी (उत्तर-पूर्व) दिशा में **दुर्गा-माता** की **शूलिनी शक्ति** विराजमान है, जो सर्वोपरि मानी गई है। इस शक्ति का उदय प्रतिदिन विभिन्न घड़ियों में होता है, वह इस प्रकार है—

वार	दिक्	घड़ी
रवि	पश्चिम या उत्तर-पश्चिम	प्रातः छः से साढ़े दस
सोम	पूर्व या दक्षिण-पश्चिम	प्रातः छः से नौ

मङ्गल	उत्तर या उत्तर-पश्चिम	प्रातः छः से साढ़े दस
बुध	उत्तर या उत्तर-पूर्व	प्रातः छः से मध्याह्न बारह
गुरु	दक्षिण या दक्षिण-पूर्व	प्रातः छः से मध्याह्न दो
शुक्र	पश्चिम या दक्षिण-पश्चिम	प्रातः छः से साढ़े दस
शनि	पूर्व या दक्षिण-पूर्व	प्रातः छः से नौ

उपर्युक्त घड़ियों में उक्त दिशाओं में **शूलिनी शक्ति का आवाहन** करने से वाञ्छित फल मिलता है।

प्रसङ्ग-वशात् यहीं **योगिनी माता** का भी उल्लेख आवश्यक है। **अग्न्यात्मक दुर्गा** के **'नवार्ण-मन्त्र'** की सिद्धि के लिए **महा-गणपति, क्षेत्र-पाल, बटुक-भैरव** तथा **योगिनी माता** का अनुग्रह प्राप्त करना अनिवार्य है। **महा-गणपति, क्षेत्र-पाल** एवं **बटुक-भैरव** के पूजा-विधान प्रसिद्ध हैं, परन्तु **योगिनी माता** रहस्य-मयी हैं। उनके सम्बन्ध में प्रकाश डालनेवाले ग्रन्थ भी कम हैं। यह ज्ञातव्य है कि किसी भी **मन्त्र की सिद्धि** के लिए अपने **जन्म-नक्षत्र की देवता** के **अनुकूल तिथि, वार, योग** और **करण** का शुभ मिलन होना चाहिए। वार के अनुसार २७ **नक्षत्रों** के **२७ योग** होते हैं। इनके अतिरिक्त **१५ तिथियाँ** और **करण** हैं। **सूर्य** और **चन्द्र** के बीच की जो दूरी है, उसी के अनुसार **'तिथि'** बनती है और **चन्द्र की वृद्धि** तथा **क्षय** के अनुसार **'योगिनी'** की दिशा बनती है। यथा—

शुक्ल-पक्ष	दिक्	कृष्ण-पक्ष	दिक्
प्रथमा (एकादशी)	प्राक् (पूर्व)	षष्ठी	प्राक् (पूर्व)
द्वितीया (द्वादशी)	उत्तर	सप्तमी	दक्षिण-पूर्व
तृतीया (त्रयोदशी)	दक्षिण-पूर्व	अष्टमी	दक्षिण
चतुर्थी (चतुर्दशी)	दक्षिण-पश्चिम	नवमी	दक्षिण-पश्चिम
पञ्चमी (पूर्णिमा)	दक्षिण	दशमी	पश्चिम
षष्ठी	पश्चिम	प्रथमा (एकादशी)	उत्तर-पश्चिम
सप्तमी	उत्तर-पश्चिम	द्वितीया (द्वादशी)	उत्तर
अष्टमी	उत्तर-पूर्व	तृतीया (त्रयोदशी)	उत्तर-पूर्व
नवमी	आकाश	चतुर्थी (चतुर्दशी)	आकाश
दशमी	भूमि	पञ्चमी	भूमि

देवी दुर्गा माता का शुभ वचन है—

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां, नवम्यां चैक - चेतसः। श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या, मम माहात्म्यमुत्तमम्॥

योगिनी माता के अनुग्रह से साधक यह जान सकते हैं कि **कृष्ण-पक्ष की अष्टमी की 'वाराही'-शक्ति** ही **शुक्ल-पक्ष की अष्टमी** की **'शूलिनी'-शक्ति** के रूप में अनुग्रह करती हैं। अतः **कृष्ण-पक्ष की अष्टमी से शुक्ल-पक्ष की अष्टमी तक श्रीदुर्गा-सप्तशती का पारायण** करना सिद्धि-प्रद होता है।

इसी प्रकार **कृष्ण-पक्ष की नवमी से शुक्ल-पक्ष की अष्टमी तक पारायण** करने से **'खड्ग-धारिणी' माता के दर्शन** मिलते हैं तथा साधक मृत्यु तक को जीत पाता है। उसे **चिरञ्जीवी मार्कण्डेय महर्षि** का सायुज्य भी मिल जाता है क्योंकि माता के **खड्ग में काल (मृत्यु) की शक्ति** निहित है। **'सप्तशती'** के अनुसार—

कालश्च दत्तवान् खड्गं, तस्याश्च चर्म निर्मलम्।

दश दिशाओं में योगिनी की स्थिति जानने के बाद **एकादश रुद्रों** के शुभ नामों का स्मरण व पूजन होना चाहिए। **एकादश रुद्र** हैं—**१ अज, २ एक-पात्, ३ अहिर्बुध्न्य** (ज्ञान-दाता के रूप में प्रसिद्ध), **४ विरूपाक्ष, ५ रैवत, ६ हर** (शम्भु महा-देव के रूप में प्रसिद्ध), **७ बहु-रूप, ८ त्र्यम्बक** (महाराष्ट्र के 'नासिक' क्षेत्र में प्रतिष्ठित), **९ सावित्र, १० जयन्त** और **११ पिनाकी।**

प्रत्येक **रुद्र** का अलग-अलग पूजा-विधान होने पर भी **माता की पूजा** में ये सब **अङ्ग-देवताओं के रूप में** ही पूजे जाते हैं।

आदित्य १२ हैं। यथा—**१ चैत्र मास** में **'त्वष्टा'** या **'वेदज्ञ', २ वैशाख** में **'इन्द्राग्नी'** या **'तपन', ३ ज्येष्ठ** में **'इन्द्र', ४ आषाढ़** में **'विश्वेदेव'** या **'मधु-रूपी सूर्य', ५ श्रावण** में **'महा-विष्णु'** या **'गर्भास्त', ६ भाद्र** में **'यम', ७ आश्विन** में **'हिरण्य-रेता', ८ कार्तिक** में **'दिवाकर', ९ मार्गशीर्ष** में **'मृगशिरा', १० पौष** में **'पूषा', ११ माघ** में **पितृ देवता 'अर्यमा अरुण', १२ फाल्गुन** में **'भग सूर्य'।**

अब तक हमने **८ वसुओं, ९ निधियों, १० दिक्-पालों, ११ रुद्रों** तथा **१२ आदित्यों** का वर्णन किया। इन सबका प्रकाश **'अश्विनी'** द्वारा ही होता है। **अश्व-मुखवाले दो देव** सदा एक साथ घूमते रहते हैं। यही कारण है कि **वेद** में **सर्व-व्यापी देवता** के रूप में इनकी स्तुति की गई है—**'अश्विनौ व्यात्तम् इष्टं मनिषाण, अमुं मनिषाण, सर्वं मनिषाण।**

'मनिषाण'—प्रार्थना का तात्पर्य है कि अमुक फल की प्राप्ति के लिए आप ही हमारे मार्ग-दर्शी बनें। **दिन-रात, पुण्य-पाप, सूर्य-चन्द्र, प्रकाश** और **तम, ज्ञान** व **अज्ञान**—इस प्रकार **मनुष्य की उच्च गति तथा अधो-गति दोनों के द्योतक के रूप में अश्विनी देवताओं को ज्योतिश्चक्र में स्थान** मिला है। वह स्थान **ध्रुव** है, अव्यय है।

'गीता' में कहा गया है कि **'अक्षराणां अकारोऽस्मि'। 'प्रणव'** में **अ-कार** का अर्थ परमात्मा है, **म-कार** का जीवात्मा है। बीच में जो **उ-कार** है—वही **अश्विनी** है। अर्थात् **परमात्मा** और **जीवात्मा** को जोड़नेवाले जुड़वा देवता हैं।

'अश्व' का अर्थ यह भी है कि **'श्व'** अर्थात् कल का नहीं, आज का ही है। अर्थात्

यह देवता आवाहन-मात्र से सन्तुष्ट होकर तुरन्त वर्तमान काल में ही फल प्रदान करता है। **'अश्व'** का अर्थ घोड़ा भी है। शक्ति-मान के रूप में घोड़ा सर्वोच्च माना गया है; इसीलिए 'अश्व-शक्ति' (हॉर्स-पावर-शब्द) विद्युत्-शक्ति की माप के लिए प्रयुक्त होता है।

'महा-भारत' का **'हय-शिर उपाख्यान'** प्रसिद्ध है। हय-मुखवाले एक असुर ने **ब्रह्मा** से सभी **वेदों** और **शास्त्रों** का अपहरण कर लिया। उसे मारने के लिए **ब्रह्मा** ने **विष्णु की स्तुति** की। **विष्णु** ने **अश्विनी देवताओं** द्वारा **'हय-ग्रीव'** का स्वरूप धारण किया और उस असुर का वध कर **वेदों की रक्षा** की तथा **ब्रह्मा** को उन्हें पुनः प्रदान किया।

अश्विनी देवताओं का निवास ऊँचे पहाड़ों पर, घने जङ्गलों पर तथा युद्ध-क्षेत्रों में रहता है। अतः **ज्योतिश्चक्र** में **अश्विनी-नक्षत्र** के चारों चरण **मेष-राशि** में, **सिंह-राशि** में तथा **धनु-राशि** में निहित हैं। **मेष-राशि** इन देवताओं की चर-राशि है; **सिंह-राशि—** स्थिर-राशि है; **धनु-राशि—** उभय-राशि है। अतः **धनु-राशि** में **मूल-नक्षत्र** में इन देवताओं का **आवाहन** करने से साधक को शीघ्र ही मन्त्र-सिद्धि मिल जाती है।

'तन्त्र' का निर्देश है—**'मूलेन आवाहयेत् देवीम्'। अश्विनी देवताओं** के स्थान का सप्तम स्थान **ज्योतिश्चक्र** में मनुष्यों का होता है; **मेष-राशि** का सप्तम स्थान **तुला-राशि** है; **सिंह-राशि** का सप्तम स्थान **कुम्भ-राशि** है तथा **धनु-राशि** का सप्तम स्थान **मिथुन-राशि** है। ये तीनों मनुष्य-राशियाँ हैं।

'प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा, ब्रह्म तल्लक्ष्य उच्यते।

'प्रणव' का स्थान सर्वोपरि है। उसी **प्रणव** के द्योतक **धनु-राशि** में **आत्मा-रूपी शर** से **ब्रह्म-लक्ष्य** की प्राप्ति के लिए **अश्विनी देवताओं की कृपा** अनिवार्य है।

'मेष' का पर्याय-वाची **'अज'** है। **अश्विनी-देवता** ही **'अजा'** अर्थात् **प्रकृति** है। **प्रकृति** के तीन गुण हैं—**१ रजस्, २ सत्त्व, ३ तमस्,** जिनके रूप क्रमशः **लोहित, शुक्ल** और **कृष्ण** हैं—इन तीनों रूपों को ही दिखा कर **प्रकृति— पुरुष** को अपने वश में कर लेती है।

अश्विनी की कृपा से **प्रकृति— पुरुष** के वश में आ जाती है। उसी को वश में लाने के लिए **'वाग्-भव', 'योनि'** और **'काम-कला'** को जानना आवश्यक है। बीच में **'योनि'** होती है। अतः **'योनि-मुद्रा'** से ही देहली-दीप न्याय के अनुसार **'वाग्-भव'** तथा **'काम-कला'** पर नियन्त्रण मिल सकता है। **'योनि-मुद्रा'** के लिए दोनों हाथों, दोनों पैरों तथा दोनों गुह्याङ्गों का उपयोग किया जाता है। तभी मन के नियन्त्रण से **वाक्-सिद्धि** आदि मिलेगी।

सिंह-राशि में **अश्विनी** का स्थान होने से **श्रीदुर्गा सिंह-वाहिनी** के रूप में पूजी जाती हैं। यहीं **'प्राणाः यस्य तु मातरः पितृ-कुलं यस्याऽस्त्यपानात्मकम्'** का ध्यान होता है। अतः **सिंह-राशिस्थ 'अश्विनी'-देवता का अनुग्रह** प्राप्त होने पर **सिंह-राशि** के सप्तम स्थान पर **कुम्भ-राशि में गुरु का साक्षात्कार** मिल जाता है।

किसी भी पूजा के लिए **'कलश-स्थापन'** आवश्यक है। **कलश के मुख में विष्णु, कण्ठ में**

रुद्र तथा **मूल में ब्रह्मा** का और **मध्य-स्थान में मातृ-गणों का आवाहन** किया जाता है। **कुम्भ-राशि के गुरु** के ध्यान से **सहस्रार-स्थित चन्द्रमा के रस** अर्थात् **अमृत का पान** साधक करने लगता है। **मार्कण्डेय महर्षि** की प्रार्थना—**'मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्'**—सफल हो जाती है। अतः **कुम्भ-राशि-स्थित गुरु** के अनुग्रह से ही साधक को **मन्त्र-सिद्धि** मिलती है। **ब्रह्मा-रूप गुरु** के ध्यान से **'महा-काली'** का, **विष्णु-रूप गुरु** के ध्यान से **'महा-लक्ष्मी'** का और **रुद्र-रूप गुरु** के ध्यान से **'महा-सरस्वती'** का अनुग्रह मिलता है। इन तीनों शक्तियों का एक-साथ अनुग्रह प्राप्त करने के लिए **अश्विनी देवताओं की कृपा** अनिवार्य है।

वेदों में **अश्विनी** के कई रूप वर्णित हैं, परन्तु साधक के लिए एक ही रूप पर्याप्त है। वह है— **जगदम्बा का स्वरूप।** अन्य रूपों के ध्यान से साधक को **मन्त्र-सिद्धि** मिलना तो दूर, उसकी अधो-गति अवश्य होती है। अतः **अश्विनी देवताओं** के कई रूप होने पर भी **जगदम्बा-स्वरूप** ही हमारा रक्षक है।

अश्विनी में सृष्टि करने की 'चर-शक्ति' **मेष-राशि** में है, अतः वह **अजा, लोहित-शुक्ल-कृष्ण-रूपा** है। स्थिति करने की 'स्थिर-शक्ति' **सिंह-राशि** में है, अतः वह **सिंह-वाहिनी** व **चक्र-धारिणी** है। संहार करने और पुनः सृष्टि करने की 'उभय शक्ति' **धनु-राशि** में है, अतः वह **वाराही** एवं **खड्ग-धारिणी** है। ये ही **अश्विनी के तीन जगदम्बा-स्वरूप** हैं।

'चामुण्डा' का **खड्ग-हस्ता** के रूप में ध्यान करना विहित है, परन्तु **खड्ग-हस्ता** के प्रथम स्वरूप **'वाराही'** के ध्यान के बिना **चामुण्डा का ध्यान** फल-प्रद नहीं होता। अतः **'वाराही'-यन्त्र** में उनका पूजन करना आवश्यक है। पूजन के अन्त में—

गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं, गृहाणास्मत्-कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु वाराहि! त्वत्-प्रसादान् महेश्वरि!।।'

उक्त श्लोक-पाठ के साथ **देवी के चरण-कमलों** में **'तीर्थ'** समर्पित करें तथा उस **'तीर्थ'** का अपने एवं अन्य भक्त-जनों के शिरों पर **प्रोक्षण** करें। इससे **देव-ऋण, पितृ-ऋण, ऋषि-ऋण** से मुक्ति मिलती है। **'भगवद्-गीता'** के १५वें **'पुरुषोत्तम'** नामक अध्याय में **अश्विनी देवता** की प्रशंसा की गई है। **'महा-भारत'** में **'नकुल'** और **'सहदेव'— अश्विनी देवता** के ही अंश हैं।

योग-प्रक्रिया से विचार करें, तो भी **अश्विनी** का स्थान बड़ा ऊँचा है। जो मन के द्वारा ध्यान किया जाता है, वही वाणी द्वारा प्रकट किया जाता है। अतः **मन** और **वाक्**—इनके प्रवर्तक **'अश्विनी'** है। कार्य करने में दोनों हाथों, दोनों पैरों, उदर और लिङ्ग का साथ-साथ उपयोग होता है। वहाँ भी **अश्विनी देवता का अनुग्रह** अनिवार्य है। **अश्विनी देवता 'ज्वाला-मालिनी'** हैं। अतएव **सत्य-स्वरूपा** हैं। **आकाश** और **पृथ्वी, ऋत** और **सत्य, वायु** और **अग्नि, सूर्य** और **सत्य।**

योग-प्रक्रिया में **यम, नियम** और **आसन** के बाद **प्राणायाम** का स्थान है। **अश्विनी देवता** का सम्बन्ध हृदयस्थ नाड़ियों से है। **कुम्भक प्राणायाम** द्वारा ही हृदयस्थ नाड़ियों का चालन किया जा सकता है। हृदय-स्थान में **एक सौ नाड़ियाँ** स्थित हैं। उनमें एक ही नाड़ी **परमात्मा**

का सम्बन्ध दिला सकती है। उसी नाड़ी का चालन **अश्विनी देवता के अनुग्रह** से होता है तथा **ऊर्ध्व-केशी चामुण्डा माता का अनुग्रह** भी प्राप्त होता है।

अश्विनी देवता के साक्षात्कार के लिए **प्राणायाम** सदैव करते रहना चाहिए। **सूर्य** और **चन्द्र** की गति को रोकने से ही **ज्ञानानन्द-मय अश्विनी देवता का उदय सुषुम्ना नाड़ी में** होता है। तब **जगन्माता की कृपा** से साधक **तीनों कालों का ज्ञानी** हो जाता है। कहा भी है—

नव-दुर्गां महा-कालीं, ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मिकाम्। त्रिकाल-ज्ञान-सम्पन्नां, नमामि भुवनेश्वरीम्॥

यह तो सभी साधक जानते हैं कि **'शक्ति'** के अनुग्रह के बिना **'शिव'** का चालन नहीं होता। परन्तु यही प्रश्न है कि वह **'शक्ति'** है कहाँ? उसका चालन कैसे किया जाए? इस प्रश्न का समाधान भी **अश्विनी** द्वारा ही मिल जाता है। **'श्वा'** का अर्थ है कुत्ता। हम देखते हैं कि कुत्ता एक जगह से दूसरी जगह यों ही दौड़ेगा, फिर थक जाने पर उसी जगह वापस आ जाएगा। यही उसकी मूल प्रवृत्ति है। इसी प्रकार जो साधक अपक्व है, वह भी **'श्वा'** की तरह **'पुनरपि जननम्, पुनरपि मरणम्'** के मार्ग में दौड़ता रहता है। **अश्विनी देवता की कृपा** मिल जाने पर वह **श्वा-प्रवृत्ति** समाप्त होने लगती है; **मन** अपने अन्दर देखने लगता है; **परमात्मा** के जानने के लिए इच्छुक हो जाता है; अपने को **'म-कार'** के रूप में अर्थात् इस **विशाल ज्ञान-सागर में एक बिन्दु** की तरह समझने लगता है। तभी 'मु'-स्वरूपा **स्कन्द-माता** के दर्शन के लिए वह अन्तर्मुखी बन जाता है।

अश्विनी स्वयं **ज्ञान-रूपा** है; अतः साधक को यथार्थ ज्ञान देती है। **दश महा-विद्याओं** का ज्ञान भी मिल जाता है। **दश महा-विद्याओं** के नाम हैं—

काली तारा षोडशी च, भुवनी भैरवी तथा। छिन्नमस्ता च धूम्रा च, बगला गजिनी कलीम्॥

'गजिनी'— **'मातङ्गी'**-नाम से और **'कलीम्'**— **'कमला'**-नाम से प्रसिद्ध हैं।

स्वधा-प्रवृत्तिवाली **'श्वा'**-बुद्धि के नियन्त्रण से **स्वाहा**-प्रवृत्तिवाली **'अश्विनी'**-देवता का अनुग्रह मिल जाता है। जहाँ भी, जो भी आहार मिलता है, उसे कुत्ता खा लेता है; जो कोई नया सामने आता है, उसे देखते ही भूँकने लगता है; अपनी रक्षा के लिए दूसरों को काटने के लिए दौड़ता है —ये तीनों बातें **'श्वा'**-प्रवृत्तियाँ हैं। इनसे छुटकारा पाने के लिए **'अश्व-मुखी' अश्विनी का अनुग्रह** अनिवार्य है।

अपनी जीभ पर नियन्त्रण रखना सर्व-प्रथम कर्तव्य है। जो भी आहार **जगदम्बा की सेवा** में समर्पित हो, उसी को **'प्रसाद'** के रूप में स्वीकारना चाहिए। जो मन्त्र **गुरु-मुख** से प्राप्त हो, उसी का **जप** करना चाहिए। साधक-मण्डली को छोड़कर अन्यों की बैठक में शामिल नहीं होना चाहिए। अपने **मन** और **वाणी** पर नियन्त्रण रखना साधक के लिए अत्यावश्यक है। **जगदम्बा की तुष्टि** के लिए सब कुछ **बलिदान** करने की प्रवृत्ति भी आवश्यक है।

'देवी-सूक्त' में **जगदम्बा के स्वरूप का विस्तृत विवेचन** किया गया है, परन्तु उस स्वरूप का

प्रकाश तथा विमर्श **अश्विनी की कृपा** से ही मिल सकेगा। अतएव **चामुण्डा का ध्यान** भी निम्न श्लोक से ही करना श्रेयः-प्रद है—

ऊर्ध्व - केशि विरूपाक्षि, मधु-शोणित-भक्षिणि! तिष्ठ देवि! शिखा-मध्ये, चामुण्डे! ह्यपराजिते!।।

'ऊर्ध्व-केशि'-शब्द से **'अश्विनी'** द्वारा साधक की **सृष्टि एवं संहार की प्रवृत्ति** का उल्लेख किया गया है। यदि ये दोनों प्रवृत्तियाँ **ऊर्ध्व-मुखी** हों, तो **स्थिति की प्रवृत्ति** भी अपने आप **ऊर्ध्व-मुखी** हो जाती है, एतदर्थ **'श्वा'-प्रवृत्ति** का नियन्त्रण हो तथा **अश्व-प्रवृत्ति** का विकास हो, यह आवश्यक है।

उपनिषदों में भोक्ता के रूप में **अश्विनी देवता** का ही चित्रण किया गया है—

आत्मानं रथिनं विद्धि, शरीरं रथमेव तु। बुद्धिं तु सारथिं विद्धि, मनः प्रग्रहमेव च।।

इन्द्रियाणि हयान् आहुः, विषयांस्तेषु गोचरान्। आत्मेन्द्रिय-मनो-युक्तं, भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।

अर्थात् **आत्मा, इन्द्रिय, मन** आदि से युक्त जो **बुद्धि-तत्त्व** या **ज्ञान-तत्त्व** अर्थात् **'अश्व-मुखी'-प्रवृत्ति** है, वही **अश्विनी— भोक्ता** है। शरीर तो जड़ है, इसलिए वह **भोक्ता** नहीं हो सकता। शरीर के अन्दर जो **जीवात्मा** है, उसके द्वारा **परमात्मा** ही सभी काम करा लेता है। अतः कर्म करते रहना ही **जीवात्मा का स्वरूप** है—वही **'सुरथ'** है। जीवात्मा द्वारा कर्म कराते-कराते उसे **'समाधि'** पर पहुँचाना **परमात्मा** का ध्येय है—यही उसकी लीला है। एतदर्थ **सङ्कोच-विकास, ज्ञान-अज्ञान, प्रकाश-अन्धकार** आदि दो-दो प्रवृत्तियाँ साथ-साथ चाहिए। उन्हीं प्रवृत्तियों का जीता-जागता स्वरूप **'अश्विनी'** है।

'श्रीदुर्गा-सप्तशती' का निम्न श्लोक सभी भक्तों को ऐश्वर्य देनेवाला है—

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाम्बिके! घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च।।

उक्त श्लोक के आधार पर **स्थिर-योगिनी** के सम्बन्ध में **अश्विनी-देवताओं की कृपा** के फल-स्वरूप अब विचार किया जाएगा।

जगदम्बा चामुण्डा की **चार मुख्य अङ्ग-देवता** प्रसिद्ध हैं—**१ महागण-पति, २ क्षेत्र-पाल, ३ वटुक-भैरव** और **४ योगिनी।** इन चारों का अनुग्रह प्राप्त होने पर ही **चामुण्डा का प्रसाद** मिल सकता है। **महा-गण-पति, क्षेत्रपाल** और **बटुक-भैरव** के मन्त्र और तन्त्र प्रसिद्ध हैं, परन्तु **योगिनी** के बारे में गुरु-शिष्य-परम्परा के रूप में कुछ रहस्य हैं, जिन्हें पाठकों के हितार्थ यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

शाक्तों के लिए अपने-अपने विशेष **पञ्चाङ्ग** हैं। **चामुण्डा देवी** के चार ही अङ्ग हैं। **पञ्चाङ्ग** का मतलब है—**१ तिथि, २ वार, ३ नक्षत्र, ४ योग** और **५ करण।** चार अङ्गों का मतलब है—**१ दिक्, २ तिथि, ३ दिन** और **४ शूल।** ये ही चार अङ्ग निम्न तालिका में दिए गए हैं—

स्थिर योगिनी माता

दिन	दिक्	शुक्ल-पक्ष	कृष्ण-पक्ष
सोम-शनि	प्राची	१-११	६
मङ्गल-बुध	उत्तर	२-१२	७
गुरु-शनि	आग्नेय	३-१३	८
शुक्र-सोम	नैर्ऋति	४-१४	९
गुरु	दक्षिण	५-१५	१०
शुक्र-रवि	पश्चिम	६	१-११
मङ्गल-रवि	वायव्य	७	२-१२
—	आकाश	९	४-१४
—	पृथ्वी	१०	५-१५
बुध	ईशान	८	३-१३

(१) चौथा अङ्ग **'शूल'** है, जो **योगिनी माता** का बोधक है। दशों दिशाओं में **योगिनी माता** पूजनीया हैं।

(२) **दिन** एवं **तिथि** का सम्मिलन ही मुख्य है। तदनुसार उक्त दिशा में **योगिनी-माता** की पूजा करे।

(३) मोक्षार्थी साधक या अन्यों के हित में पाठ करनेवाला **शुक्ल-पक्ष की नवमी** एवं **कृष्ण पक्ष की चतुर्थी** व **चतुर्दशी** में सप्तशती का पारायण करे।

(४) भोगेच्छु साधक **शुक्ल-पक्ष की दशमी** और **कृष्ण पक्ष की पञ्चमी** और **अमावास्या** के दिन **पारायण** करे।

उक्त चार अङ्गों का मिलन होने पर **'स्थिर-योगिनी'** की कृपा से **दुर्गा माता की असीम कृपा** मिल जाती है। इन चारों का मिलन कभी-कभी ही होता है। अतः साधक को चाहिए कि **शुक्ल-पक्ष की चतुर्थी, पञ्चमी, चतुर्दशी** और **अमावास्या** में नियमित रूप से मन और कार्य की स्थिरता के साथ ऊँचे स्वर में **'श्रीदुर्गा-सप्तशती' का 'पारायण'** किया करें।

साधक के शरीर में **नौ ग्रहों की स्थिति** इस प्रकार होती है— **गुरु-ग्रह** कण्ठ-भाग के ऊपर, **मङ्गल** और **छाया-ग्रह केतु** कटि के नीचे, **शनि** और **राहु** पृष्ठ-भागों पर, **सोम** और **बुध** शिरो-भाग पर, **शुक्र** मुख-मण्डल पर एवं **सूर्य** दोनों हाथों पर स्थित माने गए हैं। इसी प्रकार **शरीर पर नौ ग्रहों का न्यास** करने से साधक इन **ग्रहों के कु-प्रभाव** से बच जाता है। तब **नव-ग्रहों के न्यास** के बाद **अश्विनी-देवताओं का न्यास** अपने कानों पर करना चाहिए। इस

न्यास के फल-स्वरूप **शनि** और **राहु** तुष्ट हो जाते हैं तथा **पितरों, ऋषियों और देवों का अनुग्रह** मिल जाता है।

अक्षांश पर **ग्रहों का न्यास** करना चाहिए। **'अक्षांश'** को ठीक करने के लिए अपने **शरीर, शिर** और **कण्ठ**—इन तीनों भागों को स्थिर रखना होता है। **नवार्ण मन्त्र** में और अन्य मन्त्रों में **'अक्षांश'** ही मान-दण्ड है। जब तक **अश्विनी देवताओं की कृपा** नहीं मिलती, तब तक दोनों हाथों, दोनों पैरों, दोनों कानों एवं पृष्ठ-भाग और शिरो-भाग को एक साथ सम रखना कठिन होता है।

बात, पित्त और **कफ**—इन तीनों नाड़ियों को, **वाक्, काय** और **मन**—इन तीनों करणों को, **पृष्ठ-भाग, शिरो-भाग, कण्ठ-भाग**—इन तीनों भागों को समान रूप से चलाने का अभ्यास करना **नवार्ण मन्त्र** के साधक के लिए आवश्यक है।

सतत अभ्यास से जब ये तीनों वश में आ जाते हैं, तब **वागीश्वरी** अथवा **महा-काली-वीज** का शिखा में, **भुवनेश्वरी** अथवा **माया-वीज** का पृष्ठ-भाग पर, **कामेश्वरी** अथवा **महा-सरस्वती-बीज** का नाभि पर ध्यान करना सुलभ हो जाता है। इस प्रकार अभ्यास न हो, तो साधक **'गन्ध-वही गर्दभः'** बन जाता है अर्थात् अज्ञानी गधा बन जाता है।

'श्रीदुर्गा-सप्तशती' का प्रत्येक अक्षर आग के कण के समान है। अतः कोई भी साधक यदि उसके एक भी अक्षर का अर्थ हृदयङ्गम कर ले, तो उस साधक के सभी पाप तत्क्षण दूर हो जाएँ। **मार्कण्डेय महर्षि** ने कठिन तपस्या के बाद **तीनों बीज-मन्त्रों का न्यास** और **अनुष्ठान** जाना था। इसी से **ऋषि** अर्थात् **मन्त्र-द्रष्टा** के रूप में वे माननीय हैं।

ब्रह्मा की बहन **दुर्गा, विष्णु** की बहन **पार्वती** तथा **रुद्र** की बहन **सरस्वती** हैं। **नवार्ण मन्त्र** के अनुसार **ब्रह्मा** ने **महा-काली** की, **विष्णु** ने **महा-लक्ष्मी** की एवं **रुद्र** ने **महा-सरस्वती** की उपासना की है। ये ही उन **त्रि-देवों की अनन्य शक्तियाँ** हैं। अतएव **नवार्ण मन्त्र** के सभी अक्षरों से **व्यापक न्यास** करना आवश्यक है।

जैसे रश्मि का सूर्य से अलग अस्तित्व नहीं है, वैसे ही **नवार्ण मन्त्र** का अस्तित्व **मेरु-दण्ड** से **शिखा** तक व्याप्त है। **मन्त्र** के सभी अक्षर **अग्नि**-स्वरूप हैं। **ध्यान** भी **अनलात्मिका, त्रि-नेत्रा दुर्गा** का ही किया जाता है। **पहले बीज-मन्त्र** का ठीक तरह से उच्चारण **कण्ठ, तालु** और **शिखा** से करना चाहिए। **दूसरे बीज-मन्त्र** का उच्चारण **पृष्ठ-भाग** से लेकर **दाहिनी आँख** से करना चाहिए। **तीसरे बीज-मन्त्र** का उच्चारण **नाभि** से लेकर **बाँई आँख** से करना चाहिए। तत्पश्चात् **अश्विनी देवताओं का अनुग्रह** मिलेगा। तभी **कूष्माण्डा, स्कन्द-माता, कात्यायनी** और **काल-रात्रि का अनुग्रह** भी मिलेगा। तदनन्तर **महा-गौरी का अनुग्रह** मिलेगा, तभी **सिद्धि** मिलती है।

नवार्ण-मन्त्र का जप, होम, अनुष्ठान आदि **गुरु के निर्देशन** में ही करना चाहिए। केवल पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर किसी भी **मन्त्र की सिद्धि** करने का प्रयत्न न करें। पुस्तक तो विधि-विधान और उसके महत्त्व को जानने का एक साधन-मात्र है। **साध्य देवता का अनुग्रह**

प्राप्त करने के लिए **गुरु की शरण** लेनी अति आवश्यक है। **नवार्ण मन्त्र** के लिए भी यह नियम अनिवार्य है। **नवार्ण मन्त्र** की सभी **अङ्ग-देवता रौद्रांश** की हैं। अतः खेल समझ कर जो कोई साधक **गुरु-कृपा** प्राप्त किए बिना इन देवताओं का ध्यान करता है, उसे वे उग्र शक्तियाँ शाप दे देती हैं।

दक्षिण में **नवार्ण मन्त्र** की सभी **अङ्ग-देवताओं को कन्याओं के रूप में** मानते हैं। **दक्षिण भारत** के अन्तिम छोर पर स्थित **'कन्या-कुमारी देवी'** का ध्यान-मात्र साधक अपनी **आराध्य देवता** के रूप में किया करता है।

उत्तर-भारत में **चामुण्डा देवता** का निम्न **गायत्री मन्त्र** प्रसिद्ध है—

'रुद्र-भूतायै विद्महे खड्ग-हस्तायै धीमहि। तन्नः चामुण्डा प्रचोदयात्।'

किन्तु **दक्षिण भारत** में बहु प्रचलित **गायत्री-मन्त्र** है—

'कात्यायनाय विद्महे, कन्या-कुमारि धीमहि, तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात्।'

कुमारी के रूप में दुर्गा की उपासना करने से सभी रोग दूर हो जाते हैं। **अभीष्ट फल** भी मिल जाता है।

नेपाल का राज-परिवार **चामुण्डा** का परम भक्त है। **नव-रात्र** के दिनों में **कन्याओं की ही पूजा** करता है। एतदर्थ कन्याओं के लिए एक विशेष निवास-स्थान भी राजधानी काठमाण्डू में राज-परिवार द्वारा सुरक्षित है। **दुर्गा देवी** के कई रूप सर्वत्र व्याप्त हैं। सिद्ध पुरुष **'जगदम्बा' के रूप में दुर्गा की उपासना** करते हैं। साधकों को **कुमारी के रूप में उपासना** करना श्रेयस्कर है।

सभी नारियों को **दुर्गा** के अवतार के रूप में ही मानना चाहिए। **रावण** ने **सीता** को अपनाना चाहा, उसका सत्यानाश हो गया। **दुर्योधन** ने **द्रौपदी** की अवज्ञा की, उसका समूल विनाश हो गया। अतः साधक का पहला अभ्यास यही होना चाहिए कि सभी नारियों को **दुर्गा माता** के रूप में मानें। उनकी पूजा करे या न करे, परन्तु उनकी अवज्ञा कदापि न करे। किसी भी परायी स्त्री को अपनाने का प्रयत्न कभी न करे। नारी-जगत् को **दुर्गा** के रूप में मानने की बात पर हम इसीलिए जोर देते हैं कि कुछ लोग **'मकार-पञ्चक'** और **'दुर्गा-पूजा'** के नाम पर **शाक्त**-समुदाय को बदनाम करने पर तुले रहे हैं। अतः हमें बहुत सावधान रहना चाहिए।

'नवार्ण मन्त्र' की शक्ति का विकास उसी दिन से प्रारम्भ हुआ, जब **प्रलय-काल में आदि-पुरुष नारायण बट-पत्र पर शिशु के रूप में** सोए हुए थे। **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** का **आदि चरित** भी **सोए हुए विष्णु को जगाने के लिए** ही जपा जाता है। यह भी देखें कि **ब्रह्मा** का वीजाक्षर एक है, उनकी **शक्ति** का वीजाक्षर दूसरा है। **रुद्र** का वीजाक्षर एक है तथा उनकी **शक्ति** का वीजाक्षर दूसरा है, परन्तु **विष्णु** तथा उनक **शक्ति** का वीजाक्षर दोनों एक ही हैं। अतः

वैष्णवी दुर्गा माता की अवहेलना करने पर नाश ही हो जाता है।

अब हम **दक्षिणाम्नाय** की **'दुर्गा-पूजा-पद्धति'** पर और प्रकाश डालने का यत्न करेंगे। इस पद्धति में **अद्वैत-वाद** का स्फुरण भी है। **आचार्य, मन्त्र** और **देवता** अर्थात् **ज्ञाता, ज्ञान** और **ज्ञेय**—इन तीनों का एकी-भाव अथवा **अद्वैत** हो जाता है। यही **मन्त्र-सिद्धि** है। **'आचार्यादिह देवतां समधिकां अन्यां न मन्यामहे'**—यही सिद्धान्त **दक्षिणाम्नाय** का है। **गुरु** से ही **मन्त्र, मन्त्र** से ही **देवता** —इस क्रम से **गुरु** को प्रथम स्थान मिल जाता है।

चामुण्डा के मन्त्र में यही बात है। **ऋषि, छन्दस्** और **देवता** का समन्वय हो जाने पर ही सिद्धि मिल सकती है। निरीश्वर **सांख्य**-मत के अनुसार भी **प्रकृति के तीनों गुणों की साम्यावस्था** ही मोक्ष है। सेश्वर **शाक्त**-मत में **गुरु, गुरु की शक्ति** और **मन्त्र की शक्ति देवता**—इन तीनों की साम्यावस्था ही मोक्ष है, सर्व-सिद्धि है और सब कुछ है।

नवार्ण मन्त्र में **प्रणव** की बात हमने पहले कही थी। चामुण्डा के तीनों वीजाक्षर **प्रणव** के विकसित रूप ही हैं। इनके स्थान पर **प्रणव** का उच्चारण कर **चामुण्डा** का **षडक्षरी मन्त्र** (ॐ चामुण्डायै विच्चे) बनता है, जो **सद्यः फल-प्रद** माना गया है। **चामुण्डा** के दोनों पार्श्वों पर **'नाग-राज'** की स्थिति मानी गई है। **'नाग-राज' के जागरण** के लिए **षडक्षरी मन्त्र** का ही प्रयोग किया जाता है। **चामुण्डा** की **'शिवा'** के रूप में पूजा करने की पद्धति है। उस रूप में **चामुण्डा** के चार ही हाथ हैं, जिनमें क्रमशः **पाश, अंकुश, वर** तथा **अभय**-मुद्रा हैं।

कुमारी के रूप में **चामुण्डा की पूजा** करने की पद्धति में केवल **एकाक्षरी** का प्रयोग किया जाता है। साधक को **स्कन्द-माता कुमारी के एकाक्षरी मन्त्र** से भी अभीष्ट फल मिल जाता है। **दक्षिण** के कुछ **शाक्त-पीठों** में यह भी देखा गया है कि **नवार्ण मन्त्र** के प्रत्येक अक्षर के उच्चारण के साथ **१००८ बार विभिन्न द्रव्यों से होम** किया जाता है। ऐसे होमों से साधक के कई कष्ट दूर हो जाते हैं।

दुर्गा का मन्त्र दुर्गम तो है ही, लेकिन साधक के मन के अनुसार **दुर्गा के कई रूप** माने गए हैं। उनमें **बाला का स्वरूप** भी एक है। **माता, कुमारी**— इन दोनों के मन्त्रों से **बाला दुर्गा का मन्त्र** कई साधक जपते रहते हैं, क्योंकि उस मन्त्र में केवल दो ही वीजाक्षरों का प्रयोग होता है तथा उन दोनों वीजाक्षरों से साधक की **कुण्डलिनी-शक्ति का जागरण** तुरन्त हो जाता है।

दशाक्षरी मन्त्र का जप भी दक्षिण के कई साधक करते रहते हैं। उनका मानना है कि **दुर्गा के दस मुख** हैं और **दस पाद** भी हैं। उन लोगों का कहना है कि **नवार्ण** भी **दशाक्षरी** से ही निकले हैं। कई प्रसिद्ध शाक्तों ने यह मान भी लिया है कि **नवार्ण मन्त्र** जपने के पहले **दशाक्षरी** का कम-से-कम एक सौ आठ बार जप करना चाहिए। उन लोगों का अनुभव है कि **दशाक्षरी** के प्रथम पाँच अक्षरों से सभी **कर्मेन्द्रियों का दमन** हो जाता है तथा द्वितीय पाँच अक्षरों से **ज्ञानेन्द्रियों का विकास** हो जाता है।

दशाक्षरी के जपने पर इसलिए जोर दिया जाता है कि साधक को अपने स्वरूप की पहचान के लिए **ब्रह्म-ग्रन्थि, विष्णु-ग्रन्थि** तथा **रुद्र-ग्रन्थि**—इन तीनों ग्रन्थियों से अपने को विमुक्त करना चाहिए। **ब्रह्मा ग्रन्थि-मुक्ति** से सभी इच्छाओं पर विजय मिलती है। **विष्णु-ग्रन्थि-विमुक्ति** से पारिवारिक सङ्कटों से रक्षा होती है तथा **रुद्र-ग्रन्थि की विमुक्ति** से अज्ञान नष्ट होता है। इन तीनों ग्रन्थियों से एकदम मुक्ति पाने के लिए **दशाक्षरी मन्त्र** ही सिद्ध मन्त्र है। उस मन्त्र की सिद्धि के बाद **नवार्ण मन्त्र की सिद्धि** सुलभ हो जाती है।

यहाँ यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि **नवार्ण** तथा **दशाक्षरी** में **रुद्र** का स्थान निश्चित है। चाहे

विष्णु का मन्त्र हो, या **ब्रह्मा** का, या अन्य किसी **देवी-देवता** का, सबमें **रुद्र** को ही एक निश्चित स्थान दिया जाता है। **रौद्रांश** में, जैसा कि कुछ साधकों को भ्रम है, कोई भयङ्कर रूप नहीं है। उसमें **अज्ञान-नाशक ज्ञान-सत्ता का स्फुरण** मात्र है। उस **ज्ञान-सत्ता के स्फुरण से ही आनन्द** मिलता है। **परमात्मा** स्वयं **ज्ञानानन्द-स्वरूप** है। अतः जीवांश भी **ज्ञान** और **आनन्द** की प्राप्ति के लिए तन्त्र, मन्त्र और यन्त्र आदि की खोज में जमीन-आसमान एक करने लगता है। यदि किसी **गुरु की असीम कृपा** से **दशाक्षरी मन्त्र** का उपदेश मिले, तो जीव का ज्ञान विकसित होता है। वह असीम आनन्द प्राप्त करता है तथा आस्य-पाद-दशका **जगन्माता चामुण्डेश्वरी का अनुग्रह** भी प्राप्त कर लेता है।

जो साधक **योगिनी-माता का अनुग्रह** पाता है, उसे **इन्द्रिय-निग्रह** अपने आप हो जाता है। उसके लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं होती। **योगिनी-माता** दशों दिशाओं में व्याप्त हैं। **योगिनी-माता** के स्थिर होने पर ही **साधक की इच्छा-शक्ति** विकसित होती है। वही विकास **अश्विनी देवताओं का स्वरूप** है।

'महा-भारत' में जब **श्रीकृष्ण** ने **कौरवों** के साथ युद्ध करने के सम्बन्ध में **पाण्डवों** का अभिप्राय जानना चाहा, तो **नकुल-सहदेव** ने, जो **अश्विनी के पुत्र** थे, स्पष्ट कहा था कि 'कौरवों के विनाश के लिए आपका अवतार हुआ है, अतः हमसे सलाह लेने का यह अभिनय हमें पसन्द नहीं है।'

अब हम **अश्विनी देवता** के **'अक्ष-स्वरूप'** की ओर ध्यान देंगे। मनुष्य का **मन** हमेशा चञ्चल रहता है। **मन** को स्थिर रखने के लिए रीढ़ की हड्डी को ठीक तरह से सीधा रखकर **'पद्मासन'** जमाना ही **'अक्ष-स्वरूप'** है। इससे मन एकाग्र होने लगता है।

अक्षांश पर घूमनेवाले ग्रहों का ज्ञान रखना आवश्यक है। नौ ग्रहों में **राहु** और **केतु छाया-ग्रह** हैं। **शनि का छाया-ग्रह— 'राहु'** है तथा **मङ्गल का 'केतु'।** अतः **शनि** और **मङ्गल** का स्वभाव जानना पर्याप्त है। **सूर्य** की उष्णता सबको वांछनीय है। जो **सूर्य** श्रीरङ्गम में दिखाई देता है, वही प्रयाग में और नई दिल्ली में प्रकाशमान रहता है। **सूर्य** के उदय और अस्त की घड़ी में अन्तर हो सकता है, परन्तु उसका प्रभाव सर्वत्र रहता है।

नवार्ण मन्त्र में **विष्णु ऋषि, उष्णिक् छन्द** तथा **भुवनेश्वरी बीज** के सतत ध्यान से **सूर्य** के कु-प्रभाव से हमें मुक्ति मिल जाती है। **चन्द्र** को **मन का अधिनायक** मानते हैं—**'चान्द्र-बलं तु निखिल-ग्रह-वीर्य-बीजम्।'** अर्थात् **सभी ग्रहों को वीर्य देनेवाला चन्द्रमा** है। **रुद्र ऋषि, अनुष्टुप् छन्द** एवं **काम-बीज** के ध्यान से **जगदम्बा के भक्त चन्द्रमा के कु-प्रभाव से विमुक्त** हो जाते हैं।

मङ्गल का प्रभाव नाड़ियों पर होता है। कुछ लोग कुत्ते की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं, उनका मन कभी भी सन्तुष्ट नहीं होता। **'भोगा न भुक्ताः, वयमेव भुक्ताः'**—भोग-लालसा में सब कुछ खो बैठते हैं, परन्तु **ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द** तथा **वागीश्वरी बीज** के ध्यान से **जगदम्बा** के भक्त **मङ्गल तथा छाया-ग्रह 'केतु' का कु-प्रभाव** दूर कर लेते हैं।

अब रहा **'सौम्य'** अर्थात् **बुध। बुध— सोम का पुत्र** है। कुछ लोगों की बुद्धि-शक्ति हमेशा मन्द रहती है। गणित और विज्ञान आदि गहन विषयों को समझ नहीं पाते। **'काम-बीज'** पर निरन्तर ध्यान रखनेवाले साधकों की **बुद्धि-शक्ति** सदा तीक्ष्ण रहेगी। **राहु** के कु-प्रभावों से बचने के लिए **'विच्चे'** का सार्थक ध्यान करते रहना चाहिए।

इस प्रकार **नवार्ण मन्त्र— नौ ग्रहों के कु-प्रभाव से बचने के लिए सिद्ध मन्त्र** है।

* * *

आओ, माँ शारदा की आराधना करें!!

• *प्रस्तुत-कर्ता : 'कुल-वाणी-रत्न' श्री जनार्दन शर्मा, ६३ / ४८ ए तुलारामबाग, प्रयाग-राज*

शरद्-ऋतु के आदि में जिनकी उपासना प्रधान रूप से होती है, वे ''शारदा'' कहलाती हैं। शरत्-काल में, ऐश्वर्य एवं बल-प्राप्ति हेतु **'माता शारदा'** की उपासना, हमारे यहाँ प्राचीनतम काल से होती आ रही है। स्वयं ऋषि नारद भगवान् श्रीराम को उपदेश करते हुए कहते हैं — **''हे राघव! आश्विन मास में भगवती का पूजन करने से सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। इस पूजन को सबसे पहले भगवान् विष्णु ने किया था। फिर शङ्कर जी और ब्रह्मा जी ने किया। उनके बाद देव-गुरु बृहस्पति और इन्द्र ने किया। भृगु, वशिष्ठ, कश्यप तथा विश्वामित्र आदि ऋषियों ने भी किया। अतः आप भी पूर्ण तत्परता के साथ 'शारदीय पूजा' करिए।''**

प्राचीन-तम ग्रन्थ **'ऋग्वेद'** की **'हंसावती ऋचा'** से भी शरद्-ऋतु के आदि में **'शारदा आराधना'** पर प्रकाश पड़ता है। **'ऋग्वेद'** कहता है कि **'सूर्य-देव को यह ज्ञात हुआ कि पार्वती पर-ब्रह्म हैं। आश्विन-मास और पावनी तिथि-समूह से उनका विशेष सम्बन्ध है।'**

प्रश्न उठता है कि शरद्-ऋतु के आदि में अखिल ब्रह्माण्ड-नायिका **'शारदा माता'** की आराधना का रहस्य क्या है? अथवा, **'शारदीय नवरात्र'** में माता की पूजा के सम्बन्ध में विशेष बात क्या है?

उक्त प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए **''तैत्तिरीय आरण्यक''** के प्रथम प्रपाठक **'अरुणोपनिषद्'** (लक्ष्मी-भाष्य) की पंक्तियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। इन पंक्तियों से स्पष्ट-तया ज्ञात होता है कि शरद्-ऋतु के आदि में अखिल ब्रह्माण्ड-नायिका **'माँ शारदा'** की आराधना क्यों आवश्यक है।

'अरुणोपनिषद्' (लक्ष्मी-भाष्य) कहता है —

'इमा नुकं भुवना सीषधम!!' अर्थात् **'चक्र-विद्या'** का आश्रय लेकर सभी लोक अवस्थित हैं। **'इन्द्रश्च विश्वे च देवाः॥'** अर्थात् इन्द्र और समस्त देवता भी **'चक्र-विद्या'** के आधार पर स्थित हैं।

'यज्ञश्च नस्तन्वं च प्रजां च। आदित्यैरिन्द्रः सह सीषधातु॥' अर्थात् यज्ञों को, हमारी पत्नी को और सन्तानों को इन्द्र ने सूर्य आदि की सहायता से **'चक्र-विद्या'** द्वारा ऐश्वर्य प्राप्त कर सम्पादित किया है। **'आदित्यैरिन्द्रः स-गणो मरुद्भिः। अस्माकं भूत्ववित्ता-तनूनाम्॥'** अर्थात् गणों के सहित इन्द्र सूर्यों की सहायता से और मरुतों की सहायता से हमारी स्त्री-पुत्रादि की रक्षा करनेवाला है। **'आप्लवस्य प्रप्लवस्व॥'** अर्थात् **'चक्र-विद्या'** - रूपी अमृत-कुण्ड में आपाद-मस्तक मज्जन करो, बहुत अधिक मज्जन करो।

'आण्डीभव ज मा मुहुः॥' अर्थात् पिण्डाण्ड-रूपी मुझसे, ब्रह्माण्ड-रूपी अपने बाह्य को एक-रूप कर लो। **'सुखादीन् दुःख-निधनाम्। प्रति-मुञ्चस्व स्वो पुरम्॥'** अर्थात् सुख देनेवाली और दुःख-रहित भगवती के शरीर को अपना आश्रय-स्थान बनाओ।

'मरीचयः स्वायम्भुवाः॥' अर्थात् प्रकाश करनेवाली सम्पूर्ण किरणें भगवती से ही उत्पन्न हुई हैं।

'ये शरीराण्यकल्पयन्। ते ते देहं कल्पयन्तु' अर्थात् जो किरणें दिनों को रचती हैं, वे किरणें तुम्हारी

देह का आश्रय करें। **'उत्तिष्ठत मा स्वपत। अग्निमिच्छध्व भारताः! राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण सयुजोषसः।।'** अर्थात् हे ज्योति - रूप **'चक्र-विद्या'** में निरत साधकों (भारत— भा+रतः)! उठो, प्रमाद मत करो। अपने अधिष्ठान में स्थित अग्नि को प्रज्चलित करो। चन्द्र के अमृत से तृप्त होकर - **'उपासना'** करो।

संक्षेप में, **'अरुणोपनिषद्'** के उक्त उपदेशों से हमें तीन मुख्य बातें ज्ञात होती हैं —

(१) ज्योति-रूप चक्र-विद्या। (२) अपने अधिष्ठान में स्थित अग्नि।

(३) चन्द्रमा के अमृत से तृप्त होकर - उपासना करना।

उक्त तीनों बातों से **'शारदीय पूजा'** का महत्त्व भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है।

पहले **'ज्योति-रूपा चक्र-विद्या'** को देखें, जिसमें निरत रहने के कारण हमारे देश के लोग **'भारत'** (भा+रतः) कहलाए या हमारे देश का नाम **'भारत'** पड़ा। **'ज्योति-रूपा चक्र-विद्या'** आज भी हमारे समस्त नित्य-नैमित्तिक कर्मों की नींव है। हम जितने भी पर्व, महा-पर्व मनाते हैं, वे सभी उक्त **'ज्योति-रूपा चक्र-विद्या'** की विशाल पृष्ठ-भूमि से सम्बन्धित हैं, जिनसे हम सभी आज भी लाभ उठा सकते हैं और अपना कल्याण कर सकते हैं।

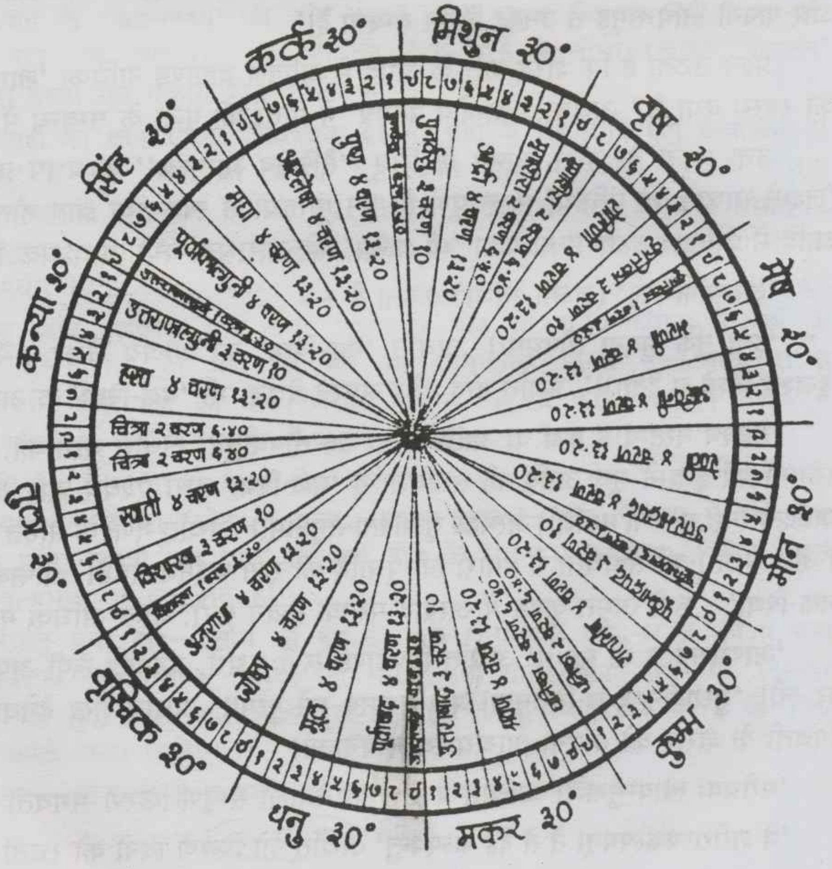

'ज्योति-रूपा चक्र-विद्या' के आलोक में हमारे पूर्वजों ने हमारे अभ्युदय के लिए एक ओर **'सूर्य'**-रूपी **'तैजस्-शक्ति'** को दो 'मुख्य भागों' (१) **उत्तरायण** और (२) **दक्षिणायन** में विभक्त किया। दूसरी ओर **'चन्द्रमा'** में निहित **'प्रकाश'** और **'शैत्य'** का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए प्रत्येक

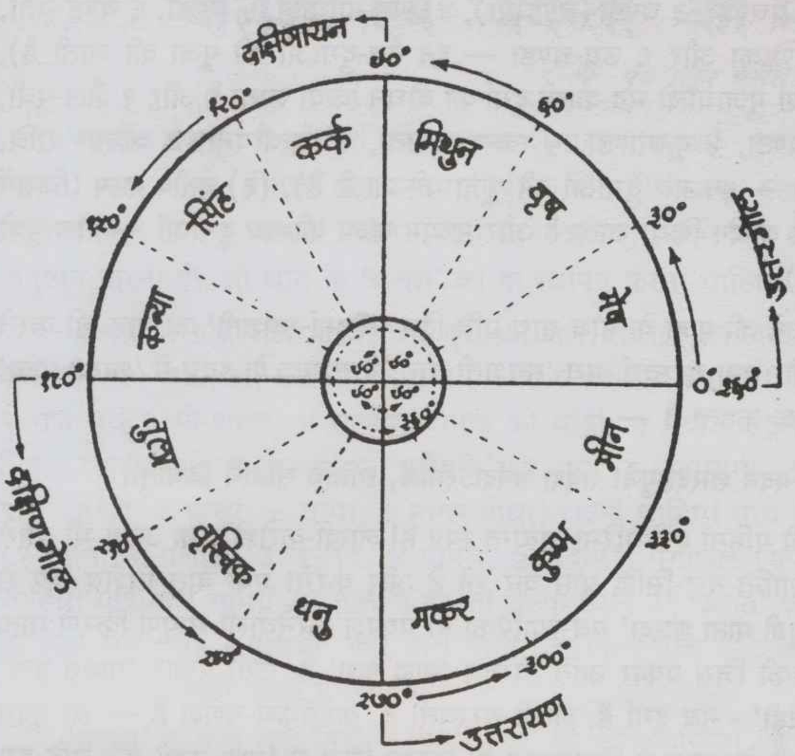

तिथि का महत्त्व खोजा, चाहे वे **'कृष्ण-पक्ष'** की हों या **'शुक्ल-पक्ष'** की अथवा **'पूर्णिमा'** हो या **'अमावास्या'**।

संक्षेप में, **'शारदीय महा-पूजा'** की भूमिका हमारे चारों ओर की **'प्रकृति'** के सत्य से जुड़ी हुई है। कोई भी व्यक्ति इस अवसर पर प्रकाश-रूपा भगवती का **'बोधन'** कर, अपने अन्तर की अग्नि को प्रज्वलित कर सकता है और आश्विन मास की पावनी तिथियों में, शरद्-ऋतु के चन्द्रमा के अमृत से तृप्त होकर अखिल ब्रह्माण्ड-नायिका **'शारदा माता'** को स्थायी रूप में अपना आश्रय बना सकता है। यही कारण है कि इस अवसर पर हमारे तीनों प्रमुख सम्प्रदाय (१ वैष्णव, २ शैव और ३ शाक्त) अपने-अपने भक्तों को विधि-वत् **'माता'** की आराधना का निर्देश देते हैं।

'वैष्णव सम्प्रदाय', शरद् ऋतु के नौ नक्षत्रों में, मूल प्रकाश-स्वरूपा **'शारदा माता'** के निम्न-लिखित नौ स्वरूपों के क्रमशः पूजन-ध्यान का निर्देश करता है। यथा —

१ हस्त — श्रीदेवी, २ चित्रा — अमृतोद्भवा, ३ स्वाती — कमला, ४ विशाखा — चन्द्र-शोभिनी, ५ अनुराधा — विष्णु-पत्नी, ६ ज्येष्ठा — वैष्णवी, ७ मूल — वरारोहा, ८ पूर्वाषाढ़ा — हरि - वल्लभा, ९ उत्तराषाढ़ा — शार्ङ्गिणी।

अन्तिम **'शार्ङ्गिणी'** विष्णु की अभिन्न शक्ति है। इसी शक्ति के बल पर श्री रामचन्द्र ने रावण पर विजय पाई थी।

'शैव' और **'शाक्त-सम्प्रदाय'** के अनुसार **'शारदा-पूजा'** की महिमा बहुत अधिक है। इन सम्प्रदायों में **'चन्द्रमा'** की क्रमशः वर्द्धमान नौ कलाओं (**प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी** एवं **नवमी** तिथि) के सान्निध्य में, मूल प्रकाश-रूपा **'शारदा माता'** की **'नौ दुर्गाओं'** के रूप में पूजा की जाती है। साधक की योग्यता के अनुसार शैव-शाक्त तन्त्र-ग्रन्थों में **'नौ दुर्गाओं'** के तीन कल्प

भी बताए गए हैं। यथा — (१) **उत्तम कल्प** (जिसमें अष्टादश-भुजा उग्रचण्डा दुर्गा का प्रबोधन किया जाता है और १ रुद्र-चण्डा, २ प्रचण्डा, ३ चण्डी (चण्डोग्रा), ४ चण्ड-नायिका, ५ चण्डा, ६ चण्ड-वती, ७ चण्ड-रूपा, ८ अति - चण्डिका और ९ उग्र-चण्डा — इन नव-दुर्गाओं की पूजा की जाती है), (२) **मध्यम कल्प** (जिसमें षोडश भुजावाली भद्र-काली दुर्गा का बोधन किया जाता है और १ शैल-पुत्री, २ ब्रह्म-चारिणी, ३ चन्द्र - घण्टा, ४ कूष्माण्डा, ५ स्कन्द - माता, ६ कात्यायनी, ७ काल - रात्रि, ८ महा-गौरी, ९ सिद्धि-दात्री — इन नव दुर्गाओं की पूजा की जाती है), (३) **तृतीय कल्प** (जिसमें दश-भुजा कात्यायनी-दुर्गा का बोधन किया जाता है और मध्यम कल्प की नव दुर्गाओं — शैल-पुत्री आदि की पूजा की जाती है।)

माता के भक्त नव दुर्गाओं की पूजा के साथ-साथ प्रति-दिन **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** का पाठ भी करते हैं। महा-काली, महा-लक्ष्मी और महा-सरस्वती-मय 'सप्तशती-पाठ' से साधक के हृदय में **'शारदा माता'** विराजने लगती हैं और साधक कहता है —

शारदा शारदाम्भोज-वदनं शारदाम्बुजे! सर्वदा सर्वदाऽस्माकं, सन्निधिं सन्निधिं क्रियात्॥

अतएव **'शारदा-पूजा'** की महिमा एवं गरिमा अत्यन्त स्पष्ट है। लाखों-करोड़ों भक्त आज भी इससे किसी-न-किसी रूप में सुख-शान्ति-बल-सिद्धि प्राप्त कर रहे हैं और करेंगे। एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि **'शैल-पुत्री माता शारदा'** सर्व-व्यापिका हैं। प्रकाश करनेवाली सम्पूर्ण किरणें **माता शारदा** से उत्पन्न होती हैं। उनकी जिस प्रकार अति विस्तृत **'बाह्य पूजा'** है, उसी प्रकार **'मानस पूजा'** भी है। स्थूल रूप में **'शारदा देवी'** - नव दुर्गा हैं, लक्ष्मी-सरस्वती हैं, कार्तिकेय-गणेश हैं — तो सूक्ष्म रूप में 'शारदा माता' हम सभी के हृदय में विराजमान हैं। एकाग्र-चित्त से **'बाह्य पूजा'** कर यदि हम चिन्मयी **'शारदा माता'** का सतत पूजन करेंगे, तो न केवल हमें अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त होगी, अपितु 'माँ शारदा' हमारे हृदय में साक्षात् विराजेंगी भी। यदि ऐसा हुआ, तो फिर हमें किसी वस्तु की अभिलाषा न होगी। हमारा जीवन धन्य होगा।

शारदा-पीठ

अखिल ब्रह्माण्ड-नायिका 'शारदा-पूजा' हिन्दुओं की अति प्राचीन पूजा है। बहुत कम लोगों को ज्ञात होगा कि भारत-वर्ष के शीर्ष प्रदेश 'काश्मीर' का मूल नाम 'शारदा देश' था। प्राचीन काल में, संस्कृत विद्या के दो केन्द्र थे — १- शारदी, २- काशी। बङ्गाल एवं दूर दक्षिण के विद्यार्थी वहाँ अध्ययन के लिये जाते थे।

'शारदी' हिमालय कुक्षि भारत के उत्तर-पश्चिमी छोर पर पर्वत-मालाओं से आवृत है। इस समय यह पाकिस्तान अधिकृत काश्मीर में है। इसकी यात्रा पहले समस्त भारत के लोग करते थे। महा-नद सिन्धु तथा मधुमती के सङ्गम पर शारदा का मन्दिर है, जहाँ 'स्वर्ण पिप्पिलिका' - 'कृष्ण गङ्गा' में मिलती है। 'स्वर्ण पिप्पिलिका' का उल्लेख पुराणों एवं महा-भारत में मिलता है।

'शारदी' की यात्रा भाद्रपद शुक्ल ४ (श्रीगणेश चतुर्थी) को की जाती थी। समस्त भारत से यात्री अमरनाथ की यात्रा के समय यहाँ भी आते थे।

'कलश' एवं 'जयन्ती' का माहात्म्य

❖ *पं० शङ्कर भरोसे झा, खोजपुर, मधुबनी (बिहार)*

'शारदीय नवरात्र' में माँ दुर्गा की पूजा का शुभारम्भ **'कलश'** - स्थापना से होता है। स्थापना हेतु **'कलश'** स्वर्ण, चाँदी, पीतल, ताम्र अथवा मिट्टी के होते हैं। **'कलश'** देखने में सुडौल और पवित्र होने चाहिए। मिट्टी के ऐसे **'कलश'** प्रयोग में नहीं लाने चाहिए, जिनमें छिद्र होने की सम्भावना हो। विशेष अनुष्ठान करना हो, तो धातु के **'कलश'** का ही स्थापन करना चाहिए।

'कलश' में गङ्गा-जल, तीर्थ-जल, नदी का जल, तालाब का जल, झील का जल अथवा जिस कूप का **'याग'** हुआ हो, उसका जल प्रयोग में ला सकते हैं। **'कलश'** के नीचे **'सप्त-मृत्तिका'** (१ अश्व, २ गज एवं ३ गो-शाला, ४ वल्मीक-दीमक की बाँबी, ५ नदी - सङ्गम, ६ तराई, ७ राज-द्वार की मिट्टी) रखनी चाहिए। **'कलश'** में **'सर्वौषधि'** (१ मुरा, २ जटामासी, ३ वच, ४ कूट, ५ हरदी, ६ दारु - हरदी, ७ कचूर, ८ चम्पा, ९ नागर-मोथा) रखनी चाहिए। साथ ही, **'पञ्च-रत्न'**, **'पञ्च पल्लव'** (१ आम, २ पलाश, ३ बरगद, ४ पीपल, ५ वकुल), पूँगीफल (सुपारी) भी श्रद्धा-पूर्वक रखनी चाहिए। यदि कोई सामग्री उपलब्ध न हो, तो उसके स्थान पर **'अक्षत'** चढ़ाने का विधान है। उदाहरण के लिए यदि **'सप्त - मृत्तिका'** नहीं मिल पाती, तो निम्न मन्त्र से अक्षत चढ़ाना चाहिए। यथा — **''सप्त-मृत्तिका - स्थाने अक्षतं समर्पयामि।''**

'कलश' के नीचे शुद्ध मिट्टी में विशुद्ध **'जौ'** को बोना चाहिए। **'जौ'** को आदि- अन्न माना जाता है। **'जौ'** के पौधे को **'जयन्ती'** कहते हैं। **'जयन्ती'** से अनुष्ठान की सफलता का निर्धारण होता है। अनुष्ठान - काल में इसे नित्य पवित्र जल से सींचना चाहिए। अनुष्ठान - काल की समाप्ति पर इसे माँ के मुकुट पर और भुजा पर चढ़ाते हैं, फिर अपने मस्तक पर धारण करते हैं।

अनुष्ठान के बाद **'कलश'** के जल और **'जयन्ती'** का माहात्म्य विविध कार्यों हेतु इस प्रकार है—

(१) कलश - जल का माहात्म्य

- ☐ **'कलश'** के जल से मस्तक पर अभिषेक करने से सभी प्रकार की अभिलाषा पूरी होती है।
- ☐ **'कलश'** के जल को पिलाने से असमय में गर्भ-पात नहीं होता है तथा जिन्हें गर्भ-धारण नहीं होता, उन्हें लाभ होता है।
- ☐ **'कलश'** के जल को वृक्षों, फसल, गो-शाला आदि में डालने से वृक्ष खूब फलते-फूलते हैं, फसल की वृद्धि होती है और गाएँ पर्याप्त मात्रा में दूध देती हैं।
- ☐ **'कलश'** के जल को घर में छिड़कने पर **'प्रेत-बाधा'** का निवारण होता है।
- ☐ **'कलश'** के जल को रोगी के मस्तक पर छिड़कने से रोग का निवारण होता है।
- ☐ **'कलश'** के जल से मन्द बुद्धिवाले छात्र या छात्राओं का अभिषेक करने से उनकी बुद्धि का विकास होता है।

(२) जयन्ती का माहात्म्य

ऐसी **'जयन्ती'**, जिसे **'शारदीय नवरात्र'** में **'हस्त नक्षत्र'** में बोया गया हो और **'श्रवण नक्षत्र'** में काटा गया हो, उसका माहात्म्य विभिन्न कार्यों में प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। यथा —

'विजयादशमी' के दिन माथे पर धारण करने से वर्ष भर सभी क्षेत्रों में विजय प्राप्त होती है।

'जयन्ती' को यन्त्र में मढ़ाकर गले अथवा भुजा पर धारण कर कचहरी (कोर्ट) आदि में जाने से विजय-प्राप्ति होती है।

प्रेत - बाधा - ग्रसित व्यक्ति को **'यन्त्र'** में मढ़ाकर धारण करवाने से प्रेत-बाधा शान्त होती है।

'जयन्ती' को कैश - बाक्स, मनी-बैग आदि में रखने से धन-प्राप्ति होती है।

धारण-विधि— 'जयन्ती' धारण करने के लिए **'यन्त्र'** — सोना, चाँदी, ताम्बे अथवा अष्ट-धातु का बनवाना चाहिए। **'जयन्ती'** को गङ्गा-जल से धोकर **'यन्त्र'** में रखकर बन्द कर देना चाहिए। इसके बाद **'यन्त्र'** को स्पर्श करते हुए **'प्राण-प्रतिष्ठा - मन्त्र'** तीन बार पढ़ना चाहिए। यथा — **'ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः यन्त्र-राजस्य प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः यन्त्र-राजस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः यन्त्र - राजस्य सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः यन्त्र - राजस्य वाङ्-मनस्त्वक्-चक्षुः श्रोत्र - जिह्वा-घ्राण-पाद-पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।'**

फिर **'यन्त्र'** का पञ्चोपचाप-पूजन कर लाल रेशमी धागे में गूँथ कर निम्न मन्त्र को पढ़ते हुए गले अथवा भुजा पर धारण करे। नारी वाम-भुजा पर और पुरुष दाहिनी भुजा पर धारण करे। धारण किए हुए **'यन्त्र'** को उतारना नहीं चाहिए। **'धारण - मन्त्र'** इस प्रकार है —

जयन्ती मङ्गला काली, भद्र-काली कपालिनी। दुर्गा क्षमा शिवा धात्री, स्वधा स्वाहा नमोऽस्तु ते।।

★ ★ ★

माँ का स्मरण !

प्रातः-काल उठकर और आवश्यक दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर भोजन करना, इसके उपरान्त अपने काम-धन्धे पर चल देना और वहाँ से लौट कर रात्रि का भोजन करना एवं फिर सो जाना— सामान्यतः यही कार्य-क्रम प्रत्येक व्यक्ति का होता है।

अपने जीवन-काल में विभिन्न कार्यों में हम कितना समय लगाते हैं तथा इस अवधि में हमारा कितना विकास होता है, इन बातों का चिन्तन बहुत रोचक है। ध्यान देंगे, तो देखेंगे कि बहुत कम क्षण हम **सत्-चित्-आनन्द-स्वरूपा 'माँ' के चरणों अथवा 'माँ' के स्मरण** में व्यतीत करते हैं। ऐसे में हमें वास्तविक आनन्द मिले, तो कैसे मिले? **'माँ'** के स्मरण से हमें सही मार्ग, शक्ति, आनन्द सभी कुछ प्राप्त हो सकता है। आवश्यकता है, कुछ क्षण नित्य माँ और पुत्र के सम्बन्ध को सार्थक बनाने हेतु समर्पित करने की! — **श्रीरञ्जन सिंह,** थाना पारा चौक, पो० / जिला पाकुड़ (बिहार)

भगवती दुर्गा का मानसिक पूजन

–'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, चण्डी-धाम, प्रयाग-६

(१) संक्षिप्त मानसिक पूजन

हृत्-कमल में भगवती दुर्गा के **'पूजा-यन्त्र'** का ध्यान करे। **'पूजा-यन्त्र'** के **'विन्दु'** में **भगवती दुर्गा का ध्यान** करे। यथा–

सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्या चतुर्भिर्भुजैः।
शङ्खं चक्र-धनुः शराँश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।।
आमुक्ताङ्गद- हार- कङ्कण-रणत्- काञ्ची- क्वणन्- नूपुरा।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत् - कुण्डला।।

अर्थात् सिंह पर बैठी हुई, अर्ध-चन्द्र को शिर पर धारण करनेवाली, मरकत मणि हरित वर्णवाली, चार भुजावाली, जिनमें शङ्ख, चक्र, धनुष और बाण हैं, त्रिनयना, केयूर, हार, कङ्कण पहिने हुई, झनझन करनेवाली काञ्ची और नूपुर तथा रत्नों के कुण्डलों को धारण किए 'दुर्गा' हमारी दुर्गति-हारिणी हो।

उक्त प्रकार से ध्यान करने के पश्चात् भगवती दुर्गा की **'मानस-पूजा'** करे। यथा–

'ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'– यह पढ़कर अधोमुख कनिष्ठा और अङ्गुष्ठ से 'गन्ध-मुद्रा' दिखाए। **'ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'– यह पढ़कर** अधोमुख तर्जनी और अङ्गुष्ठ से 'पुष्प-मुद्रा' दिखाए।**'ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'** – यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख तर्जनी और अङ्गुष्ठ से 'धूप-मुद्रा' दिखाए।**'ॐ रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'**– यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख मध्यमा और अङ्गुष्ठ से 'दीप-मुद्रा' दिखाए। **'ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'**– यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख अनामिका और अङ्गुष्ठ से 'नैवेद्य-मुद्रा' दिखाए। **'ॐ शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्रीदुर्गा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि'**– यह पढ़कर अधोमुख कनिष्ठा और अङ्गुष्ठ से 'ताम्बूल-मुद्रा' दिखाए।

इस प्रकार **'मानसिक पूजन'** कर यथा-शक्ति भगवती दुर्गा के मन्त्र का **'मानसिक जप'** करे।

*****

(२) विस्तृत मानसिक पूजन

हृत्-कमल में भगवती दुर्गा के 'पूजा-यन्त्र' का ध्यान करे। फिर 'पूजा-यन्त्र' के 'विन्दु' में भगवती दुर्गा का ध्यान करे। यथा–

विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृग-पति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां,
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्-हस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखं चापं गुणं तर्ज्जनीं,
बिभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे।।

अर्थात्– तेजो-रूपा माँ दुर्गा विद्युत् के सदृश वर्णवाली हैं। मृग-पति अर्थात् सिंह के स्कन्ध या ग्रीवा (गर्दन) पर सवार हैं। भीषण अर्थात् डरावनी आकृतिवाली हैं। हाथों में करवाल-खड्ग और ढाल लिए कन्याओं से घिरी हैं। भुजाओं में १ चक्र, २ गदा, ३ खड्ग, ४ ढाल, ५ शर(बाण), ६ धनुष, ७ गुण(रस्सी या पाश) और तर्जनी-मुद्रा (सावधान करनेवाली) रखे हैं। तीन नेत्रोंवाली हैं।

उक्त प्रकार से ध्यान कर **भगवती दुर्गा की 'मानस-पूजा'** करे। पहले आसन प्रदान करे। यथा–

'मूलं दुर्गा देवि! इदं हृदय-पद्मासनमास्यताम्'–यह मन्त्र पढ़कर **'पद्म-मुद्रा'** से हृदय-रूपी आसन पर देवता को बैठाए। तदनन्तर पाद्यादि उपचारों से उसका निम्न प्रकार से मानसिक पूजन करे–

'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै सहस्त्रार-च्युतामृतं पाद्यं नमः'–यह पढ़कर चरणों पर सहस्त्र-दल कमल से झरनेवाले अमृत-रूपी जल का **'पाद्य'** समर्पित करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः मन-रूपमर्घ्यं स्वाहा'**–यह पढ़कर मस्तक पर मन-रूपी **'अर्घ्य'** प्रदान करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः सहस्त्रार-च्युतामृत-रूपमाचमनं स्वधा'**–यह पढ़कर सहस्त्र-दल-कमल से झरनेवाले अमृत से मुख में **'आचमन'** प्रदान करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः सहस्त्रार-च्युतामृतैः सर्वाङ्गे स्नानं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर सहस्त्र-दल से झरनेवाले अमृत-रूपी जल से स्नान कराए। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै आकाश-तत्त्व-रूप-वसनं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर आकाश-रूपी वसन और आभूषण प्रदान करे।**'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः तत्त्व-रूपं गन्धं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर तत्त्व-रूपी गन्ध प्रदान करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः चित्त-रूपं पुष्पं समर्पयामि वौषट्'**–यह पढ़कर चित्त-रूपी पुष्प प्रदान करे।**'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः प्राण-रूपं धूपं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर प्राण-रूपी धूप प्रदान करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः तेजस्तत्त्व-रूपं दीपं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर तेज-रूपी दीपक प्रदान करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः सुधाम्बुधि-रूपं नैवेद्यं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर नैवेद्य प्रदान करे।

'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः अनाहत-शब्द-रूप-घण्टा-वादनं समर्पयामि नमः'–यह पढ़कर अनाहत-शब्द-रूपी घण्टा-वादन कर दुर्गा देवी को प्रसन्न करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः वायु-तत्त्व-रूपं चामरं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर वायु-तत्त्व-रूपी चामर से दुर्गा देवी को प्रसन्न करे। **'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः इन्द्रिय-कर्माणि मनश्चाञ्चल्य-रूपं नृत्यं समर्पयामि नमः'**–यह पढ़कर इन्द्रियों की गति-विधि और मन की चञ्चलता-रूपी नृत्य दुर्गा देवी को प्रदान करे।

'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः अमाय-अनहङ्कार-अराग-अमद-अमोह-अदम्भ-अद्वेष-अक्षोभ-अमात्सर्य-अलोभ-अहिंसा-इन्द्रिय-निग्रह-दया-क्षमा-ज्ञान-रूपाणि पञ्च-दश पुष्पाणि समर्पयामि वौषट्'–यह पढ़कर पन्द्रह पुष्पों की 'पुष्पाञ्जलि' प्रदान करे।

'मूलं नारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै काम-क्रोध-रूपं बलिं समर्पयामि नमः'–यह पढ़कर काम-क्रोध-रूपी पशु की बलि दुर्गा देवी को प्रदान करे।

इस प्रकार पूजन कर इष्ट-मन्त्र (मूल-मन्त्र) का 'जप' करे। ऊपर मानसिक पूजन में जहाँ-जहाँ 'मूलं' लिखा है, वहाँ-वहाँ **'मूल-मन्त्र'** का उच्चारण करना चाहिए। उदाहरण-स्वरूप यदि मूल-मन्त्र **श्रीदुर्गा देवी का अष्टाक्षर मन्त्र** है, तो इसके स्थान पर **'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः'** कहना चाहिए।

मानस-जप-विधि– मानसिक 'जप' के लिए मन-ही-मन **'कुण्डलिनी'** को सूत्र मानकर **'पचास मातृका वर्णों की विन्दु-सहित माला'** ग्रथित करे। फिर इस 'माला' से लोम-विलोम-क्रम से अपने **'मूल-मन्त्र'** का **'जप'** करे। **'वर्ण-माला'** में **'क्ष'**-वर्ण को **'सुमेरु'** माने। **'अष्टाक्षर-मन्त्र' (ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः) का वर्ण-माला में 'जप'** आगे दिया जा रहा है।

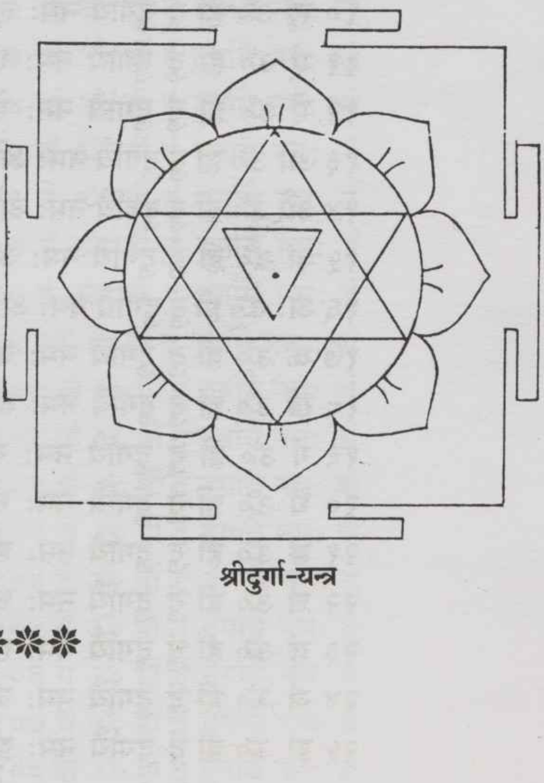

श्रीदुर्गा-यन्त्र

✻✻✻✻✻

श्रीदुर्गा-अष्टाक्षर-मन्त्र का 'जप'

ॐ

१ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अं
२ आं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः आं
३ इं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः इं
४ ईं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ईं
५ उं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः उं
६ ऊँ ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऊं
७ ऋं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऋं
८ ॠं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ॠं
९ ऌं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऌं
१० ॡं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ॡं
११ एं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः एं
१२ ऐं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऐं
१३ ओं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ओं
१४ औं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः औं
१५ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अं
१६ अः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अः
१७ कं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः कं
१८ खं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः खं
१९ गं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः गं
२० घं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः घं
२१ ङं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ङं
२२ चं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः चं
२३ छं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः छं
२४ जं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः जं
२५ झं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः झं
२६ ञं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ञं
२७ टं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः टं
२८ ठं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ठं
२९ डं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः डं
३० ढं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ढं
३१ णं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः णं
३२ तं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः तं
३३ थं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः थं
३४ दं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः दं
३५ धं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः धं
३६ नं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः नं
३७ पं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः पं
३८ फं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः फं
३९ बं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः बं
४० भं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः भं
४१ मं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः मं
४२ यं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः यं
४३ रं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः रं
४४ लं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः लं
४५ वं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः वं
४६ शं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः शं
४७ षं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः षं
४८ सं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः सं
४९ हं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः हं
५० ळं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ळं

क्षं

५१ ळं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ळं
५२ हं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः हं
५३ सं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः सं
५४ षं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः षं
५५ शं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः शं
५६ वं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः वं
५७ लं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः लं
५८ रं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः रं
५९ यं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः यं
६० मं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः मं
६१ भं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः भं
६२ बं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः बं
६३ फं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः फं
६४ पं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः पं
६५ नं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः नं
६६ धं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः धं
६७ दं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः दं
६८ थं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः थं
६९ तं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः तं
७० णं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः णं
७१ ढं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ढं
७२ डं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः डं
७३ ठं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ठं
७४ टं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः टं
७५ ञं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ञं
७६ झं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः झं
७७ जं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः जं
७८ छं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः छं
७९ चं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः चं
८० ङं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ङं
८१ घं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः घं
८२ गं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः गं
८३ खं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः खं
८४ कं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः कं
८५ अः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अः
८६ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अं
८७ औं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः औं
८८ ओं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ओं
८९ ऐं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऐं
९० एं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः एं
९१ ॡं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ॡं
९२ ऌं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऌं
९३ ॠं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ॠं
९४ ऋं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऋं
९५ ऊं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ऊं
९६ उं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः उं
९७ ईं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः ईं
९८ इं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः इं
९९ आं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः आं
१०० अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अं
१०१ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अं
१०२ कं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः कं
१०३ चं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः चं
१०४ टं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः टं
१०५ तं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः तं
१०६ पं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः पं
१०७ यं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः यं
१०८ शं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः शं

जप-समर्पण– 'वर्ण-माला' में उक्त प्रकार से 'जप' करने के बाद मन-ही-मन भगवती दुर्गा को 'जप' का समर्पण करे। यथा–

ॐ सर्वान्तरात्म-निलये, स्वान्तर्ज्योतिः-स्वरूपिणि।
गृहाणान्तर्जपं मातः, दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते।।

इसके बाद **'मानसिक हवन'** करे। यथा–

मानसिक हवन – 'मूलाधार-चक्र' में **'मानसिक हवन'** करे। यहाँ 'चित्त'-रूपी अग्नि में 'हवन' करे। 'हवन' करते समय 'मूलाधार-चक्र' को १ अन्तरात्मा, २ परमात्मा, ३ ज्ञानात्मा – इन तीनों से व्याप्त समझे तथा 'कुण्ड' की आनन्द-रूप मेखला का एवं त्रिवलय-युक्त नाद-विन्दु-रूप योनि-युक्त 'चित्-कुण्ड' का ध्यान करे। 'कुण्ड' में दाहिनी ओर **पिङ्गला,** बाँई ओर **इड़ा** और मध्य में **सुषुम्णा** का ध्यान कर **'धर्म-अधर्म-रूपी हवि'** से निम्न मन्त्रों से 'हवन' करे–

(१) **मूलं नाभौ चैतन्य-रूपेऽग्नौ हविषा मनसा स्रुचा।**
ज्ञान-प्रदीपिते नित्यमक्ष-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।

श्रीदुर्गा-देव्यै स्वाहा–यह मन्त्र पढ़कर 'प्रथम आहुति' प्रदान करे।

(२) **मूलं धर्माधर्म-हविर्दीप्ते आत्माग्नौ मनसा स्रुचा।**
सुषुम्ना-वर्त्मना नित्यमक्ष-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।

श्रीदुगा- देव्यै स्वाहा–यह मन्त्र पढ़कर 'द्वितीय आहुति' प्रदान करे।

(३) **मूलं प्रकाशाकाश-हस्ताभ्यां, अवलम्ब्यात्मना स्रुचा।**
ज्ञान-प्रदीपिते नित्यं, ब्रह्म-वृत्तीर्जुहोम्यहम्।।

श्रीदुर्गा-देव्यै स्वाहा–यह मन्त्र पढ़कर 'तृतीय आहुति' प्रदान करे।

(४) **मूलं अन्तर-निरन्तर-निरिन्धन-मेधमाने।**
मोहान्धकार - परिपन्थिनि सम्विदग्नौ।।
कस्मिंश्चिदद्भुत- मरीचि- विकास- भूमौ।
विश्वं जुहोमि वसुधा-दिशि-वावसानम्।।

श्रीदुर्गा-देव्यै स्वाहा–यह पढ़कर 'चौथी आहुति' प्रदान करे। फिर–

(५) **इदं तु पात्र-भरितमहन्ता-परमामृतम्।**
पूर्णाहुतिमयं वह्नौ, पूर्ण-होमं जुहोम्यहम्।।

श्रीदुर्गा-देव्यै स्वाहा–यह पढ़कर 'पूर्णाहुति' प्रदान करे।

✼✼✼✼✼

भगवती श्रीदुर्गा का षोडशोपचार पूजन

पहले **भगवती श्रीदुर्गा का स्वागत** करे। यथा—**'हे श्रीदुर्गे मातः आगतं सु स्वागतं'**—यह कहकर दोनों हाथों की अँगुलियाँ फैला उन्हें अधो-मुख-कर स्वागत करे। इसके बाद—**'श्रीदुर्गा-देवि इदमासने आस्यताम्'**—यह कहकर **मूर्त्ति** या **चित्र** के सामने **आसन**-रूप में एक पुष्प प्रदान करे।

१ फिर **'पाद्य'** समर्पित करे —**'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि'।** जल में **कमल-पुष्प, दूर्वा** आदि मिला ले। जल **'अनामा-अंगुष्ठ की मुद्रा'** से प्रदान करे।

२ **अर्घ्य—'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै इदं अर्घ्यं स्वाहा'**—यह पढ़कर **अर्घ्य** समर्पित करे। **अर्घ्य** हेतु जल में दूर्वा, तिल, पुष्प, अक्षत, चन्दन मिलाए **सभी अँगुलियों की मुद्रा** से प्रदान करे।

३ **आचमन— 'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः इदमाचमनं स्वधा'**—यह पढ़कर कनिष्ठा-रहित चार अंगुलियों की **'आचमन'-मुद्रा** से आचमन कराए।

४ **मधुपर्क— 'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै इदं मधुपर्कं स्वधा'**—यह पढ़कर **अधो-मुखी अनामा और अंगुष्ठ की मुद्रा** से अर्घ्य प्रदान करे। **पुनः आचमन— 'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै इदं शुद्धमाचमनीयं समर्पयामि'**—यह पढ़कर पुनः जल लेकर पूर्व-वत् कराए।

५ **स्नान— 'श्रीनारद-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः'**— यह पढ़कर **'ज्ञान-मुद्रा** से **गन्धाक्षत** छोड़ कर भगवती को **स्नान-मण्डप** में ले जाने की भावना करे। फिर **'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः इदं हरिद्रादि-द्रव्यं तैलं च समर्पयामि'**—ज्ञान-मुद्रा से गन्धाक्षत छोड़कर ये द्रव्य प्रदान करे। तब **'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः स्नानं समर्पयामि'**—यह पढ़ **'कनिष्ठा'**-रहित दाहिने हाथ की शेष अँगुलियों की मुष्टि से पवित्र जल से स्नान करावे।

६ **वस्त्र— 'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः वस्त्रं समर्पयामि नमः'**—यह मन्त्र पढ़ कर **अँगूठे से छुई हुई अनामा और मध्यमा से** वस्त्र प्रदान करे।

७ **यज्ञोपवीत—'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि'**—इस मन्त्र से उक्त **वस्त्र-प्रदान-मुद्रा** से **'यज्ञोपवीत'** प्रदान करे। ८ **आभूषण—'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः भूषणानि समर्पयामि'**—इस मन्त्र से **दाहिने अँगूठे और अनामिका के योग से** बनी मुद्रा से **'आभूषण'** प्रदान करे। ९ गन्ध—**'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः गन्धं समर्पयामि'**—इस मन्त्र से **कनिष्ठा और अंगुष्ठ की मुद्रा**-द्वारा **कर्पूर-मिश्रित चन्दन** देवता के अङ्ग में प्रदान करे।

१० **अक्षत—'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः अक्षतान् समर्पयामि'**—इस मन्त्र से **सब अँगुलियों के संयोग से बनी मुद्रा**-द्वारा **'अक्षत'** प्रदान करे। ११ **पुष्प— 'श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः पुष्पं समर्पयामि वौषट्'**—इस मन्त्र से **तर्जनी-अंगुष्ठ की मुद्रा** से **'पुष्प'** प्रदान करे।

१२ **धूप—** पहले पवित्र जल से **'फट्'** मन्त्र पढ़कर **'धूप'-पात्र का प्रोक्षण** करे। फिर **'नमः'** मन्त्र पढ़ **गन्ध-पुष्प से** उसका पूजन करे। तब **धूप-पात्र** को अपने सामने रखकर **'रं'**-बीज का उच्चारण कर उस पर अग्नि रखे और अपना **मन्त्र** पढ़कर अथवा **भगवती दुर्गा का स्मरण** कर अग्नि में **दशाङ्ग धूप** छोड़े। इसके बाद हाथ से **घण्टा** बजाए और **दाहिने हाथ**

की तर्जनी और अँगूठे की मुद्रा से **धूप-पात्र** लिए हुए **धूप** प्रदान करे।

ॐ वनस्पति-रसोपेतो, गन्धाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्व-देवानां, धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

'साङ्गायै सपरिवारायै श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः धूपं समर्पयामि'—यह पढ़कर **धूप** प्रदान करे और **धूप-पात्र** भगवती के चित्र के **वाम-भाग** में रख उस पर पवित्र जल छोड़े।

१३ दीप— मन्त्र अथवा **भगवती दुर्गा का स्मरण** करते हुए **बती** रखे। **'फट्'**—मन्त्र से पवित्र जल से **'प्रोक्षण'** करे। **प्रणव (ॐ)** का स्मरण करते हुए उसे जलावे। फिर **'घण्टा'** बजाता हुआ **'नेत्रों'** से लेकर **'पाद'**-पर्यन्त **'दीप'** दिखावे। यथा—

ॐ सु-प्रकाशो महा-दीपः, सर्वतस्तिमिरापहः। स-बाह्याभ्यन्तर-ज्योतिर्दीपोऽयं प्रति-गृह्यताम्॥

'साङ्गायै सपरिवारायै श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः दीपं समर्पयामि'—यह पढ़कर **'दीप'** प्रदान करे और **दीप-पात्र** को भगवती दुर्गा की मूर्त्ति या चित्र के **दाहिने** रख दे। तब पवित्र जल से उत्सर्ग कर **'मध्यमा-अंगुष्ठ' की 'दीप-मुद्रा'** दिखावे।

१४ **नैवेद्य—** इसके बाद **भगवती दुर्गा की मूर्त्ति** या **चित्र** के **सम्मुख** या **दाहिने** जल से एक **'चतुरस्त्र का मण्डल'** बनावे। उस पर **'नैवेद्य'-पात्र** रखे। **'फट्'**-मन्त्र पढ़कर **'चक्र-मुद्रा'** से उसकी रक्षा करे। **'ॐ ह्रीं नमः'** कहकर पवित्र जल से उसका **'प्रोक्षण'** करे। अपना **मन्त्र** अथवा **भगवती दुर्गा का स्मरण** कर उसका **'वीक्षण'** करे। अर्थात् उसे निहारे। **दाहिने हाथ के ऊपर बाँया हाथ रखकर 'नैवेद्य'-पात्र को** ढँके और वायु-वीज **'यं'** का सोलह बार **'जप'** करे तथा यह समझे कि वायु ने उसके **दोषों का शोषण** कर डाला है। फिर उसी तरह अग्नि-बीज **'रं'** का सोलह बार **'जप'** करे और यह समझे कि अग्नि ने उसके दोषों को जला डाला है। **अमृत-बीज 'वं'** का सोलह बार जप करे और यह समझे कि **नैवेद्य— 'अमृत'**-वृष्टि से भर गया है। पुनः पवित्र जल से उसका **'प्रोक्षण'** करे। फिर अपने **मन्त्र** से अथवा **भगवती दुर्गा के पवित्र नामों** से आठ बार अभिमन्त्रित करे। **'गन्ध-पुष्प'** से उसका पूजन करे। **बाएँ अँगूठे** से **'नैवेद्य'-पात्र** को स्पर्श कर और दाहिने हाथ में जल लेकर—

ॐ सत्पात्र-सिद्धं सुहविर्विविधानेक-भक्षणाम्। निवेदयामि देवेशि! सानुगायै गृहाण भो॥

'साङ्गायै सपरिवारायै सायुधायै सवाहनायै श्रीनारद-शिव सहितायै श्रीदुर्गायै नमः नैवेद्यं समर्पयामि' —यह पढ़कर भावना से **भगवती दुर्गा के दाहिने हाथ में जल** छोड़कर बाएँ हाथ से **'कमल-मुद्रा** और दाहिने हाथ से **'ग्रास-मुद्रा'** दिखावे।

१५ **पुष्पाञ्जलि— 'पुष्पाञ्जलि'** देकर पुनः **'पवित्र जल'** प्रदान करे—

ॐ समस्त-देव-देवेशि! सर्वावाप्ति-करं परम्। अखण्डानन्द-सम्पूर्णे, गृहाण जलमुत्तमम्॥

'साङ्गायै सपरिवारायै सायुधायै सवाहनायै श्रीनारद-शिव-सहितायै श्रीदुर्गायै नमः जलं समर्पयामि।' यह पढ़ **कर्पूरादि सुवासित जल** स्वर्णादि पवित्र पात्र में प्रदान करे।

१६ **ताम्बूल—**इसके बाद ताम्बूल पर पवित्र जल छिड़क कर भगवती को अर्पित करे। यथा— **एला-लवङ्ग-कर्पूर-नागवल्ली-दलैर्युतम्। पूजा-भागेरितं देवि! ताम्बूलं गृह्यतां नमः॥**

अन्त में **क्षमा-प्रार्थना** करते हुए भावना से **'प्रदक्षिणा'** करे। जिन बन्धुओं की **'दीक्षा'** हुई हो, वे अपने मन्त्र को पढ़कर प्रत्येक **'उपचार'** अर्पित करें।

* * *

श्रीअर्जुन-कृत सर्व-सिद्धि-दायक

श्रीदुर्गा-स्तवन प्रयोग-विधि

–पं० हेमकान्त शर्मा, श्रीशास्त्री माध्यमिक विद्यालय, स्टेशन मार्ग, रतलाम (म० प्र०)

विनियोग– ॐ अस्य श्रीभगवती दुर्गा-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीकृष्णार्जुन-स्वरूपी नर-नारायणो ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीदुर्गा देवता, ह्रीं बीजं, ऐं शक्तिः, श्रीं कीलकं, मम अभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास– श्रीकृष्णार्जुन-स्वरूपी-नर-नारायण-ऋषिभ्यो नमः शिरसि, अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे, श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदि, ह्रीं-बीजाय नमः गुह्ये, ऐं-शक्त्यै नमः पादयोः, श्रीं-कीलकाय नमः नाभौ, मम अभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास– ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ ह्रः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्।

अङ्ग-न्यास– ॐ ह्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं कवचाय हुं, ॐ ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्, ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

ध्यान– **सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्या चतुर्भिर्भुजैः,।**
शङ्खं चक्र-धनुः-शरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा,।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला।।

मानस-पूजन– ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः यं वाय्वात्मक धूपं घ्रापयामि। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि।

।। मूल-स्तोत्र-पाठ ।।

श्रीअर्जुन उवाच–

नमस्ते सिद्ध-सेनानि, आर्ये मन्दर-वासिनि! कुमारि कालि कापालि, कपिले कृष्ण-पिङ्गले।।१।।

भद्र-कालि! नमस्तुभ्यं, महा-कालि! नमोऽस्तु ते। चण्डि चण्डे! नमस्तुभ्यं, तारिणि वर-वर्णिनि।।२।।

कात्यायनि महा-भागे, करालि विजये जये! शिखि पिच्छ-ध्वज-धरे, नानाभरण-भूषिते।।३।।

अट्टट-शूल-प्रहरणे, खड्ग-खेटक-धारिणि! गोपेन्द्रस्यानुजे ज्येष्ठे, नन्द-गोप-कुलोद्भवे।।४।।

महिषासृक्-प्रिये नित्यं, कौशिकि पीत-वासिनि! अट्टहासे कोक-मुखे, नमस्तेऽस्तु रण-प्रिये।।५।।

उमे शाकम्भरि श्वेते, कृष्णे कैटभ-नाशिनि! हिरण्याक्षि विरूपाक्षि, सु-धूम्राक्षि! नमोऽस्तु ते।।६।।

वेद-श्रुति-महा-पुण्ये, ब्रह्मण्ये जात-वेदसि! जम्बू-कटक-चैत्येषु, नित्यं सन्निहितालये।।७।।

त्वं ब्रह्म-विद्या विद्यानां, महा-निद्रा च देहिनाम्। स्कन्ध-मातर्भगवति, दुर्गे कान्तार-वासिनि।।८।।

स्वाहाकारः स्वधा चैव, कला काष्ठा सरस्वती। सावित्री वेद-माता च, तथा वेदान्त उच्यते।।९।।

स्तुतासि त्वं महा-देवि! विशुद्धेनान्तरात्मा। जयो भवतु मे नित्यं, त्वत्-प्रसादाद् रणाजिरे।।१०।।

कान्तार-भय-दुर्गेषु, भक्तानां चालयेषु च। नित्यं वससि पाताले, युद्धे जयसि दानवान्।।११।।

त्वं जम्भिनी मोहिनी च, माया ह्रीः श्रीस्तथैव च। सन्ध्या प्रभावती चैव, सावित्री जननी तथा।।१२।।

तुष्टिः पुष्टिर्धृतिर्दीप्तिश्चन्द्रादित्य-विवर्धिनी। भूतिर्भूति-मतां सङ्ख्ये, वीक्ष्यसे सिद्ध-चारणैः।।१३।।

।। फल-श्रुति ।।

यः इदं पठते स्तोत्रं, कल्यं उत्थाय मानवः। यक्ष-रक्षः-पिशाचेभ्यो, न भयं विद्यते सदा।।१।।

न चापि रिपवस्तेभ्यः, सर्पाद्या ये च दंष्ट्रिणः। न भयं विद्यते तस्य, सदा राज-कुलादपि।।२।।

विवादे जयमाप्नोति, बद्धो मुच्येत बन्धनात्। दुर्गं तरति चावश्यं, तथा चोरैर्विमुच्यते।।३।।

संग्रामे विजयेन्नित्यं, लक्ष्मीं प्राप्नोति केवलाम्। आरोग्य-बल-सम्पन्नो, जीवेद् वर्ष-शतं तथा।।४।।

अर्थात् श्रीअर्जुन बोले– हे सिद्ध-सेनानि, आर्ये, मन्दर-वासिनि, कुमारि, कालि, कापालि, कपिले, कृष्ण-पिङ्गले! तुम्हें नमस्कार है।।१।।

हे भद्र-कालि! तुम्हें नमस्कार। हे महा-कालि! तुम्हें नमस्कार। हे चण्डि, हे चण्डे, हे वर-वर्णिनि, हे तारिणि! तुम्हें नमस्कार।।२।।

हे कात्यायनि, महा-भागे, करालि, विजये, जये, शिखि, पिच्छ-ध्वज-धरे, नानाभरण-भूषिते, अट्टट-शूल-प्रहरणे, खड्ग-खेटक-धारिणि, गोपेन्द्र की अनुजे, ज्येष्ठे, नन्द-गोप-कुलोद्भवे, नित्य महिषासृक्-प्रिये, कौशिकि, पीत-वासिनि, अट्टहासे, कोक-मुखे, रण-प्रिये! तुम्हें नमस्कार।।३-५।।

हे उमे, शाकम्भरि, श्वेते, कृष्णे, कैटभ-नाशिनि, हिरण्याक्षि, विरूपाक्षि, सु-धूम्राक्षि! तुम्हें नमस्कार।।६।।

हे वेद-श्रुति-महा-पुण्ये, ब्रह्मण्ये, जात-वेदसि, जम्बू-कटक-चैत्यों में नित्य सन्निहितालये! विद्याओं में तुम ब्रह्म-विद्या हो और देह-धारियों की महा-निद्रा हो। हे स्कन्द-मातः, भगवति, दुर्गे, कान्तार-वासिनि! तुम स्वाहा और स्वधा, कला, काष्ठा, सरस्वती, सावित्री, वेद-माता तथा वेदान्त कही जाती हो।।७-८।।

हे महा-देवि! विशुद्ध अन्तरात्मा द्वारा तुम वन्दिता हो। तुम्हारी प्रसन्नता से युद्ध-क्षेत्र में मेरी नित्य विजय हो। भयङ्कर वन्य दुर्गों में और भक्तों के आवास में, पाताल में तुम सदा वास करती हो। युद्ध में दानवों को

जीतती हो।।९-१०।।

तुम जम्भिनी और मोहिनी हो। माया, ह्रीं और श्रीं हो। सन्ध्या और प्रभावती, सावित्री तथा जननी हो तुष्टि, पुष्टि, धृति, दीप्ति और चन्द्रादित्य-विवर्धिनी हो। ऐश्वर्य-वान् लोगों की विभूति हो। युद्ध में सिद्ध-चारणों द्वारा देखी जाती हो।।११-१२।।

फल-श्रुति– जो मनुष्य प्रातः-काल इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसे यक्ष, राक्षस और पिशाचों से कभी भय नहीं होता। शत्रुओं और सर्प आदि काटनेवाले विषैले जीवों तथा शासक-वर्ग से भी उसे भय नहीं रहता। विवाद में विजय-प्राप्ति होती है और बन्दी बन्धन से मुक्त हो जाता है। दुर्गम सङ्कट का निवारण होता है और चोरों से मुक्ति होती है। इतना ही नहीं, इस स्तोत्र का पाठ करनेवाला आरोग्य और बल से सम्पन्न होकर सौ वर्षों की आयु को प्राप्त करता है।

प्रयोग-विधि

उक्त स्तोत्र 'महा-भारत' के 'भीष्म-पर्व' से उद्‌धृत है। श्रीकृष्ण ने गाण्डीवधारी अर्जुन को युद्ध में विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से **'भगवती दुर्गा की आराधना'** हेतु कहा था। श्रीअर्जुन ने भगवती दुर्गा की स्तुति की। भगवती दुर्गा की यह स्तुति ऊपर प्रकाशित है। **'कल्याण मन्दिर प्रकाशन, प्रयाग'** द्वारा प्रकाशित 'श्रीदुर्गा-स्तव-मञ्जरी' (मूल्य ३०-००) में भी यह स्तुति प्रकाशित है, किन्तु इसकी **'प्रयोग-विधि'** नहीं दी गई है। यहाँ इसे **'प्रयोग-विधि'** सहित प्रकाशित किया जा रहा है, जिससे अधिक-से-अधिक भक्त-जन लाभ उठा सकें।

उक्त 'स्तोत्र' की साधना भगवती के मन्दिर में अथवा घर के एकान्त कक्ष में करनी चाहिए। 'स्तोत्र'-पाठ भगवती के चित्र के सामने घी का दीपक जला कर करना चाहिए। 'घी' के दीपक में बत्ती के लिए अपनी नाप के बराबर रुई के सूत को ५ बार मोड़कर बटे तथा बटी हुई बत्ती को कुंकुम से रङ्गे। लाल वस्त्र पहने एवं लाल आसन पर बैठकर **'स्तोत्र-पाठ'** करे। **'नवरात्र'** अथवा **'सर्व-सिद्धि-योग'** से **'पाठ'** प्रारम्भ करे। कुल ९ या २१ दिन पाठ करे तथा प्रतिदिन ९ या २१ बार **'पाठ'** करे। **'पाठ'** के बाद **'हवन'** करे। साधना-काल में **'ब्रह्मचर्य'** का पालन करे। इससे सभी प्रकार की **बाधाएँ** समाप्त होती हैं तथा **दरिद्रता** का नाश होता है। **शासकीय-सङ्कट, शत्रु-बाधा** की समाप्ति के लिए यह अनुभूत सिद्ध प्रयोग है।

❋❋❋❋❋

सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-विधान

विनियोग— ॐ अस्य श्रीवनदुर्गा-मन्त्रस्य श्रीआरण्यक ऋषिः, अत्यनुष्टुप् छन्दः, सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा देवता, दुं वीजं, स्वाहा शक्तिः, सर्व-दुर्गति-मोचने जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास— श्रीआरण्यक-ऋषये नमः शिरसि, अत्यनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, सर्व-दुर्गति-मोचनी-श्रीवनदुर्गा-देवतायै नमः हृदि, दुं-बीजाय नमः गुह्ये, स्वाहा-शक्तये नमः पादयोः, सर्व-दुर्गति-मोचने जपे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

षडङ्ग-न्यास	**कर-न्यास**	**अङ्ग-न्यास**
ॐ **उत्तिष्ठ-पुरुषि** दुर्गायै रक्ष रक्ष	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ **किं स्वपिषि** दुर्गायै रक्ष रक्ष	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ **भयं मे समुपस्थितं** दुर्गायै रक्ष रक्ष	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ **यदि शक्यमशक्यं च** दुर्गायै रक्ष रक्ष	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ॐ **तन्मे भगवति** दुर्गायै रक्ष रक्ष	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ॐ **शमय स्वाहा** दुर्गायै रक्ष रक्ष	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान— **सौवर्णाम्बुज-मध्यगां त्रि-नयनां सौदामिनी-सन्निभाम्,**
चक्रं शङ्ख-वराभयानि दधतीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम्।
ग्रैवेयाङ्गद-हार-कुण्डल-धरामाखण्डलाद्यैः स्तुतां,
ध्याये विन्ध्य-निवासिनीं शशि-मुखीं पार्श्वस्थ-पञ्चाननाम्॥

अर्थात् सुवर्ण-कमल के मध्य में विराजमाना, त्रि-नेत्रा, विद्युत्-जैसी कान्तिवाली, दाएँ व बाँएँ ऊपरी हाथों में क्रमशः चक्र व शङ्ख और नीचे के दाएँ व बाँएँ हाथों में वर व अभय मुद्रा धारण करनेवाली, चन्द्र-कला से शोभिता, ग्रैवेय (गले का आभूषण), अङ्गद, हार और कुण्डलों से विभूषिता, इन्द्रादि देवों द्वारा संस्तुता, विन्ध्य में निवास करनेवाली चन्द्र-मुखी देवी का, जिनके पार्श्व में भगवान् शिव विराजमान हैं, ध्यान करता हूँ।

मानस-पूजन— ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं सर्व-दुर्गति-मोचनी-श्रीवनदुर्गा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ शं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं सर्व-दुर्गति-मोचनी श्रीवनदुर्गा-प्रीतये निवेदयामि नमः।

मन्त्र— उत्तिष्ठ पुरुषि! किं स्वपिषि? भयं मे समुपस्थितं। यदि शक्यमशक्यं च, तन्मे भगवति! शमय स्वाहा। (३७ अक्षर)। **'वर्ण-माला'** में उक्त मन्त्र का **'जप'** निम्न प्रकार करे—

ॐ

१ अं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अं

२ आं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा आं

३ इं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा इं

४ ईं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ईं

५ उं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा उं

६ ऊं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऊं

७ ऋं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऋं

८ ॠं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ॠं

९ ऌं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऌं

१० ॡं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ॡं

११ एं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा एं

१२ ऐं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऐं

१३ ओं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ओं

१४ औं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा औं

१५ अं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अं

१६ अः उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अः

१७ कं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा कं

१८ खं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा खं

१९ गं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा गं

२० घं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा घं

२१ ङं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ङं

२२ चं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा चं

२३ छं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा छं

२४ जं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा जं

२५ झं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा झं

२६ ञं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ञं

२७ टं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा टं

२८ ठं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ठं

२९ डं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा डं

३० ढं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ढं

३१ णं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा णं

३२ तं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा तं

३३ थं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा थं

३४ दं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा दं

३५ धं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा धं

३६ नं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा नं

३७ पं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा पं

३८ फं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा फं

३९ बं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा बं

४० भं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा भं

४१ मं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा मं

४२ यं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा यं

४३ रं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा रं

४४ लं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा लं

४५ वं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा वं

४६ शं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा शं

४७ षं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा षं

४८ सं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा सं

४९ हं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा हं

५० ळं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ळं

क्षं

५१ ळं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ळं

५२ हं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा हं

५३ सं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा सं

५४ षं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा षं

५५ शं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा शं

५६ वं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा वं

५७ लं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा लं

५८ रं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा रं

५९ यं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा यं

६० मं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा मं

६१ भं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा भं

६२ बं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा बं

६३ फं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा फं

६४ पं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा पं

६५ नं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा नं

६६ धं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि
शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा धं

६७ दं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा दं

६८ थं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा थं

६९ तं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा तं

७० णं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा णं

७१ ढं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ढं

७२ डं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा डं

७३ ठं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ठं

७४ टं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा टं

७५ ञं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ञं

७६ झं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा झं

७७ जं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा जं

७८ छं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा छं

७९ चं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा चं

८० ङं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ङं

८१ घं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा घं

८२ गं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा गं

८३ खं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा खं

८४ कं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा कं

८५ अः उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अः

८६ अं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अं

८७ औं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा औं

८८ ओं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ओं

८९ ऐं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऐं

९० एं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा एं

९१ लॄं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा लॄं

९२ लृं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा लृं

९३ ॠं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ॠं

९४ ऋं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऋं

९५ ऊं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ऊं

९६ उं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा उं

९७ ईं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा ईं

९८ इं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा इं

९९ आं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा आं

१०० अं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अं

१०१ अं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा अं

१०२ कं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा कं

१०३ चं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा चं

१०४ टं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा टं

१०५ तं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा तं

१०६ पं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा पं

१०७ यं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा यं

१०८ शं उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं च तन्मे भगवति शमय स्वाहा शं

★ ★ ★

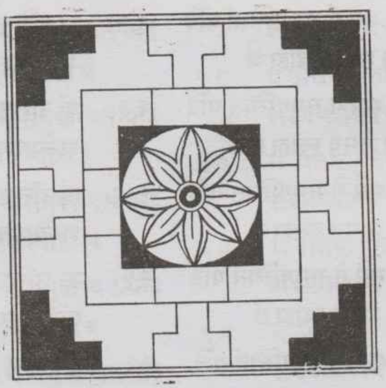

सभी प्रकार के कष्ट-निवारण, आर्थिक-सङ्कट-निवारण हेतु :

'श्रीदुर्गे स्मृतेति'-मन्त्र की साधना

शुद्ध होकर आसन पर बैठे। **आसन-शोधन, आत्म-शोधन** की प्रारम्भिक क्रियाएँ कर हाथ में जल लेकर विनियोग पढ़े—

विनियोग— ॐ अस्य श्रीदुर्गे स्मृतेति मन्त्रस्य विष्णुः ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहा-लक्ष्मी देवता, शाकम्भरी शक्तिः, वायुः कीलकं, मम सकल-संकेत-कष्ट-दारिद्र्य-परिहारार्थं जपे विनियोगः।

इसके बाद ऋष्यादि आदि न्यास करे—

ऋष्यादि-न्यास— श्रीविष्णु - ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप् - छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा - लक्ष्मी-देवतायै नमः हृदि, शाकम्भरी - शक्तये नमः नाभौ, वायु - कीलकाय नमः पादयोः, मम सकल-संकेत-कष्ट-दारिद्र्य-परिहारार्थं जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास— दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति— **अंगुष्ठाभ्यां नमः।** स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह **—तर्जनीभ्यां नमः।** दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं**—मध्यमाभ्यां नमः।** सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि**—अनामिकाभ्यां नमः।** दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः समृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या**—कनिष्ठिकाभ्यां नमः।** ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या स्वाहा**— करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।**

अङ्ग-न्यास— दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति**—हृदयाय नमः।** स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह**—शिरसे स्वाहा।** दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं**—शिखायै वषट्।** सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता यदन्ति यच्च्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि**—कवचाय हुं।** दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या**—नेत्र-त्रयाय वौषट्।** ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दु;ख-भय-हारिणि का त्वदन्या स्वाहा**—अस्त्राय फट्।**

इसके बाद हाथ जोड़कर आँखें बन्द कर **देवता का ध्यान** करे। यथा—

विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां,
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्-हस्ताभिरासेवितां।

हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखं-चापं गुणं तर्जनीम्,

विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

मानस-पूजन— ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीजगदम्बा-दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

'मानस-पूजन' कर **'श्रीदुर्गे स्मृतेति'**-मन्त्र का 'जप' करे। पूरा मन्त्र इस प्रकार है —

मन्त्र— ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा।

उक्त मन्त्र का निम्नलिखित भावार्थ के साथ **'जप'** करना चाहिए—

☐ सद्-रूपिणी **महा-सरस्वती,** ऐं-वीज-स्वरूपा ब्रह्म-विद्या मैं तुम्हारा ध्यान करता हूँ।

☐ चिद्-रूपिणी **महा-लक्ष्मी,** ह्रीं-वीज-स्वरूपा ब्रह्म-विद्या मैं तुम्हारा ध्यान करता हूँ।

☐ आनन्द-रूपिणी **महा-काली,** क्लीं-बीज-स्वरूपा ब्रह्म-विद्या मैं तुम्हारा ध्यान करता हूँ।

वर्ण-माला में जप— सुविधा की दृष्टि से 'वर्ण-माला' में उक्त पूरे मन्त्र का जप-क्रम यहाँ प्रस्तुत है। नित्य कम-से-कम एक बार निश्चित समय पर 'जप' करे। यदि प्रातः-सायं दो बार करे, तो अति उत्तम। यथा—

ॐ

१ **अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा अं**

२ **आं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा आं**

३ **इं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा इं**

४ **ईं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ईं**

५ **उं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा उं**

६ **ऊं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ऊं**

७ ॠं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ॠं

८ ॠं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ॠं

९ लृं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा लृं

१० लृं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा लृं

११ एं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा एं

१२ ऐं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ऐं

१३ ओं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ओं

१४ औं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा औं

१५ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा अं

१६ अः ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा अः

१७ कं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा कं

१८ खं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा खं

१९ गं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा गं

२० घं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा घं

२१ ङं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ङं

२२ चं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा चं

२३ छं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा छं

२४ जं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा जं

२५ झं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा झं

२६ ञं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ञं

२७ टं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा टं

२८ ठं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ठं

२९ डं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा डं

३० ढं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ढं

३१ णं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा णं

३२ तं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा तं

३३ थं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा थं

३४ दं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यद्य
दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा दं

३५ धं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा धं

३६ नं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा नं

३७ पं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा पं

३८ फं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा फं

३९ बं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा बं

४० भं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा भं

४१ मं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा मं

४२ यं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा यं

४३ रं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा रं

४४ लं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा लं

४५ वं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा वं

४६ शं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा शं

४७ षं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा षं

४८ सं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि मीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके मयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा सं

४९ हं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा हं

५० ळं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा ळं

'वर्ण-माला' द्वारा 'जप'

'वर्ण-माला' अर्थात् **'अ'** से **'क्ष'**-मातृकाओं द्वारा किसी मन्त्र का **'जप'** करना सर्व-श्रेष्ठ विधि है। **'वर्ण-माला'** से **'जप'** करने के लिए **'अ'** से **'क्ष'**-मातृकाओं को पहले सीधे फिर उल्टे क्रम से याद करना आवश्यक है। सुविधा की दृष्टि से विभिन्न मन्त्रों के पूरे **'जप'**-क्रम को **'वर्ण-माला'** में प्रकाशित किया जा रहा है। इससे कोई भी साधक इसके द्वारा **'वर्ण-माला'** में **'जप'** का अभ्यास कर सकता है। एक बार पूरी **'वर्ण-माला'** सीधे और उल्टे क्रम से याद हो जाने पर साधक किसी भी मन्त्र को उसके साथ **'जप'** सकता है। ऊपर **'श्रीदुर्गे स्मृतेति'**-मन्त्र को मातृकाओं के सीधे क्रम **'अ से क्ष'** के साथ प्रकाशित किया गया है। यह सीधा क्रम पूरा हो जाने पर उल्टे क्रम अर्थात् **'क्ष से अ'** के साथ **'श्रीदुर्गे स्मृतेति'**-मन्त्र को जपना चाहिए और अन्त में **अष्ट-वर्गों (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं,** देखिए नीचे क्रमाङ्क १०१ से १०८) द्वारा मन्त्र का **'जप'** करना चाहिए। यथा—

१०१ अं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा अं

१०२ कं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा कं

१०३ चं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा चं

१०४ टं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा टं

१०५ तं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा तं

१०६ पं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा पं

१०७ यं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा यं

१०८ शं ॐ ह्रीं दुं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह पवमान-वीतं जहि दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र-चित्ता स्वाहा शं

श्री महा-नवार्ण-मन्त्र साधन-विधि

–परम पूज्य स्वामी हिमालय अरण्य जी

गायत्री– **ॐ हूं घोर-रावायै विद्महे मुण्ड-मालिन्यै धीमहि तन्नो चामुण्डा प्रचोदयात्।।**

विनियोग– ॐ अस्य श्रीमहा-नवार्ण-मन्त्रस्य श्रीत्रिशिरात्मक ऋषिः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभः छन्दांसि, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-त्रिशक्ति-चामुण्डा देवता, ऐं बीजं,ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, मोक्षार्थे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास– श्री त्रिशिरात्मक ऋषये नमः शिरसि, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभच्छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-त्रिशक्ति-चामुण्डा-देवतायै नमः हृदिं, ऐं बीजाय नमः गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, क्लीं कीलकायः नमः नाभौ, मोक्षार्थे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास– ॐ ऐं चामुण्डायै विच्चे अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं चामुण्डायै विच्चे तर्जनीभ्यां नमः, ॐ क्लीं चामुण्डायै विच्चे मध्यमाभ्यां नमः, ॐ ऐं चामुण्डायै विच्चे अनामिकाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं चामुण्डायै विच्चे कनिष्ठाभ्यां नमः, ॐ क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

अङ्ग-न्यास– ॐ ऐं चामुण्डायै विच्चे हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं चामुण्डायै विच्चे शिरसे स्वाहा, ॐ क्लीं चामुण्डायै विच्चे शिखायै वषट्, ॐ ऐं चामुण्डायै विच्चे कवचाय हुं, ॐ ह्रीं चामुण्डायै विच्चे नेत्र-त्रयाय वौषट्, ॐ क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्।

महा-शिव-दूती-न्यास–

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं ततो देवी शरीरात् तु, विनिष्क्रान्तातित-भीषणा।
चण्डिका शक्तिरत्युग्रा, शिवा-शत-निनादिनी।।१
(ह्रां हृदयाय नमः, हृदये शिव-दूति श्री पादुकां पूजयामि नमः)

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं सा चाह धूम्र-जटिलमीशानमपराजिता।
दूतत्वं गच्छ भगवन्! पार्श्वे शुम्भ-निशुम्भयोः।।२
(ह्रीं शिरसे स्वाहा, शिरसि शिव-दूति! श्रीपादुकां पूजयामि नमः)

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च, दानवावति-गर्वितौ।
ये चान्ये दानवास्तत्र, युद्धाय समुपस्थिताः।।३
(ह्रूं शिखायै वषट्, शिखायां शिव-दूति! श्रीपादुकां पूजयामि नमः)

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां, देवाः सन्तु हविर्भुजः।
यूयं प्रयात पातालं, यदि जीवितुमिच्छथः।।४
(ह्रैं कवचाय हुं, कवचे शिव-दूति! श्रीपादुकां पूजयामि नमः)

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं बलावलेपादथ चेद्, भवन्तो युद्ध-कांक्षिणः।
तदागच्छत तृप्यन्तु, मच्छिवाः पिशितेन वः।।५
(ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्, नेत्र-त्रये शिव-दूति? श्रीपादुकां पूजयामि नमः)

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ॐ ह्रीं यतो नियुक्तो दौत्येन, तया देव्या शिव स्वयं।
शिवदूति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमभागता।।६
(ह्रः अस्त्राय फट्, अस्त्रे शिव-दूति! श्रीपादुकां पूजयामि नमः)

व्याषक-न्यास – महा-नवार्ण-मन्त्रेण ॐ ह्रीं व्यापकाय नमो नमः।

ध्यान –

ॐ अरुण-कमल-संस्था तद्-रजः-पुञ्ज-वर्णा, कर-कमल-धृतेष्टाभीति-युग्माम्बुजा च।
मणि-मुकुट-विचित्रालंकृता कल्प-जातैर्भवतु भुवन-माता सन्ततं श्रीः श्रिये नः।।१

इन्दुः-प्रख्यामिन्दु-खण्डार्ध-मौलिं शङ्खाभीष्टाभीति-हस्तां त्रि-नेत्राम्।
हेमाब्जस्थां पीत-वस्त्रां प्रसन्नां देवीं दुर्गां दिव्य-रूपां नमामि।।२

पञ्चाशद् - वर्ण - भेदैर्विहित - वदनयोः पाद - हृत् - कुक्षि - वक्षा-
देशां भास्वत् - कपर्दाकलित - शशिकलामिन्दु - कुन्दावदाताम्।
अक्ष - स्त्रक् - कुम्भ - चिन्ता - लिखित - वर - करां तीक्ष्ण - पद्मासनस्था-
मच्छाकल्पामतुच्छ - स्तन - जघन - भरां भारतीं तां नमामि।।३

ॐ नवार्णवा महा-मालां, चामुण्डां त्रिपुरात्मकाम्।
ह्रीं क्रीमैमों-बीज-रूपां, वन्दे देवीं श्रियं पराम्।।४
(ह्रीं क्रीं ऐं ॐ)

महा-नवार्ण-मन्त्र– ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महा-दुर्गे, नवाक्षरी, नव-दुर्गे, नवात्मिके, नव-चण्डी-महा-माये, महा-मोहे, महा-योग-निद्रे, जये, मधु-कैटभ-विद्राविणि, महिषासुर-मर्दिनि, धूम्रलोचन-संहन्त्रि, चण्ड-मुण्ड-विनाशिनि, रक्त-वीजान्तके, निशुम्भ-ध्वंसिनि, शुम्भ-दर्पघ्नि देवि! अष्टादश-बाहुके, कपाल-खट्वाङ्ग-शूल-खड्ग-खेटक-धारिणि, छिन्न-मस्तक-धारिणि, रुधिर-मांस-भोजिनि, समस्त-भूत-प्रेतादि-योग-ध्वंसिनि, ब्रह्मेन्द्रादि-स्तुते देवि! मां रक्ष रक्ष, मम शत्रून् नाशय नाशय ह्रीं फट् हूं फट् ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।।१८१।।

पुरश्चरण – प्रतिदिन ७०० जप कर ७०० आहुतियाँ देनी चाहिए।

❋❋❋❋❋

सर्व-कार्य-सिद्धि, आरोग्य, ऐश्वर्य-दायक :

श्रीशूलिनी सुमुखीकरण-स्तोत्र

• **परम पूज्य श्री स्वामी हिमालय अरण्य जी की कृपा से प्राप्त**

श्रीशूलिनी दुर्गा के **'सुमुखीकरण-स्तोत्र'** के नित्य पाठ से सभी बाधाएँ दूर होती हैं और अभीष्ट कार्य पूर्ण होते हैं। पहले — **'ॐ सर्व-विघ्न-कृद्भ्यः सर्व-भूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा।'** मन्त्र को तीन बार पढ़े। फिर भगवान् गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक, योगिनी को विधिवत् **'बलि'** देकर **'सुमुखीकरण-स्तोत्र'** का पाठ करे। यथा—

विनियोग— **ॐ अस्य श्रीसुमुखीकरण-स्तोत्र-मन्त्रस्य दीर्घतमा ऋषिः। ककुप् छन्दः। शूलिनी देवता। तत्-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास— **श्रीदीर्घतमा-ऋषये नमः शिरसि। ककुप्-छन्दसे नमः मुखे। शूलिनी-देवतायै नमः हृदि। तत्-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।**

ध्यान— **ॐ ध्यायेद्धेम - सहोपलासन - परे कन्या - जनालंकृते।**
पञ्च - ब्रह्म - मुखामरैर्मुनि-गणैः सेव्ये जगन्मङ्गले!।।
आसीनां स्मित-भाषणां शिव-सखीं कल्याण-वेषोज्ज्वलाम्।
भक्ताभीष्ट-वर-प्रदान-निरतां विश्वात्मिकां शूलिनीम्।।

मानस-पूजन— **ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीशूलिनी-देवता-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीशूलिनी-देवता-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीशूलिनी-देवता-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्री-शूलिनी-देवता-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीशूलिनी-देवता-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीशूलिनी-देवता-प्रीतये समर्पयामि नमः।**

मूल-पाठ

।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
ओङ्कार-पीठ-मध्यस्थे, ओषधीश-महोज्ज्वले।
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे।।१।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
श्री-पूर्णे श्री-परे श्रीशे, श्री-प्रदे श्री-विवर्धने!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे।।२।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
कामेशि काम-रसिके, कामितार्थ-फल-प्रदे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे।।३।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
माया-विलास-चतुरे, माये मायाधि-मायिके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट - सिद्धिं च देहि मे।।४।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
ॐ चिन्ता-मणेऽखिलाभीष्ट-सिद्धिदे विश्व-मङ्गले!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट - सिद्धिं च देहि मे।।५।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्व-वीजाधिपे सर्व-सिद्धिदे सर्व-रूपिणि!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट - सिद्धिं च देहि मे।।६।।

॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
ज्वलत्-तेजस्त्रयानन्त-कोटि-कोटि-समद्युते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥७॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
लसच्चन्द्रार्ध-मुकुटे, लय-जन्म-विमोचिके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥८॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
ॐ ज्वर-रोग-मुखापत्ति-भञ्जनैक-धुरन्धरे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट - सिद्धिं च देहि मे॥९॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
लक्ष्य-लक्ष्ये लयातीते, लक्ष्मी-वर्ग-धरेक्षणे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट - सिद्धिं च देहि मे॥१०॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
शूराङ्गनाऽनन्त-कोटि-व्यावृताशेष - जालके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥११॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
पिपीलिङ्गादि-दिक्-स्थान-नियताराधन-प्रिये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१२॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
निर्मले निर्गुणे नित्ये, निष्कले निरुपद्रवे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१३॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
दुर्गे दुरित-संहारे, दुष्ट-तूलान्त्य-पावके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१४॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
टमा-मये टमा-मेव्ये, टमा-वर्धन-तत्परे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१५॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
ग्रसिताशेष-भुवने, ग्रन्थि-सन्ध्यर्ण-शोभिते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे॥१६॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
हंस-तार्क्ष्य-वृषारूढैराराधित-पद-द्वये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१७॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
हुङ्कार-काल-दहन-भस्मीकृत-जगत्-त्रये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१८॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
फट्-कार-चण्ड-पवनोद्भासिताखिल - विग्रहे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥१९॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
स्वाकृते-स्वामि-पादाब्ज-भक्तानां स्वाभि-वृद्धये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२०॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
हालाहल-विषाकार-हाटकारुण-पीठके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२१॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
मूलादि-ब्रह्म-रन्ध्रान्तं, मूल-ज्वाला-स्वरूपिणि!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२२॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
वषडादि-क्रिया-षट्क महा-सिद्धि-प्रदे परे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२३॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
सर्व-विद्वन्मुखाम्भोज-दिवाकर - समुद्युते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२४॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
नाना-महीप-हृदय-नवनीत-द्रवानले!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२५॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
अशेष-ज्वर-सर्पादि-चन्द्रोपल-शशि-द्युते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२६॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
महा-पापौघ-कलुष-क्षालनामृत- वाहिनि!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२७॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
अशेष - काय-सम्भूत - रोग-तूलाननाऽऽकृते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२८॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
औषधि-कोटि-दावाग्नि-शान्ति-सम्पूर्ण-वर्षिणि!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥२९॥
॥ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं॥
तिमिराराति-संहार-दिवानाथ-शताकृते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ॥३०॥

।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सुधाग्र-जिह्वाऽऽवर्त्यग्र-सुदीपे विश्व-वाक्-प्रदे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३१।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
अरात्यवनि-पानीक-तूलोच्चाट-महाऽनिले!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३२।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
समस्त-मृत्यु-तुहिन-सहस्र-किरणोपमे!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३३।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
जगत्-सौभाग्य-फलदे, जङ्गम- स्थावरात्मिके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३४।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सुभक्त-हृदयानन्द-सुख- सम्वित्-स्वरूपिणी!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३५।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
धन-धान्याब्धि-सम्वृद्धि- चन्द्र-कोटि-समोदये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३६।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्व-जीवात्म-धेन्वग्र - समुच्यानिल-वत्सके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३७।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
तेजः-कण-महावीर-समावीतान्त्य-पावके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३८।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
नाना-चराचराविष्ट-दाहोपशमनामृते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।३९।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्व-कल्याण-कल्याणे-सर्व-सिद्धि-विवर्धने!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४०।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्वेशि सर्व-हृदये, सर्वाकारे निराकृते!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४१।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
अनन्तानन्त-जनके, अभूते आत्म-नायिके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४२।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
रहस्याति-रहस्यात्म-रहस्यागम-पालके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४३।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
आचार-करणातीते, आचार्य-करुणा-मये!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४४।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्व-रक्षा-करे भद्रे! सर्व-रक्षा-करेऽतुले!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४५।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
सर्व-लोके सर्व-देशे, सर्व-काले सताम्बिके!
ऐश्वर्यमायुरारोग्यमिष्ट-सिद्धिं च देहि मे ।।४६।।
।।ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्ष्म्रयौं दुं।।
आद्येऽनादि-कला-विशेष-विवृतेऽनन्ताखिलात्माकृते!
आचार्याङ्घ्रि-सरोज-युग्म-शिरसामापूरिताशाऽमृते!
संसारार्णव-तारणोद्यत-कृपा-सम्पूर्ण-दृष्ट्यानिशम्।
दुर्गे शूलिनि शङ्करि! स्नपय मां त्वं भाव-संसिद्धये।।४७।।

।।फल-श्रुति।।
इति परम-शिवाया सुमुखी-महा-शक्त्याः,
स्तुतिमतिशय-सौख्य-प्राप्तये यो नु वाऽत्र।
स्मरति जपति विद्वत्-सम्वृतोऽशेष-लोकैः,
निखिल-सुखमवाप्य श्रीशिवाकारमेति।।

।।श्रीआकाश-भैरव-कल्पे शूलिनी-दुर्गा सुमुखीकरण-स्तोत्रम्।।

'श्रीदुर्गा-हवन' में सात आहुतियों का निषेध

❖ 'कुल-वाणी-रत्न' पं० रमेशचन्द्र शर्मा, मदनगञ्ज, किशनगढ़ (राजस्थान)

'नवरात्र' में घर-घर में **'सप्तशती-पाठ'** व **'हवन'** होता है। **'हवन'** के सम्बन्ध में सूचनीय है कि **'सप्तशती'** से **'हवन'** करते समय **'कवच-मन्त्र'** एवं देवी के अस्त्र-शस्त्र-विषयक मन्त्रों से **'हवन'** नहीं किया जाता है, उसके स्थान पर **'क्रीं महा-काल्यै स्वाहा'** या **'श्रीं महा-लक्ष्म्यै स्वाहा'** कहकर **'हवन'** किया जाता है। यथा—

☐ **'देवी-कवच'** के मन्त्रों से **'हवन'** नहीं किया जाता है।

☐ **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के प्रथम अध्याय के निम्न-लिखित मन्त्र से **'आहुति'** नहीं दी जाती है। इसके स्थान में **'क्रीं महा-काल्यै स्वाहा'** कहकर **'आहुति'** दे सकते हैं। अथवा **'नवार्ण मन्त्र'** से **'आहुति'** दे सकते हैं। मन्त्र इस प्रकार है—

खड्गिनी शूलिनी घोरा, गदिनी चक्रिणी तथा। शङ्खिनी चापिनी वाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।।

☐ **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'**, चतुर्थ अध्याय के निम्न-लिखित चार मन्त्रों से भी **'हवन'** नहीं करना चाहिए चारों मन्त्र इस प्रकार हैं —

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाम्बिके! घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च।।२४
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च, चण्डिके! रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्म - शूलस्य, उत्तरस्यां तथेश्वरि!।।२५
सौम्यानि यानि रूपाणि, त्रैलोक्ये विचरन्ति ते। यानि चात्यर्थ-घोराणि, तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्।।२६
खड्ग - शूल-गदादीनि, यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके! कर-पल्लव-सङ्गीनि, तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।।२७

(उक्त श्लोकों की संख्या **'विशुद्ध चण्डी'** (श्रीदुर्गा-सप्तशती) के अनुसार है। ये श्लोक **'रक्षा'** - परक हैं। इनका नित्य स्मरण करने से सर्व प्रकार की रक्षा होती है। सङ्कट की अवस्था में मात्र इन चार श्लोकों का पाठ करने से सभी आपदाएँ नष्ट होती हैं।— सम्पादक)

आहुतियाँ देते समय उक्त मन्त्रों के स्थान में **'श्रीं महा-लक्ष्म्यै स्वाहा'** अथवा **'नवार्ण मन्त्र'** से **'हवन'** करना चाहिए।

☐ अन्य दो मन्त्रों से **आहुतियाँ** देने के सम्बन्ध में मतभेद है क्योंकि विशेष प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अतः अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार अथवा अपने विवेक से **'आहुति'** दे। ये दो मन्त्र हैं— **'श्रीदुर्गा-सप्तशती'** के पाँचवें अध्याय में **दूत उवाच।।१०५** और **दूत उवाच ।।१२२** (देखिए, **'विशुद्ध चण्डी'** (श्रीदुर्गा-सप्तशती), पृष्ठ ६०,६२)। इन दो **'मन्त्रों'** के द्वारा 'आहुति' देने से **'हवन'** का फल **दूत (दैत्य)** को जाता है। **'सप्त-शती'** में महिषासुर ने **'देवी-याग'** में अपना भाग माँगा है, अन्य ने नहीं। अतः **'दूत उवाच'** की 'आहुति' के समय **'दूत उवाच'** मनसा पढ़े और **'नवार्ण मन्त्र'** या **'ऐं महा-सरस्वत्यै स्वाहा'** से 'आहुति' दे।

★ ★ ★

संक्षिप्त श्रीदुर्गा-पूजाङ्ग होम-विधि

◆ अपने दाहिने एक हाथ लम्बी-चौड़ी तथा एक अङ्गुल ऊँची बालुका की **'वेदी'** बनाए। **'वेदी'** को **'मूल-मन्त्र'** पढ़कर देखे। **'फट्'**-मन्त्र पढ़कर **'पञ्च-पात्र'** के पवित्र जल से **'वेदी'** का **'प्रोक्षण'** करे। दुबारा **'फट्'**-मन्त्र पढ़कर **'कुश'** के अग्र भाग से **'वेदी'** का **'ताड़न'** करे। **'हुँ'**-मन्त्र पढ़कर एक मूठी जल द्वारा **'वेदी'** का 'सिञ्चन' करे।

◆ फिर **'अग्नि'** लाए। **'अग्नि'** का एक अङ्गार-**'मूलं हूं फट् क्रव्यादेभ्य:'**-यह मन्त्र पढ़कर **'नैर्ऋत्य कोण'** में **क्रव्याद** का अंश समझ कर गिरा दे। तब **'अग्नि'** को **'मूल-मन्त्र'** पढ़ते हुए **'वेदी'** पर रखे और **'समिधा'** रखकर अग्नि प्रज्वलित कर यह मन्त्र पढ़े—

ॐ अग्नि प्रज्वलितं वन्दे, जातवेदं हुताशनम् ।
सुवर्ण-वर्णमनलं, समीद्धः सर्वतो मुखम् ।।

◆ इसके बाद दाहिने हाथ में जल लेकर **'सङ्कल्प'** पढ़े। **'सङ्कल्प'** के अन्त में **'श्रीदुर्गा- पूजाङ्ग होमं करिष्ये'** कहकर हाथ का जल छोड़े।

◆ अब **'मूल-मन्त्र'** से **'प्राणायाम'** कर **'विनियोग-ऋष्यादि न्यास'** करे और **'भगवती दुर्गा का ध्यान'** करे।

◆ फिर **'मूल-मन्त्र'** पढ़कर **'अग्नि'** के ऊपर जल छिड़के। **'अग्नि'** का पञ्चोपचारों से पूजन करे तथा **भगवती दुर्गा का अग्नि-रूप में ध्यान** कर उनका पञ्चोपचारों से पूजन करे।

◆ अब **'अग्नि'** में **'घृत'** या **'पायस'** की आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से प्रदान करे—**ॐ स्रूं हिरण्यायै स्वाहा। ॐ ष्रूं गगनायै स्वाहा। ॐ श्रूं रक्तायै स्वाहा। ॐ व्रूं कृष्णायै स्वाहा। ॐ ल्यूं सुप्रभायै स्वाहा। ॐ रग्रूं बहु-रूपायै स्वाहा। ॐ य्रूं अति-रक्तायै स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा। ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा। ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।**

◆ फिर-**'मूलं श्रीदुर्गायै स्वाहा दुर्गाया इदं'**-यह मन्त्र तीन बार पढ़कर तीन आहुतियाँ दे।

◆ इसके बाद-**'१.ॐ गुरवे स्वाहा'**, २. **'ॐ परम-गुरवे स्वाहा'**, ३. **'ॐ परापर-गुरवे स्वाहा'**, ४. **'ॐ परमेष्ठि-गुरवे स्वाहा'**—इन चार मन्त्रों से चारों गुरुओं के लिए और **१.'ॐ रत्यै स्वाहा'**, २. **'ॐ प्रीत्यै स्वाहा'**, ३. **'ॐ मनोभवायै स्वाहा'**-इन तीन मन्त्रों से तीन शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे।

◆ फिर इष्ट-देवता के षडङ्गों के लिए छः आहुतियाँ दे-**ह्रां हृच्छक्त्यै स्वाहा। ह्रीं शिरः-शक्त्यै स्वाहा। ह्रूं शिखा-शक्त्यै स्वाहा। ह्रैं कवच-शक्त्यै स्वाहा। ह्रौं नेत्र-शक्त्यै स्वाहा। ह्रः अस्त्र-शक्त्यै स्वाहा।**

◆ इसके बाद कामदेवों को आहुतियाँ प्रदान करे। यथा—**'ॐ मनोभवाय स्वाहा, ॐ मकर-ध्वजाय स्वाहा, ॐ कन्दर्पाय स्वाहा, ॐ मन्मथाय स्वाहा, ॐ कामदेवाय स्वाहा।'**

◆ तब काम-देवों की शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे। यथा—**ॐ द्राविण्यै स्वाहा, ॐ क्षोभिण्यै स्वाहा, ॐ आकर्षिण्यै स्वाहा, ॐ वशीकरिण्यै स्वाहा, ॐ सम्मोहिन्यै स्वाहा।'**

◆ फिर आठ शक्तियों को आहुतियाँ प्रदान करे-**१.ॐ सुभगायै स्वाहा, २. ॐ भगायै स्वाहा, ३. ॐ भग-सर्पिण्यै स्वाहा, ४. ॐ भग-मालायै स्वाहा, ५. ॐ अनङ्गायै स्वाहा, ६. ॐ अनङ्ग-कुसुमायै स्वाहा, ७. ॐ अनङ्ग-मेखलायै स्वाहा, ८. ॐ अनङ्ग-मदनायै स्वाहा।**

- तब अष्ट-मातृकाओं को आहुतियाँ दे-१. ॐ ब्राह्म्यै स्वाहा, २. ॐ माहेश्वर्यै स्वाहा, ३. ॐ कौमार्यै स्वाहा, ४. ॐ वैष्णव्यै स्वाहा, ५. ॐ वाराह्यै स्वाहा, ६. ॐ इन्द्राण्यै स्वाहा,७. ॐ चामुण्डायै स्वाहा, ८. ॐ महा-लक्ष्म्यै स्वाहा।
- आठ भैरवों को आहुतियाँ दे-१. ॐ असिताङ्ग-भैरवाय स्वाहा, २. ॐ रुरु-भैरवाय स्वाहा, ३. ॐ चण्ड-भैरवाय स्वाहा, ४. क्रोध-भैरवाय स्वाहा, ५. ॐ उन्मत्त-भैरवाय स्वाहा, ६. ॐ कपालि-भैरवाय स्वाहा, ७. ॐ भीषण-भैरवाय स्वाहा, ८. ॐ संहार-भैरवाय स्वाहा।
- आठ पीठों को आहुतियाँ दे-१. ॐ काम-रूप-पीठाय स्वाहा, २. ॐ मलय-पीठाय स्वाहा, ३. ॐ कुल-नाग पीठाय स्वाहा, ४. ॐ कुलान्त-पीठाय स्वाहा, ५. ॐ चौहार-पीठाय स्वाहा, ६. ॐ जालन्धर-पीठाय स्वाहा, ७. ॐ उड्डीयान-पीठाय स्वाहा, ८. ॐ देवी-कोट-पीठाय स्वाहा।
- दस भैरवों को आहुतियाँ दे-१. ॐ हेतुकाय स्वाहा, २. ॐ त्रिपुरान्तकाय स्वाहा, ३. ॐ वेतालाय स्वाहा, ४. ॐ अग्नि-जिह्वाय स्वाहा, ५. ॐ कालान्तकाय स्वाहा, ६. ॐ कपालाय स्वाहा, ७. ॐ एक-पादाय स्वाहा, ८. ॐ भीम-रूपाय स्वाहा, ९. ॐ मलयाय स्वाहा, १०. ॐ हाटकेश्वराय स्वाहा।
- दस दिक्-पालों को आहुतियाँ दे - १. ॐ इन्द्राय स्वाहा, २. ॐ अग्नये स्वाहा, ३. ॐ यमाय स्वाहा, ४. ॐ निर्ऋताय स्वाहा, ५. ॐ वरुणाय स्वाहा, ६.ॐ वायवे स्वाहा, ७. ॐ कुबेराय स्वाहा, ८.ॐ ईशानाय स्वाहा, ९. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, १०. ॐ अनन्ताय स्वाहा।
- दिक्-पालों के आयुधों को आहुतियाँ दे-१. ॐ वज्राय स्वाहा, २. ॐ शक्त्यै स्वाहा, ३. ॐ दण्डाय स्वाहा, ४. ॐ खड्गाय स्वाहा, ५. ॐ पाशाय स्वाहा, ६. ॐ अंकुशाय स्वाहा, ७. ॐ गदायै स्वाहा, ८. त्रिशूलाय स्वाहा, ९. ॐ पद्माय स्वाहा, १०. ॐ चक्राय स्वाहा।
- बलि-देवताओं को आहुतियाँ दे-ॐ वटुकाय स्वाहा, ॐ योगिन्यै स्वाहा, ॐ क्षेत्रपालाय स्वाहा, ॐ गणेशाय स्वाहा, ॐ वसवे स्वाहा, ॐ सूर्याय स्वाहा, ॐ शिवाय स्वाहा, ॐ भूताय स्वाहा।
- अन्त में **'मूल-मन्त्र'** के अन्त में **'स्वाहा'** लगाकर २५ आहुतियाँ प्रदान कर चार व्याहृतियों की आहुतियाँ दे—ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहा, ॐ स्वः स्वाहा, ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।
- फिर २५ बार **'मूल-मन्त्र'** का **'जप'** करे। **'जप'** का फल देवता को अर्पित कर देवता के हृदय में पुनः आ विराजने की भावना कर निम्न मन्त्र से **'भस्म'** का **'वन्दन'** करे-

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने कश्यपस्य त्र्यायुषं ।
यद्-देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषं ।।

तब निम्न मन्त्र पढ़कर **'अग्नि'** का विसर्जन करे-

ॐ भो भो वह्ने महा-शक्ते ! सर्व-काम-प्रसाधक !
कर्मान्तरेऽपि सम्प्राप्ते, सान्निध्यं कुरु सादरम् ।।

* * *

श्री बृहत् महा-सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्रम्

• 'कुल-वाणी-रत्न' पं० ओङ्कारनाथ शुक्ल, जैतहरी, शहडोल (म.प्र.)

[यह 'कुञ्जिका-स्तोत्र' मुझे 'अमरकण्टक' में एक अवधूत साधु की कृपा से प्राप्त हुआ। मैं वहाँ 'सप्तशती-पाठ' करता था। उन्होंने मेरे पास आकर मुझे इस स्तोत्र की प्रतिलिपि करने की अनुमति दी थी। अस्तु, जन-हिताय प्रस्तुत है। कोई भी दीक्षा-प्राप्त व्यक्ति इसका पाठ करने का अधिकारी है। निरन्तर 'सप्तशती' का पाठ करनेवाला माँ जगज्जननी का भक्त सप्तशती के आरम्भ और अन्त में इसका पाठ अवश्य करे। 'कुल्लुका महा-मन्त्र' के सम्बन्ध में अवधूत संन्यासी जी ने यह सङ्केत मात्र दिया था— 'काली-कूर्च-बधू-माया-ताड़क-बीज-समन्विता' अर्थात् 'क्रीं हूं स्त्रीं ह्रीं फट्'— इन ५ बीजों से जप के पूर्व कर - न्यास व हृदय - न्यास करने चाहिए। — प्रस्तुत - कर्त्ता]

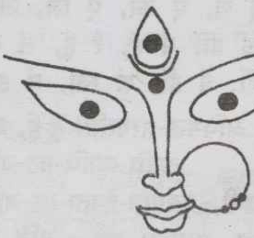

नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै, नियताः प्रणताः स्म ताम्॥

॥ध्यानम्॥

ॐ विद्युद्-दाम-सम-प्रभां मृग-पति-स्कन्ध-स्थितां भीषणाम्।
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्-हस्ताभिरासेविताम्॥
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम्।
विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

॥शिव उवाच॥

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, कुञ्जिका - स्तोत्रमुत्तमम्। येन मन्त्र - प्रभावेण, चण्डी-जापः शुभो भवेत्॥१॥
न कवचं नार्गला तु, कीलकं न रहस्यकम्। न सूक्तं नापि ध्यानं च, न न्यासं न च वाऽर्चनम्॥२॥
कुञ्जिका-पाठ-मात्रेण, दुर्गा-पाठ-फलं लभेत्। अति गुह्य-तरं देवि! देवानामपि दुर्लभम्॥३॥
गोपनीयं प्रयत्नेन, स्व-योनिरिव पार्वति! मारणं मोहनं वश्यं, स्तम्भनोच्चाटनादिकम्।
पाठ-मात्रेण संसिद्धयेत्, कुञ्जिका-स्तोत्रमुत्तमम्॥४॥

ॐ श्रूं श्रूं श्रूं श्रं फट् ऐं ह्रीं क्लीं ज्वलोज्ज्वल, प्रज्वल, ह्रीं ह्रीं क्लीं स्रावय स्रावय।
वशिष्ठ-गौतम-विश्वामित्र-दक्ष-प्रजापति-ब्रह्मा ऋषयः। सर्वैश्वर्य-कारिणी श्री दुर्गा देवता।

गायत्र्या शापानुग्रह कुरु-कुरु हूं फट्।

ॐ ह्रीं श्रीं हूं दुर्गायै सर्वैश्वर्य - कारिण्यै, ब्रह्म-शाप-विमुक्ता भव।।

ॐ क्लीं ह्रीं ॐ नमः शिवायै आनन्द-कवच-रूपिण्यै ब्रह्म-शाप-विमुक्ता भव।

ॐ काल्यै काली ह्रीं फट् स्वाहायै, ऋग्वेद- रूपिण्यै ब्रह्म-शाप-विमुक्ता भव।।

शापं नाशय नाशय, हूं फट्।। श्रीं श्रीं श्रीं जूं सः आदाय स्वाहा।।

ॐ श्लों हुं क्लीं ग्लौं जूं सः ज्वलोज्वल मन्त्र प्रबल हं सं लं क्षं स्वाहा।

नमस्ते रुद्र-रूपायै, नमस्ते मधु-मर्दनी नमस्ते, कैटभारी च नमस्ते महिषार्दिनी।। नमस्ते शुम्भ-हन्त्री च, निशुम्भासुर-घातिनी। नमस्ते जाग्रते देवि! जप-सिद्धिं कुरुष्व मे।। ॐ ऐङ्कारी सृष्टि-रूपायै, ह्रीङ्कारी प्रति-पालिका।। क्लीङ्कारी काल-रूपिण्यै, बीज-रूपे! नमोऽस्तु ते। चामुण्डा चण्ड-घाती च, यैङ्कारी वर-दायिनी। विच्चे त्व-भयदा नित्यं, नमस्ते मन्त्र - रूपिणी।। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः-सोऽहं अं आं ब्रह्म-ग्रन्थि भेदय भेदय। इं ईं विष्णु-ग्रन्थि भेदय भेदय। उं ऊं रुद्र-ग्रन्थि भेदय भेदय। अं क्रीं, आं क्रीं, इं क्रीं, इं हूं, उं हूं, ऊं ह्रीं, ऋं ह्रीं, ॠं दं, लृं क्लिं, लॄं पें, एं कां, ऐं लिं, ओं कें, औं क्रीं, अं क्रीं, अः क्रीं, अं हूं, आं हूं, इं ह्रीं, ईं ह्रीं, उं स्वां, ऊं हां, यं हूं, रं हूं, लं मं, वं हां, शं कां, षं लं, सं प्रं, हं सीं, ळं दं, क्षं प्रं, यं सीं, रं दं, लं ह्रीं, वं ह्रीं, शं स्वां, षं हां, सं हं लं क्षं।।

महा-काल-भैरवी महा-काल-रूपिणी क्रीं अनिरुद्ध-सरस्वति! हूं हूं, ब्रह्म-गृह-बन्धिनी, विष्णु-ग्रह-बन्धिनी, रुद्र-ग्रह-बन्धिनी, गोचर-ग्रह-बन्धिनी, आधि-व्याधि-ग्रह-बन्धिनी, सर्व-दुष्ट-ग्रह-बन्धिनी, सर्व-दानव-ग्रह-बन्धिनी, सर्व-देवता-ग्रह-बन्धिनी, सर्वगोत्र-देवता-ग्रह-बन्धिननी, सर्व-ग्रहोपग्रह-बन्धिनी! ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ क्रीं हूं ह्रीं मम पुत्रान् रक्ष रक्ष, ममोपरि दुष्ट - बुद्धिं दुष्ट - प्रयोगान् कुर्वन्ति, कारयन्ति, करिष्यन्ति, तान् हन। मम मन्त्र - सिद्धिं कुरु कुरु। मम दुष्टं विदारय विदारय। दारिद्र्यं हन हन। पापं मथ मथ। आरोग्यं कुरु कुरु। आत्म-तत्त्वं देहि देहि। हंसः सोहम्। क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।।

नव - कोटि - स्वरूपे, आद्ये, आदि - आद्ये अनिरुद्ध-सरस्वति! स्वात्म-चैतन्यं देहि देहि। मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ। मम मनोरथं कुरु कुरु स्वाहा।। धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नि! वां वीं वागीश्वरि तथा।। क्रां क्रीं क्रूं कुब्जिका - देवि! शां शीं शूं मे शुभं कुरु।।

हूं हूं हुङ्कार-रूपायै, जां जीं जूं भाल-नादिनीं। भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवीं भद्रे भवान्यै ते नमो नमः। ॐ अं कं चं टं तं पं सां विदुरां विदुरां, विमर्दय विमर्दय ह्रीं क्षां क्षीं क्षीं जीवय जीवय, त्रोटय त्रोटय, जम्भय जम्भय, दीपय दीपय, मोचय मोचय, हूं फट्, जां वौषट्, ऐं ह्रीं क्लीं रञ्जय रञ्जय, सञ्जय सञ्जय, गुञ्जय गुञ्जय, बन्धय बन्धय। भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी - भद्रे! संकुच संकुच, सञ्चल सञ्चल, त्रोटय त्रोटय, म्लीं स्वाहा।। पां पीं पूं पार्वती पूर्णा, खां खीं खूं खेचरी तथा। म्लां म्लीं म्लूं मूल - विस्तीर्णा-कुब्जिकायै नमो नमः।। सां सीं सूं सप्तसती - देव्या मन्त्र-सिद्धिं कुरुष्व मे।।

इदं तु कुब्जिका-स्तोत्रं, मन्त्र-जागृति-हेतवे।। अभक्ते न च दातव्यं, गोपितं रक्ष पार्वति! विहीना कुब्जिका-देव्या, यस्तु सप्तशतीं पठेत्। न तस्य जायते सिद्धिः, ह्यरण्ये रुदतिं यथा।।

।।इति श्रीरुद्र-यामले, गौरी-तन्त्रे, काली-तन्त्रे शिव-पार्वती-सम्वादे, कुब्जिका-स्तोत्रम्। ॐ ॐ तत्सत् श्रीजगज्जननी-चरण- कमलार्पणमस्तु।

सप्तशती-पाठ की दो महत्व-पूर्ण विधियाँ

पहली विधि

पहले षोडशोपचार से भगवती चण्डिका का पूजन करे। फिर पञ्च-तत्त्वों से देवी की पूजा 'ध्यान' करे। यथा—

ॐ या चण्डी मधु-कैटभादि-दैत्य-दलनी या माहिषोन्मादिनी।

या धूम्रेक्षण-चण्ड-मुण्ड-मथनी या रक्त - बीजाशनी।।

शक्तिः शुम्भ-निशुम्भ-दैत्य-दलनी या स्वर्ग - लक्ष्मीः परा।

सा देवी नव-कोटि-मूर्ति-सहिता मां पातु विश्वेश्वरी।।

इस प्रकार **'ध्यान'** कर पहले **'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ह्लीं ई क्लीं नमः'** इस नवाक्षर महा-मन्त्र का एक सौ बार जप करे।

'सप्तशती-पाठ' के अन्त में इसी महा-मन्त्र का विपरीत क्रम से (**नमः क्लीं ई ह्लीं क्लीं ह्रीं ऐं ॐ**) जप करे।

सप्तशती-पाठ के पहले यह **विनियोग** पढ़े—

ॐ सप्तशती - महा - स्तोत्रस्य मेधातिथिः ऋषिः गायत्र्यनुष्टुप्-बृहती-पंक्ति-त्रिष्टुभ्-जगत्युष्णिङ्-महत्यश्छन्दांसि। महा-काली-महा-लक्ष्मी-महा-सरस्वती देवताः। ऐं ह्रीं क्लीं बीजं। क्रों शक्तिः। ममात्मक-काम-सिद्धयर्थे चण्डी-पाठे विनियोगः।।

'विनियोग' पढ़कर **'ऋष्यादि-न्यास'** करे। यथा— ***मेधातिथि ऋषये नमः शिरसि। गायत्र्यनुष्टुप् - बृहती - पंक्ति - त्रिष्टुभ् - जगत्युष्णिङ् - महत्यश्छन्दांसि नमः मुखे। ऐं ह्रीं क्लीं बीजाय नमः गुह्ये। क्रों शक्त्ये नमः नाभौ। ममात्मक-काम-सिद्धयर्थं चण्डी-पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।***

प्रणव से **'षडङ्ग-न्यास'** करे। यथा— ***ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ अनामाभ्यां हुँ, ॐ कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्।***

तब **'सावर्णिः सूर्य-तनयः'** से **'सावर्णिर्भविता मनुः'** — तक पाठ करे। इसमें कुछ भी न्यूनाधिक न करे।

इस प्रकार **'सप्त-शती'** का पाठ करने से सब प्रकार के रोगों, दुःखों, पीड़ाओं आदि से छुटकारा मिलता है और पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है।

दूसरी विधि

'निगम-तत्त्व-सार' में **'सप्तशती-पाठ'** की दुर्लभ तान्त्रिक विधि दी गई है, जो इस प्रकार है—

पहले **'सप्त-शती' की पाठ्य-पुस्तक का शोधन** करे। फिर ताम्र-पात्र में आदि में त्रिकोण लिखकर चारों दिशाओं में **मातृका-वर्णों** को लिखे। **पञ्च-गव्य** से सभी पूजा-सामग्री का प्रोक्षण करे। पुस्तक

का सात बार प्रोक्षण करे। तदनन्तर स्वस्त्ययन पढ़कर **सङ्कल्प** करे। इसके बाद पुस्तक के ऊपर भगवती का पूजन करे। अङ्ग-न्यासादि करके एकाग्र-चित्त से ध्यान करे—

सिंह-स्कन्धाधिरूढां तु, नानाऽलङ्कार-भूषिताम्,
कुलेश्वरीं महा-भागां, सदा स्मेर-मुखीं शुभाम्।
चतुर्वर्ग-प्रदां देवीं, रक्षा - कर्त्रीं त्रिलोचनाम्,
चतुर्भुजां महा - देवीं, नाग - यज्ञोपवीतिनीम्।
रक्त-वस्त्र-परीधानां, बालार्क - सदृशीं तनुम्,
शौनकाद्यैर्मुनि - गणैः, सेवितां चण्ड-मर्दिनीम्।।

इसके बाद **'ॐ ॐ ॐ हूँ हूँ हूँ महा-चण्डी! सिद्धिं देहि स्वाहा'** इस मन्त्र से उपचारों से पूजन करे। तब **'सप्त-शती' का पाठ** करे। पाठ के अन्त में मातृका-वर्णों से पुटित कर उक्त मन्त्र का पुनः १०८ बार जप करे। जप के अन्त में पुस्तक का **'पञ्च-गव्य'** से पुनः प्रोक्षण भी करे। फिर जप-समर्पण कर **'देवी-सूक्त'** का पुनः पाठ करे। 'वीर-भाव' के उपासकों को पञ्च-तत्त्वों का भोग देकर **'सप्तशती-पाठ'** करना चाहिए। इस क्रम से पाठ करने से विशेष रूप से सिद्धि प्राप्त होती है।

★ ★ ★

जो अनात्म-शक्तियाँ हमें इस संसार में जन्म-मरण के चक्कर में डालने का प्रयत्न करती रहती हैं, उन पर किस प्रकार विजय प्राप्त की जाय, इसका क्रम 'सप्तशती' द्वारा पूर्णतः स्पष्ट है।

सप्तशती-कथा की रहस्य-वादिता ज्ञानी एवं विवेकी पाठक के समक्ष जैसे-जैसे खुलती जाती है, वैसे ही वैसे साधक के योग द्वारा आन्तरिक रहस्य का भेद भी खुलता जाता है।

आन्तरिक विकास और आध्यात्मिक साधना की विभिन्न अवस्थाओं का लाक्षणिक एवं बहुत ही सुन्दर रीति से दिव्य माता परा-शक्ति के विभिन्न स्वरूपों और अवतारों का परम पवित्र लीला द्वारा निरूपण किया गया है।

— श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी

'सप्तशती' के सात सौ मन्त्र, जो प्रत्यक्ष रूप में श्लोक, अर्ध-श्लोक तथा श्लोक के चतुर्थांश आदि रूप में दिखाई देते हैं, विविध देवताओं के मन्त्र और बीजों तथा कूटाक्षरों से गर्भित हैं। 'सप्तशती' के प्रत्येक अध्याय में सविशेष और निर्विशेष सभी मन्त्र गुप्त रीति से निहित हैं।

— 'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री

कालिका-पुराणानुसार

'नवरात्र'-पूजा-पद्धति

दैनिक-पूजा-क्रम

नित्य-क्रिया करने के बाद हाथ में कुश ले **'आचमन'** करे। फिर **'स्वस्ति'-वाचन** कर **'सूक्त'-पाठ** कर कुश-तिल-जल लेकर **'सङ्कल्प'** करे—

अद्येत्यादि नवम्यां तिथावारभ्य महा-नवमीं यावत् (षष्ठ्यां, प्रतिपदि तिथावारभ्य वा) प्रत्यहं अमुक-गोत्रः श्रीअमुक-देव-शर्मा श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः वार्षिक शरत्कालीन श्रीदुर्गा-महा-पूजा-कर्माहं करिष्ये।

फिर **'चण्डी'-पाठ का सङ्कल्प** कर पञ्च-गव्य-शोधन- पूर्वक **'सामान्यार्घ्य'-स्थापन, द्वार-पूजा, विघ्नोत्सारण, माष-भक्त-बलि, आसन-शुद्धि, भूत-शुद्धि, मातृका-न्यास, प्राणायामादि** कर **'भगवती दुर्गा का ध्यान'** करे। मानसोपचारों से उनकी **पूजा** कर **'विशेषार्घ्य'** स्थापित करे। तब मण्डल में **पीठ-पूजा** कर **'घट'**-स्थापित करे। फिर **गणेशादि पञ्च-देवों की पूजा** कर पुनः **ध्यान** कर आवाहन-पूर्वक **षोडशोपचारों से देवी की पूजा** करे। तब यथा-शक्ति मूल-मन्त्र का **'जप'** कर, 'जप'-फल समर्पित कर **'नीराजन'** करे। प्रति-दिन इसी क्रम से पूजा करे।

* * *

बोधन-विधान (प्रातः-काल षष्ठी या नवमी में)

नित्य कर्म से निवृत्त होकर साधक शुद्धासन पर बैठकर आचमन-पूर्वक **'ॐ तत् सत्'** कह कर स्व-शाखोक्त **'स्वस्ति-वाचन'** करे। फिर—

'ॐ सूर्यः सोमो यमः कालः, सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा।
पवनो दिक् - पतिर्भूमिराकाशं खचरामराः।
ब्राह्मं शासनमास्थाय, कल्पध्वमिह सन्निधिम्॥

उक्त पढ़कर **साक्षी देवताओं का अभिवादन** करे।

तब यह पढ़कर **भगवान् विष्णु का स्मरण** करे— **'ॐ तद् विष्णोः परमं पदं, सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्। ॐ विष्णुः, ॐ विष्णुः, ॐ विष्णुः। ॐ पुण्डरीकाक्षः।'**

पुनः कुश-तिल-जल-युक्त ताम्र-पात्र लेकर **'सङ्कल्प'** करे। यथा—

ॐ विष्णुरोम् तत्सदद्याश्विने मासि शुक्ले पक्षे षष्ठ्यां तिथौ अमुक-गोत्रः श्रीअमुक-देव-शर्मा श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः वार्षिक-शरत्कालीन श्रीभगवती-दुर्गा-महा-पूजाङ्ग-भूत-बिल्व-वृक्षाधिकरणक

श्रीभगवती-दुर्गा-देवी-बोधन-कर्माहं करिष्ये (अमुक-गोत्रस्य करिष्यामि वा)

इस प्रकार **'सङ्कल्प'** कर उक्त जल को **'ईशान'**-कोण में छोड़कर स्व-शाखोक्त **'सूक्त' का पाठ** करे। तब **'सामान्यार्घ्य'-पात्र** स्थापित कर **भूत-शुद्धि, मातृका-न्यासादि** कर स्व-शाखोक्त विधि से **'घट की स्थापना'** करे। फिर **गणेशादि पञ्च-देवों, आदित्यादि नव-ग्रहों, इन्द्रादि दश दिक्पालों** और **मत्स्यादि दशावतारों** की पूजा **'घट'** में करे। तब **प्राणायाम, ऋष्यादि-न्यास** कर **'ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः'** इत्यादि से **'कराङ्ग'-न्यास** कर देवी का **'ध्यान'** करे। यथा—

ॐ जटा - जूट-समायुक्तामर्द्धेन्दु-कृत-शेखरां।
लोचन - त्रय - संयुक्तां, पूर्णेन्दु-सदृशाननां।।
तप्त - काञ्चन-वर्णाभां, सुप्रतिष्ठां सुलोचनां।
नव - यौवन - सम्पन्नां, सर्वाभरण-भूषितां।।
सुचारु - दशनां तीक्ष्णां, पीनोन्नत-पयोधरां।
त्रिभङ्ग - स्थान-संस्थानां, महिषासुर-मर्दिनीं।।
मृणालायत - संस्पर्श - दश-बाहु-समन्वितां।
त्रिशूलं दक्षिणे ध्येयं, खड्गं चक्रं क्रमादधः।।
तीक्ष्ण-वाणं तथा शक्तिं, दक्षिणे सन्निवेशयेत्।
खेटकं पूर्ण - चापं च, पाशमंकुशमेव च।।
घण्टां वा परशुं वापि, वामतः सन्निवेशयेत्।
अधस्तान्महिषं तद्वद्, वि-शरस्कं प्रदर्शयेत्।।
शिरश्छेदोद्भवं तद्वद् - दानवं खड्ग-पाणिनं।
हृदि शूलेन निर्भिन्नं, निर्यदन्त्र-विभूषितं।।
रक्त - रक्ती-कृताङ्गं च, रक्त-विस्फुरितेक्षणं।
वेष्टितं नाग - पाशेन, भ्रूकुटी-कुटिलाननं।।
सपाश - वाम-हस्तेन, धृत-केशं च दुर्गया।
वमद्रुधिर-वक्त्रं च, देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत्।।
देव्यास्तु दक्षिणं पादं, समं सिंहोपरि स्थितं।
किंचिदूर्द्ध्वं तथा वाममंगुष्ठं महिषोपरि।।
स्तूयमानं च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत्।
उग्र-चण्डा प्रचण्डा च, चण्डोग्रा चण्ड-नायिका।।
चण्डा चण्डवती चैव, चण्ड-रूपाति-चण्डिका।
आभिः शक्तिभिरष्टाभिः, सततं परिवेष्टितां।
चिन्तयेज्जगतां धात्रीं, धर्म-कामार्थ-मोक्षदां।।

इसके बाद अपने शिर पर पुष्प देकर मानसोपचारों से देवी की पूजा कर **'विशेषार्घ्य' की स्थापना** कर देवी का पुनः **ध्यान** कर **'घट'** में पुष्प देकर **बिल्व-वृक्ष में देवी का आवाहन** करे—

ॐ ह्रीं भगवति दुर्गे देवि! इहागच्छ इहागच्छ इह तिष्ठ इह तिष्ठ अत्राधिष्ठानं कुरु मम पूजां गृहाण गृहाण।

फिर षोडशोपचारों से **देवी की पूजा** कर **'ॐ बिल्व-वृक्षाय नमः'** से गन्धादि से **बिल्व-वृक्ष की पूजा** कर देवी का **'बोधन'** करे। **पूर्व-दिशा-गामिनी शाखा** को पकड़कर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ **ऐं रावणस्य बधार्थाय, रामस्यानुग्रहाय च।**

अकाले ब्रह्मणा बोधो, देव्यास्त्वयि कृतः पुरा।।

अहमप्याश्विने षष्ठ्यां, सायाह्ने बोधयामि वै।

शक्रेणापि च सम्बोध्य, प्राप्तं राज्यं सुरालये।।

तस्मादहं त्वां प्रतिबोधयामि, विभूति-राज्य-प्रतिपत्ति-हेतोः।

यथैव रामेण हतो दशास्यस्तथैव शत्रून् विनिपातयामि।।

नवमी में बोधन करे, तो निम्न प्रकार मन्त्र पढ़े—

ॐ **इषे मास्यसिते पक्षे, नवम्यामार्द्रयो गतः।**

श्री-वृक्षे बोधयामि त्वां, यावत् पूजां करोम्यहम्।।

ॐ **ऐं रावणस्य बधार्थाय, रामस्यानुग्रहाय च।**

अकाले ब्रह्मणा बोधो, देव्यास्त्वयि कृतः पुरा।।

अहमप्याश्विने तद्वद्, बोधयामि सुरेश्वरीम्।

नवमी में पूर्वाह्न में व **षष्ठी में सायाह्न** में **''बोधन''** करे।

अब तीन **'पुष्पाञ्जलियाँ'** प्रदान करे।

इसके बाद **चार दूर्वाओं** को निम्न मन्त्र से चढ़ावे—

ॐ **काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्तीः परुषः परुषस्परि एवान्ये दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।**

फिर निम्न मन्त्र से **सूत्र से तीन बार आवेष्टन** करे—

ॐ **सूत्रामाणं पृथिवीं द्यामने हसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीति दैवीं नारं स्वरित्रामनागसमस्रवन्ती मा रुहेमा स्वस्तये।**

* * *

आमन्त्रण-अधिवास

नित्य-कर्म कर **सायं-काल** बिल्व-वृक्ष के पास जाकर **'नव-पत्रिका'** को रक्त सूत्र से लपेटकर शुद्धासन पर बैठे। आचमन कर **स्व-शाखोक्त 'स्वस्ति'-वाचन** कर **'सूर्यः सोम०'** इत्यादि का पाठ करे। तब फल-पुष्प-जल-युक्त ताम्र-पात्र को लेकर **'सङ्कल्प'** करे। यथा—

ॐ **विष्णुरोम् तत्-सदद्य आश्विन-मासि शुक्ल-पक्षे अमुक-तिथौ अमुक-गोत्रः श्रीअमुक-देव-शर्मा वार्षिक-शरत्कालीन श्रीभगवती- दुर्गा-पूजाङ्ग-भूत बिल्व-वृक्षाधिकरणक श्रीभगवती-दुर्गा-मन्त्रणा- धिवासन-कर्मणी अहं करिष्ये।**

इस प्रकार **'सङ्कल्प'** कर उक्त जल को **ईशान कोण** में छोड़कर स्व-शाखोक्त **'सूक्त' का पाठ** करे। तब आसन-शोधन कर **भूत-शुद्धि, गणेशादि-पूजन** कर **'ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः'** इत्यादि कराङ्ग-न्यासादि कर **देवी-ध्यान** कर अपने शिर पर पुष्प देकर **मानसोपचारों से देवी का पूजन** कर **विशेषार्घ्य** स्थापित करे। फिर देवी का पुनः ध्यान कर—

'ॐ जयन्ती मङ्गला काली, भद्रकाली कपालिनी।

दुर्गा क्षमा शिवा धात्री, स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते।।'

इत्यादि मन्त्र से **षोडशोपचार पूजन** कर यथा-शक्ति मूल-मन्त्र का **'जप'** करे। 'जप'-फल समर्पित कर **प्रणाम** करे—

ॐ **सर्व - मङ्गल - माङ्गल्ये, शिवे सर्वार्थ-साधिके!**

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि, नारायणि! नमोऽस्तु ते।।

तब 'ॐ बिल्व-वृक्षाय नमः' से पञ्चोपचारों से पूजन कर हाथ जोड़कर निम्न मन्त्र से **आमन्त्रण** करे—

ॐ **मेरु - मन्दार - कैलाश - हिमवच्छिखरे गिरौ।**
जातः श्रीफल-वृक्ष! त्वमम्बिकायाः सदा प्रियः॥

ॐ **श्री - शैल-शिखरे जात, श्रीफल-निकेतन!**
नेतव्योऽसि मयागच्छ, पूज्यो दुर्गा-स्वरूपतः॥

फिर स्व-शाखोक्त **'अधिवास'**-मन्त्रों से **घट, बिल्व-वृक्ष** और **नव-पत्रिका** को स्पर्श कर **प्रतिमा** को पञ्च-गव्य से प्रोक्षित कर **'अधिवासन'** करे। **नाग-पाश-युक्त देवी** के वाम कर में **मङ्गल-सूत्र** बाँधे। तब **'आरती'** करे।

* * *

सप्तमी का कर्म-विधान

आश्विन शुक्ला सप्तमी के दिन प्रातः स्नान कर नित्य-कर्म से निवृत्त हो साधक **बिल्व-वृक्ष** के पास आए। वहाँ **आचमन** कर **सङ्कल्प**-पूर्वक पञ्चोपचारों से **बिल्व-वृक्ष की पूजा** कर **प्रार्थना** करे—

ॐ **बिल्व-वृक्ष! महा-भाग! सदा त्वं शङ्कर-प्रियः।**
गृहीत्वा तव शाखां च, दुर्गा-पूजां करोम्यहम्॥

ॐ **शाखाच्छेदोद्भवं दुःखं, न च कार्यं त्वया प्रभो!**
देवैर्गृहीत्वा ते शाखां, पूज्या दुर्गेति विश्रुतिः॥

अर्थात् हे महाभाग बिल्व-वृक्ष! आप सदा से शङ्कर के प्रिय हैं। आपकी शाखा को लेकर मैं दुर्गा की पूजा करता हूँ। हे प्रभो! शाखा के तोड़ने से होनेवाले कष्ट का दुःख आप न करें क्योंकि देवता भी आपकी शाखा लेकर दुर्गा की पूजा करते हैं, ऐसी ख्याति है।

इस प्रकार **बिल्व-वृक्ष** को प्रसन्न कर **वायव्य कोण** में स्थित दो फलोंवाली शाखा को निम्न मन्त्र से काटे—

ॐ **छिन्दि छिन्दि फट् फट् स्वाहा।**

इस शाखा में **नव-पत्रिकाओं** को बाँधे। **नव-पत्रिकाएँ** ये हैं—**१ रम्भा** (केला), **२ कच्वी** (अरवी), **३ हरिद्रा** (हल्दी), **४ जयन्ती** (जैती), **५ बिल्व** (बेल), **६ दाडिम** (अनार), **७ अशोक, ८ मानक** (मानकचू), **९ धान**—इनकी पत्तियाँ, **सप्तमी** के पहले ही अर्थात् **षष्ठी** के दिन **सायं-काल** एक छोटे केले के पौधे में अन्य आठ वस्तुओं की शाखाओं को लपेटकर **बिल्व-वृक्ष** के पास रख देना चाहिए।

नव-पत्रिका-युक्त बिल्व-शाखा को, सम्भव हो तो ले जाकर **गङ्गा-जल** में विधि-पूर्वक स्नान करावे अथवा **पूजा-गृह** के आँगन में ही स्नान करा कर उसका **पूजन** करे और **साड़ी** तथा **सिन्दूर** आदि से सुशोभित कर **गणेशजी की मूर्ति** के दाहिनी ओर स्थापित करे।

फिर निम्न मन्त्र का पाठ करे—

ॐ **पुत्रायुर्धन - वृद्ध्यर्थं, नेष्यामि चण्डिकालयम्।**
बिल्व-शाखां समाश्रित्य, लक्ष्मी-राज्यं प्रयच्छ मे॥

ॐ आगच्छ चण्डिके देवि! सर्व-कल्याण-हेतवे।
पूजां गृहाण सुमुखि! नमस्ते शङ्कर-प्रिये॥

फिर **वाद्य-सङ्गीत** के साथ नदी आदि के पास जाकर सुन्दर पीठ के ऊपर **बिल्व-शाखा** को **नव-पत्रिका** के साथ स्थापित कर **'ॐ बिल्व-शाखा-वासिनि दुर्गे! इहागच्छ०'** से आवाहन कर **'ॐ बिल्व-शाखा-वासिन्यै दुर्गायै नमः'** से उसका **पूजन** कर निम्न मन्त्रों से उसे **स्नान** करावे। पहले कुश-तिल-जल आदि लेकर **सङ्कल्प** करे। यथा—

ॐ तत्सदद्याश्विने मासि शुक्ल-पक्षे सप्तम्यां तिथौ अमुक-गोत्रः श्रीअमुक-देव-शर्मा सप्त-जन्मार्जित-पाप-क्षय-कामः श्री भगवती दुर्गा-प्रीति-कामो वा श्रीभगवती-दुर्गा-देवीमहं स्नापयिष्यामि।

महाऽष्टमी व **नवमी** में सङ्कल्प क्रमशः निम्न प्रकार करे—

१ **अष्ट - सहस्र - वर्षावच्छिन्न - स्वर्गाधिकरण-स्थिति-कामः।**

२ **महा-नवम्यां धन-पुत्र-विवर्द्धन-शत-यज्ञ-फल-प्राप्ति-कामः।**

अब पहले निम्न मन्त्र से **तैल-हरिद्रा लगाकर स्नान** कराए—

ॐ श्रायन्त इव सूर्यः विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत।
वसूनि जाते जनिमान्योजसा प्रतिभागं नदीधिमः।

फिर **शुद्ध जल** से निम्न मन्त्रों से स्नान कराए—

ॐ कदली-तरु-संस्थाऽसि, विष्णोर्वक्षःस्थलाश्रये!
नमस्ते नव-पत्रि! त्वं, नमस्ते चण्ड-नायिके॥१॥

ॐ कच्चि! त्वं स्थावरस्थासि, सदा सिद्धि-प्रदायिनी।
दुर्गा - रूपेण सर्वत्र, स्नानेन विजयं कुरु॥२॥

ॐ हरिद्रे ! हर - रूपाऽसि, शङ्करस्य सदा प्रिये!
रुद्र - रूपेण देवि! त्वं, सर्व-शान्तिं प्रयच्छ मे॥३॥

ॐ जयन्ति जय - रूपासि, जगतां जय - कारिणि।
स्नापयामीह देवि ! त्वं, जयं देहि गृहे मम॥४॥

ॐ श्री-फल! श्री-निकेतोऽसि, सदा विजय-वर्धन!
देहि मे हित-कामांश्च, प्रसन्नो भव सर्वदा॥५॥

ॐ दाडिम्यघ - विनाशाय, क्षुन्नाशाय सदा भुवि।
निर्मिता फल - कामाय, प्रसीद त्वं हर-प्रिये॥६॥

ॐ स्थिरा भव सदा दुर्गे! अशोके शोक-हारिणि!
मया त्वं पूजिता दुर्गे! मामशोक सदा कुरु॥७॥

ॐ मानो मान्येषु वृक्षेषु, माननीयः सुरासुरैः।
स्नापयामि महा-देवि! मानं देहि नमोऽस्तु ते॥८॥

ॐ लक्ष्मीस्त्वं धान्य-रूपाऽसि, प्राणिनां प्राण-दायिनि!
स्थिरात्यन्तं हि नो भूत्वा, गृहे काम-प्रदा भव॥९॥

इसके बाद उसे **पूजा-गृह** में लाकर निम्न मन्त्रों से **स्नान** करावे। पहले नदी के जल से—

ॐ आत्रेयी भारती गङ्गा, यमुना च सरस्वती।
सरयूर्गण्डकी पुण्या, श्वेत-गङ्गा च कौशिकी॥
भागवती च पाताले, स्वर्गे मन्दाकिनी तथा।
सर्वाः सुमनसो भूत्वा, भृङ्गारैः स्नापयन्तु ताः॥

ॐ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु, ब्रह्म - विष्णु-महेश्वराः।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणः प्रभुः॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च, भवन्तु विजयाय ते।

ॐ आखण्डलोऽग्निर्भगवान्, यमो वै नैऋतस्तथा।।
वरुणः पवनश्चैव, धनाध्यक्षस्तथा शिवः।
ब्रह्मणा सहितः शेषो, दिक्पालाः पांतु ते सदा।।

ॐ कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा, पुष्टिः श्रद्धा क्षमा मतिः।
बुद्धिर्लज्जा वपुः कान्तिः, शान्तिस्तुष्टिश्च मातरः।।
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु, धर्म - पत्न्यः सु-संयताः।

ॐ आदित्यश्चन्द्रमा भौमो, बुध-जीव-सितार्कजाः।।
ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु, राहुः केतुश्च तर्पिताः।

ॐ ऋषयो मुनयो गावो, देव - मातर एव च।
देव-पत्न्यो धरा नागा, दैत्याश्चाप्सरसांगनाः।।
अस्त्राणि सर्व-शस्त्राणि, राजानो वाहनानि च।।
ओषधानि च रत्नानि, कालस्यावयवाश्च ये।।
सरिताः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।
देव - दानव - गन्धर्वा, यक्ष-राक्षस-पन्नगाः।।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु, धर्म - कामार्थ-सिद्धये।

ॐ सिन्धु-भैरव-शोणाद्या, ये नदा भुवि संस्थिताः।
सर्वे सु - मनसो भूत्वा, भृङ्गारैः स्नापयन्तु ते।।

ॐ तक्षकाद्याश्च ये नागाः, पाताल-तल-वासिनः।
सर्वे सु-मनसो भूत्वा, भृङ्गारैः स्नापयन्तु ते।।

अब शङ्ख-जल से—

ॐ सर्वेषामधिपो देव, ईशानो नाम नामतः।
शूल - पाणिर्महा-देवो, भृङ्गारैः स्नापयन्त्विमां।।

तब गङ्गा-जल से—

ॐ मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि, सर्व-पाप-हरं शुभं।
स्वर्ग - स्रोतस्तु वैष्णव्यं, स्नानं भवतु तेन ते।।

उष्ण जल से—

ॐ परमं पवित्रमुष्णं च, वह्नि-ज्योतिः-समन्वितं।
जीवनं सर्व-पापघ्नं, भृङ्गारैः स्नापयन्त्विमां।।

गन्धोदक से—

ॐ गन्धाढ्यं शोभनं चैव, शीतलं सु-मनोहरं।
सर्व-पाप-हरं वारि, भृङ्गारैः स्नापयन्त्विमां।

शुद्ध जल से—

'ॐ आपो हिष्ठा मयो भुव' इत्यादि

ॐ शन्नो देवीरभीष्टये शन्नो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः।

तदनन्तर तत्तत् मन्त्रों से शोधन कर पञ्च-गव्य को एक कर उन्हीं मन्त्रों से स्नान कराए।

ॐ मधुवातेति—मधु से

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पुष्णो हस्ताभ्यां
—कुशोदक से

अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्म-वर्चसायाभिषिञ्चामि।
सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि।
इन्द्रियस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि।
—पुष्पोदक से।

ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्य-दातये निहोता सत्सि बर्हिषि
—फलोदक से

ॐ **नारायण्यै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्**—
इक्षु-रस-सागरोदक से।

ॐ **हां हृदयाय नमः**—मधु से।

ॐ **ह्रीं शिरसे स्वाहा**—घृत से।

ॐ **हूं शिखायै वषट्**—दुग्ध से।

ॐ **हैं कवचाय हुम्**—नारिकेल-जल से।

ॐ **हौं नेत्र-त्रयाय वौषट्**—ईख के रस से।

ॐ **हः अस्त्राय फट्**—दही से।

ॐ **ह्रीं अम्बिकायै नमः**—तिल-तैल से

ॐ **ह्रीं चामुण्डायै नमः**—विष्णु-तैल से।

ॐ **ह्रीं चण्डिकायै नमः**—शिशिरोदक से।

ॐ **ह्रीं नमः**—राज-द्वार की मिट्टी से।

ॐ **हूं नमः**—चतुष्पथ की मिट्टी से।

ॐ **हैं नमः**—वृष-शृङ्ग की मिट्टी से।

ॐ **हः नमः**—गज-दन्त की मिट्टी से।

ॐ **दुर्गायै नमः**—वेश्या-द्वार की मिट्टी से।

ॐ **ह्रीं श्रीं नमः**—नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से।

ॐ **ऐं श्रीं नमः**—गङ्गा की मिट्टी से।

ॐ **ऐं ह्रीं श्रीं नमः**—सर्व-तीर्थों की मिट्टी से।

ॐ **या ओषधी सोमराज्ञीर्बह्वीः शत-विचक्षणां।**
तामामसि त्वमुत्तमारं कामाय संहृदे—सर्वौषधि और
महौषधि से।

पञ्च-कषाय-युक्त सहस्र-धारा-जल से—

ॐ **सागराः सरितः सर्वाः, स्वर्ग-स्रोता नदास्तथा।**
सर्वौषधीभिः पापघ्नाः, सहस्रैः स्नापयन्तु ते॥
लवणेक्षु - सुरा-सर्पिर्दधि-दुग्ध-जलैस्तथा।
सहस्र-धारया देवीं, स्नापयामि महेश्वरी॥

तब चार घड़ों से—

ॐ **अग्निमीड़े पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं रत्न-धाततम्॥१॥ ॐ इषे त्वोर्जे त्वा वायवः स्थः देवो वः सविताप्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे॥२॥ ॐ अग्न आयाहि वीतते गृणानो हव्य-दातये निहोता सत्सि-बर्हिषि॥३॥ ॐ शन्नो देवीरभीष्टये आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः॥४॥**

फिर आठ कलशों से स्नान कराए। पहले गङ्गा-जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु, ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः।**
व्योम-गङ्गाम्बु-पूर्णेन, आद्येन कलशेन तु॥१
(मालव राग, विजय वाद्य)

तब वृष्टि-जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु, भक्तिमन्तः सुरेश्वरि!**
मेघ - मुक्ताम्बु-पूर्णेन, द्वितीय-कलशेन तु॥२
(ललित राग, दुन्दुभि वाद्य)

फिर सरस्वती-जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **सारस्वतेन तोयेन, सम्पूर्णेन सुरोत्तमे!**
विद्याधराश्चाभिषिञ्चन्तु, तृतीय-कलशेन तु॥३
(विभाष राग, दुन्दुभि वाद्य)

तब सागर-जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **शक्राद्याश्चाभिषिञ्चन्तु, लोक-पालाः समागताः।**
सागरोदक - पूर्णेन, चतुर्थेन कलशेन तु॥४
(भैरव राग, भीम वाद्य)

पद्म-रज-मिश्रित जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **वारिणा परिपूर्णेन, पद्म - रेणु-सुगन्धिना।**
पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु, नागाश्च कलशेन तु॥५
(कोड़ा राग, इन्द्राभिषेक वाद्य)

निर्झर-जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **हिमवद्धेम-कूटाद्याश्चाभिषिञ्चन्तु पर्वताः।**
निर्झरोदक - पूर्णेन, षष्ठेन कलशेन तु॥६
(वाराड़ी राग, शङ्ख वाद्य)

सर्व-तीर्थों के जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **सर्व - तीर्थाम्बु-पूर्णेन, कलशेन सुरेश्वरि!**
सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु, ऋषयः सप्त-खेचराः॥७
(वसन्त राग, पञ्च-शब्द वाद्य)

शुद्ध जल से पूर्ण कलश से—

ॐ **सर्व - तीर्थाम्बु-पूर्णेन, कलशेन सुरेश्वरि!**
अष्ट-मङ्गल-संयुक्ते, दुर्गे देवि! नमोऽस्तु ते॥८
(घानसी राग, विजय वाद्य)

इस प्रकार स्नान कर करे **'पत्री-प्रवेश का सङ्कल्प'** करे। यथा—

ॐ **तत्सदित्यादि श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः वार्षिक-शरत्-कालीन-दुर्गा-महा-पूजाङ्ग-भूत गृह-मध्याधिकरणक पत्री-प्रवेश-कर्माहं करिष्ये।**

इस प्रकार सङ्कल्प कर **'ॐ भूतेभ्यो नमः'** से भूतादि का आवाहन कर पाद्यादि से पूजन कर माष-भक्त बलि लेकर—

ॐ **भूताः प्रेताः पिशाचाश्च, ये वसन्त्यत्र भू-तले।**
ते गृह्णन्तु मया दत्तो, बलिरेषः प्रसाधितः॥
पूजिता गन्ध - पुष्पाद्यैर्बलिभिस्तर्पितास्तथा।
देशादस्माद् विनिःसृत्य, पूजां पश्यन्तु मत्कृतां॥

उक्त मन्त्र पढ़कर **'एष माष-भक्त-बलिं ॐ भूतादिभ्यो नमः'** से उसे प्रदान करे। तब **'ॐ अस्त्राय फट्'** से सात बार अभिमन्त्रित लाल-चन्दन-सिद्धार्थ-भस्म-दूर्वा-कुश और अक्षत लेकर—

ॐ **अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भूमि-पालकाः।**
भूतानामविरोधेन, दुर्गा - पूजां करोम्यहम्।
ॐ **वेतालाश्च पिशाचाश्च, राक्षसाश्च सरीसृपाः।**
अपसर्पन्तु ते सर्वे, चण्डिकास्त्रेण ताडिताः॥

उक्त मन्त्रों से उन्हें **पूजा-स्थल** में बिखेर कर **भूतों का अपसारण** करे। तब **'नव-पत्रिका'** को वस्त्र-सिन्दूरादि से सजाकर **'ॐ बिल्व-शाखा-वासिन्यै दुर्गायै नमः'** से **पाद्यादि-पूजन** कर उसे **देवी-स्वरूप ध्यान** कर अपने सिर पर दूर्वाक्षत छोड़े। फिर **प्रतिमा** के आसन को स्पर्श कर—

ॐ **चण्डिके! चल चल चालय चालय दुर्गे! पूजालयं प्रविश।**
ॐ **गम्यतां मद् - गृहे देवि! अष्टाभिः शक्तिभिः सह।**
पूजां गृहाण! सुमुखि सर्व-कल्याण-हेतवे॥

उक्त मन्त्र पढ़कर **प्रतिमा का सञ्चालन** कर नृत्य-गीत-वाद्यादि के साथ **देवी की वेदी के ऊपर स्थापना** करे। तदनन्तर **'ॐ ऐं ह्रीं स्यां स्थीं त्वमम्बिके! स्थिरा भव'** से **स्थिरी-करण** कर पञ्च-गव्य का संशोधन कर सामान्य पूजा-क्रम के अनुसार **सामान्यार्घ्य-स्थापन, द्वार-पूजा, विघ्नोत्सारण, आसन-शोधन, भूत-शुद्धि, मातृका-न्यासादि** कर **'ह्रीं'** से तीन बार **प्राणायाम** करे। फिर **'पीठ'-न्यास** करे। यथा—

हृदये—**आं प्रभायै नमः, ईं मायायै नमः, ऊं जयायै नमः, एं सूक्ष्मायै नमः, ऐं विशुद्धायै नमः, ओं नन्दिन्यै नमः, औं सुप्रभायै नमः, अं विजयायै नमः।**

मध्ये—**अः सर्व-सिद्धिदायै नमः।**

तदुपरि—**ॐ वज्र-नख- दंष्ट्रायुधाय महा-सिंहाय हुं फट् नमः।**

इसके बाद मूल-मन्त्र से **'व्यापक'-न्यास** कर विनियोगादि करे—

श्रीदुर्गा-मन्त्रस्य नारद ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीदुर्गा देवता, मम सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थं दुर्गा-पूजने विनियोगः।

शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे गायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदि श्रीदुर्गायै देवतायै नमः। सर्वाङ्गे मम सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे दुर्गा-पूजने विनियोगाय नमः।

तदनन्तर **'गणेश-घट'** की स्थापना कर **'सर्वतोभद्र-मण्डल'** में स्व-शाखोक्त **'देवी-घट'** की स्थापना कर **तीर्थों का आवाहन** करे—

ॐ **गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः, समुद्राश्च सरांसि च।**
आयान्तु यजमानस्य, दुरित - क्षय-कारकाः।।

ॐ **गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति!**
नर्मदे सिन्धु कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

तब गज, अश्व, रथ, बल्मीक, नदी, सङ्गम और जलाशय की **सप्त-मृत्तिका** तथा **सर्वौषधि, बिल्वादि फल, गन्ध-पुष्प-दूर्वाक्षत** को **'नमः'** मन्त्र से **घट** में छोड़े। इसके बाद **प्रतिमा** को निम्न मन्त्रों से **चक्षुर्दान** करे—

ऊर्ध्व नेत्र में—**ॐ कया नश्चित्र आभुव दूती सदा वृधः सखा। कयः शचिष्ठया वृता।**

वाम नेत्र में—**आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम-वृष्ण्यम्। भवा राजस्य सङ्ग्थे।**

दक्ष नेत्र में—**ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणास्याग्नेः। आप्राद्यावा पृथिवी अन्तरीक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।।**

प्रतिमाओं में **चक्षुर्दान की अन्य विधि** यह है कि पहले आवाहन हेतु **कूर्म (कच्छप)-मुद्रा** में पुष्प लेकर ध्यान करे—

ॐ **जटा - जूट - समायुक्तामर्द्धेन्दु-कृत-शेखरां।**
लोचन - त्रय-संयुक्तां, पूर्णेन्दु-सदृशाननां।
तप्त-काञ्चन-वर्णाभां, सुप्रतिष्ठां सुलोचनां।
नव - यौवन-सम्पन्नां, सर्वाभरण-भूषितां।।
सुचारु-दशनां तीक्ष्णां, पीनोन्नत-पयोधरां।
त्रिभङ्ग-स्थान-संस्थानां, महिषासुर-मर्दिनीं।।
मृणालायत - संस्पर्श-दश-बाहु-समन्वितां।

त्रिशूलं दक्षिणे ध्येयं, खड्गं चक्रं क्रमादधः॥
तीक्ष्ण-वाणं तथा शक्तिं, दक्षिणे सन्निवेशयेत्।
खेटकं पूर्ण - चापं च, पाशमंकुशमेव च॥
घण्टां वा परशुं वापि, वामतः सन्निवेशयेत्।
अधस्तान्महिषं तद्वद्, वि-शरस्कं प्रदर्शयेत्॥
शिरश्छेदोद्भवं तद्वद् - दानवं खड्ग-पाणिनं।
हृदि शूलेन निर्भिन्नं, निर्यदन्त्र - विभूषितं॥
रक्त - रक्ती-कृताङ्गं च, रक्त-विस्फुरितेक्षणं।
वेष्टितं नाग - पाशेन, भ्रूकुटी-कुटिलाननं॥
सपाश - वाम-हस्तेन, धृत-केशं च दुर्गया।
वमद्रुधिर - वक्त्रं च, देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत्॥
देव्यास्तु दक्षिणं पादं, समं सिंहोपरि स्थितं।
किंचिदूर्द्धं तथा वाममंगुष्ठं महिषोपरि॥
स्तूयमानं च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत्।
उग्र-चण्डा प्रचण्डा च, चण्डोग्रा चण्ड-नायिका॥
चण्डा चण्डवती चैव, चण्ड-रूपाति-चण्डिका।
आभिः शक्तिभिरष्टाभिः, सततं परिवेष्टितां।
चिन्तयेज्जगतां धात्रीं, धर्म-कामार्थ-मोक्षदां॥

इस प्रकार ध्यान कर अपने शिर पर पुष्प देकर **'मानस पूजन'** करे। फिर **'विशेषार्घ्य की स्थापना'** कर **'पीठ'**-पूजा करे—

मण्डल के मध्य में **पीठ-देवता का आवाहन** करे। पीठ-न्यासोक्त क्रम से **'ॐ आधार-शक्तये नमः'** इत्यादि से **'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः'** तक पूजा कर **'ॐ आं प्रभायै नमः, ईं मायायै नमः, ऊं जयायै नमः, एं सूक्ष्मायै नमः, ऐं विशुद्धायै नमः, ओं नन्दिन्यै नमः, औं सुप्रभायै नमः, अं विजयायै नमः, अः सर्व-सिद्धिदायै नमः।'** तदुपरि **'वज्र-नख-दंष्ट्रायुधाय महा-सिंहाय हुँ फट् नमः।'** तब पुनः ध्यान कर आवाहनी आदि **पञ्च-मुद्राएँ** दिखाता हुआ। आवाहनादि करे। यथा—

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवति दुर्गे, स्वकीय-गण-सहिते! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुध्यस्व इह सन्निरुध्यस्व, अत्राधिष्ठानं कुरु, मम पूजां गृहाण गृहाण।

तब मूल-मन्त्र से **षडङ्ग-न्यास** कर प्रतिमा को छूते हुए पढ़े—

ॐ आगच्छ मद्-गृहे देवि! अष्टाभिः शक्तिभिः सह।
पूजां गृहाण विधिवत्, सर्व-कल्याण-कारिणि॥
ॐ एह्येहि भगवत्यम्ब ! शत्रु - क्षय - जय - प्रदे!
भक्तितः पूजयामि त्वां, नव - दुर्गे! सुरार्चिते॥
ॐ दुर्गे देवि! समागच्छ, सान्निध्यमिह कल्पय।
यज्ञ - भागं गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह॥
ॐ शारदीयामिमां पूजां, करोमि कमलेक्षणे!
आज्ञापय महा - देवि! दैत्य - दर्प-विनाशिनि॥
ॐ संसारार्णव - दुष्पारे, सर्व - मार-निकृन्तिनि !
त्रायस्व वरदे देवि ! नमस्ते शङ्कर - प्रिये॥

ॐ या देवा याश्च देव्यश्च, चलितायां चलन्ति हि।
आवाहयामि तान् सर्वान्, चण्डिके! परमेश्वरि॥
ॐ प्राणान् रक्ष यशो रक्ष, पुत्र - दार-धनं सदा।
सर्व-रक्षा-करी यस्मात्, त्वं हि देवि! जगत्-प्रिये॥
ॐ प्रविश्य तिष्ठ यज्ञेऽस्मिन्, यावत् पूजां करोम्यहम्।
मेनानन्द - करे देवि! सर्व-सिद्धिं च देहि मे॥
ॐ आगच्छ चण्डिके देवि ! सर्व - कल्याण-हेतवे।
पूजां गृहाण सुमुखि ! नमस्ते हर - वल्लभे॥
ॐ आवाहयामि देवि ! त्वां, मृण्मये श्रीफलेऽपि च।
कैलाश - शिखरात् देवि ! विन्ध्याद्रेर्हिम-पर्वतात्॥
ॐ आगत्य विल्व-शाखायां, चण्डिके! सन्निधिं कुरु।
स्थापितासि मया देवि ! पूजये त्वां प्रसीद मे॥
ॐ देवि चण्डात्मिके चण्डि ! चण्ड-विग्रह-कारिणि!
विल्व-शाखां समाश्रित्य, तिष्ठ देवि! गणैः सह॥
ॐ देवि! त्वं जगतां मातः, सृष्टि - संहार-कारिणि!
पत्रिकासु समस्तासु, सान्निध्यमिह कल्पय॥
ॐ पल्लवैश्च फलोपेतैः, शाखाभिः सुर-नायिके!
पल्लवे संस्थिते देवि ! पूजां गृह्ण प्रसीद मे॥
ॐ आवाहितासि देवि ! त्वं, मृण्मये श्रीफलेऽपि च॥
स्थिरात्यन्तं हि नो भूत्वा, गृहे काम-प्रदा भव।
ॐ चण्डि! त्वं चण्ड - रूपासि, सुर-तेजो महाबले!
प्रविश्य तिष्ठ यज्ञेऽस्मिन्, यावत् पूजां करोम्यहं॥

प्राण-प्रतिष्ठा

पुष्प-युक्त कुश को **प्रतिमा** के मस्तक पर रखकर मूल-मन्त्र का पाँच बार **'जप'** करे। तब **'ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः'** से सर्वाङ्ग को स्पर्श करे। फिर अंगुष्ठ-अनामिका से **प्रतिमा** के दोनों कपोलों को स्पर्श कर मूल-मन्त्र का उच्चारण कर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्रीदुर्गायाः प्राणा इह प्राणाः, आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री दुर्गायाः जीव इह स्थितः, आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्रीदुर्गायाः सर्वेन्द्रियाणि, आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्रीदुर्गायाः वाङ्-मनश्चक्षुः- श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

तदनन्तर **लेलिहान-मुद्रा** से **देवी** के हृदय पर हाथ देकर निम्न मन्त्र पढ़े—

'ॐ मनोजूतिरिति ॐ अस्यै प्राणा' यह कहकर निम्न पाँच मन्त्रों का जप करे—

**ॐ हंसः शुचिषद् वसुरन्तरिक्ष सद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वर सद्-व्योम सदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत्॥१
ॐ प्रतद्विष्णुः स्तुवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
अस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वाः॥२
ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु, त्वष्टा रूपाणि पिंशतु।
आसिंचतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते॥३॥
ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥४॥**

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि-वर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥५॥

इसके बाद इसी प्रकार **गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिकेय, महा-सिंह, महिषासुरं, नाग-पाश, मूषिक, मयूर, जया, विजया, चित्रस्थ शिवा की 'प्राण-प्रतिष्ठा'** करे।

तब **गणेश-घट** में **'खर्वं'** इत्यादि **ध्यान** कर **आवाहन-पूर्वक गणेश की षोडशोपचारों से पूजा** करे। फिर **सूर्य, विष्णु, शिव, दूर्गा की पूजा** पञ्चोपचारों से कर पूर्व-वत् **दुर्गा देवी का ध्यान** कर उनका **पूजन षोडशोपचारों** से करे। यथा—

'वं एतस्मै रजतासनाय नमः' से तीन बार अभ्युक्षण कर **'एतदधिपतये विष्णवे नमः एतत् सम्प्रदानाय ह्रीं दुर्गायै नमः'**

कहकर हाथ जोड़ निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ संयुक्तं हेम-रत्नादि-ताम्र-पित्तल-सीसकैः।
दार्वादि-रचितं रम्यमासनं प्रति-गृह्यतां॥

'स्वागतं' से आसन का स्पर्श कर कहे—

ॐ कृतार्थोऽनुगृहीतोऽस्मि, सफलं जीवितं मम।
आगतासि यतो दुर्गे! माहेश्वरि! मदाश्रमम्॥

पूर्व-वत् पाद्य देकर—

ॐ पाद्यं गृह्ण महा-देवि! सर्व-दुःखापहारकं।
त्रायस्व वरदे देवि! नमस्ते शङ्कर-प्रिये॥

अर्घ्य—**दूर्वाक्षत-समायुक्तं, बिल्व-पत्रं तथापरं।
शोभनं शङ्ख-पात्रस्थं, गृहाणार्घ्यं हर-प्रिये॥**

ॐ नाना-तीर्थोद्भवं वारि, चन्दनेन सुवासितं।
गृहाणार्घ्यमिदं देवि। विश्वेश्वरि! नमोऽस्तु ते॥

जाति-कङ्कोल-लवङ्ग सहित आचमनीय—

ॐ मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि, सर्व-पाप-हरं शुभं।
गृहाणाचमनीयं त्वं, मया भक्त्या निवेदितं॥

ॐ इमा आपो मया भक्त्या, तव पाणि-तलेऽर्पिताः।
आचमय महा-देवि! प्रीता शान्तिं प्रयच्छ मे॥

मधुपर्क— **ॐ मधुपर्कं महा-देवि! ब्रह्माद्यैः परिकल्पितं।
मया निवेदितं भक्त्या, गृहाण परमेश्वरि॥**

स्नानीय जल—**जलं च शीतलं स्वच्छं, नित्यं शुद्धं मनोरमं।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या, कल्पितं देवि! गृह्यतां॥**

वस्त्र—**ॐ बहु-तन्तु-समायुक्तं, पट्ट-सूत्रादि-निर्मितं।
वासो देवि! सुशुक्लं च, गृहाण वर-वर्णिनि॥**

ॐ तन्तु-सन्तान - सन्नद्धं, रञ्जितं राग-वस्तुना।
दुर्गे देवि! भज प्रीतिं, वासस्ते परिधीयतां॥

आभरण— **ॐ दिव्य-रत्न-समायुक्ता, वह्नि-भानु-सम-प्रभाः।
गात्राणि शोभयिष्यन्ति, अलङ्काराः सुरेश्वरि॥**

गन्धं—**ॐ शरीरं ते न जानामि, चेष्टां नैव च नैव च।
मया निवेदितान् गन्धान्, प्रतिगृह्य विलिप्यतां॥**

पुष्पं—**ॐ पुष्पं मनोरमं दिव्यं, सुगन्धिं देव-निर्मितं।
हृद्यमद्भुतमाघ्रेयं, देवि ! दत्तं प्रगृह्यतां॥**

धूप— ॐ वनस्पति-रसो दिव्यो, गन्धाढ्यः सुर-भोजनः।
मया निवेदितो भक्त्या, धूपोऽयं प्रति-गृह्यतां॥

दीप— ॐ अग्नि-ज्योती रवि-ज्योतिश्चन्द्र-ज्योतिस्तथैव च।
ज्योतिषामुत्तमे दुर्गे ! दीपोऽयं प्रतिगृह्यतां॥

नेत्राञ्जन— ॐ नमस्ते सर्व-देवेशि! नमस्ते शङ्कर-प्रिये!
चक्षुषामञ्जनं हृद्यं, देवि! दत्तं प्रगृह्यतां॥

नैवेद्य— ॐ आमान्नं घृत-संयुक्तं, नाना द्रव्य-समायुक्तं।
मया निवेदितं भक्त्या, गृहाण परमेश्वरि॥

फल-मूल नैवेद्य—ॐ फल-मूलानि सर्वाणि, ग्राम्यारण्यानि यानि च।
नाना - विध सुगन्धीनि, गृह्ण देवि! ममाचिरं॥

रचना— ॐ नाना-फल-समायुक्तं, नाना-वर्ण-प्रपूरितां।
रचनां ते प्रयच्छामि, गृहाण परमेश्वरि॥

अन्नं—ॐ अन्नं चतुर्विधं देवि! रसैः षड्भिः समन्वितं।
उत्तमं प्राणदं चैव, गृहाण मम भावतः॥

परमान्न— ॐ गव्य-सर्पिः-समायुक्तो, नाना-मधुर-संयुक्तः।
(पायस) मया निवेदितो भक्तया, पायसः प्रतिगृह्यतां॥

पिष्टक— ॐ अमृतैः रचितं दिव्यं, नाना-रूप-विनिर्मितं।
पिष्टकं विविधं देवि! गृहाण मम भावतः॥

मधु— ॐ कुबेरेण पुरा दत्तं, रत्न-पात्र-प्रपूरितं।
अक्षयं सर्वदा देवि! त्वयेदं मधु गृह्यतां॥

मोदक— ॐ मोदकं स्वाद-संयुक्तं, शर्करादि-विनिर्मितं।
सुरम्यं मधुरं भोज्यं, देवि! तत् प्रतिगृह्यतां॥

लड्डूक— ॐ लड्डूकं षड्-रसैर्युक्तं, दुग्ध-खण्डादि-विनिर्मितं।
सुमिष्टं मधुरं देवि ! गृह्यतां परमेश्वरि॥

पानीय— ॐ जलं च शीतलं स्वच्छं, सुगन्धिं सु-मनोहरं।
मया निवेदितं भक्त्या, पानाय प्रतिगृह्यतां॥

ताम्बूल— ॐ फल - पत्र - समायुक्तं, कर्पूरेण सुवासितं।
मया निवेदितं भक्त्या, ताम्बूलं प्रतिगृह्यतां॥

अष्टोत्तर-शत दूर्वा—ॐ नमस्ते सर्वगे देवि! नमस्ते सुख-मोक्षदे!
दूर्वां गृहाण देवि! त्वं, मां निस्तारय सर्वतः॥

श्रीफल-पत्र-माल्य—ॐ अमृतोद्भवं श्रीयुक्तं, महादेव-प्रियं सदा।
पवित्रं ते प्रयच्छामि, श्रीफलोऽयं सुरेश्वरि॥

पुष्प-माल्य— ॐ सूत्रेण ग्रथितं माल्यं, नाना-पुष्प-समन्वितं।
श्रीयुक्तं लम्बमानं च, गृहाण परमेश्वरि॥

शङ्खाभरण— ॐ महोदधि-समुद्भूताः, सर्व-देवी-प्रियाः सदा।
मया निवेदिताः शङ्ख-वलया भूषणाय ते॥

स्वर्णाभरण— ॐ स्वर्णादीनामलङ्कारं, भूषणानामनुत्तमं।
हार - कुण्डल - केयूर - नूपुरादि गृहाण मे॥

सिन्दूर— ॐ रञ्जनं सर्व-लोकानां, श्रिया परमया युतं।
सिन्दूर - तिलकं तेऽस्तु, ललाट-तट-मण्डनं॥

वाद्य— ॐ आनन्द-जनकं देवि! शक्रादीनां जय-प्रदं।
उत्साह - जनकं रम्यं, वाद्यं तव निवेदितं॥

पुष्पाञ्जलि-त्रय—ॐ चण्डिकायै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो
गौरी प्रचोदयात्।

अब सिन्दूर-तिलक देकर **दर्पण** दिखाए। तब **'ध्यायेन्नित्यं०'** इत्यादि से **शिव का ध्यानावाहन** कर षोडशोपचारों से उनकी **पूजा** कर उन्हें **प्रणाम** करे।

'पाशाक्षा०' इत्यादि से लक्ष्मी का ध्यानावाहन कर षोडशोपचारों से उनकी **पूजा** कर **'ॐ विश्व-रूपस्य भार्यासि०'** इत्यादि से उन्हें प्रणाम करे।

'तरुण-शकलमिन्दो०' इत्यादि से सरस्वती का ध्यानावाहन कर षोडशोपचारों से उनकी **पूजा** कर **'ॐ सरस्वति! महाभागे०'** इत्यादि से उन्हें प्रणाम करे।

इसके बाद **कार्तिकेय का ध्यान** करे। यथा—

ॐ **कार्तिकेयं महा-भागं, मयूरोपरि-संस्थितं।**
तप्त-काञ्चन-वर्णाभं, शक्ति-हस्तं वर-प्रदं॥
द्वि-भुजं शत्रु-हन्तारं, नानालङ्कार-भूषितं।
प्रसन्न - वदनं देवं, सर्व-सेना-समावृतं॥

आवाहन कर उनका षोडशोपचार-पूजन कर निम्न मन्त्रों से उन्हें प्रणाम करे—

ॐ **कार्तिकेय! नमस्यामि, गौरी-पुत्रं सुत-प्रदम्।**
षडाननं महा - भागं, दैत्य-दर्प-निषूदनीम्॥

तदनन्तर **'ॐ वज्र-नख-दंष्ट्रायुधाय महा-सिंहाय हुं फट् नमः'** से **महा-सिंह का ध्यानावाहन** कर **षोडशोपचार** से पूजन कर उन्हें **प्रणाम** करे।

फिर **नाग-पाश, मूषिक, मयूर, जया, विजया** का आवाहन कर प्रत्येक का **षोडशोपचार-पूजन** कर उन्हें **प्रणाम** करे।

अब निम्न मन्त्रों से पञ्चोपचारों से **'नव-पत्रिका'**-गत प्रत्येक वृक्ष की अलग-अलग **पूजा** कर प्रत्येक को नमस्कार करे। यथा—

१ ॐ **रम्भाधिष्ठात्रि ब्रह्माणि! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखीकृता भव, ॐ रम्भाधिष्ठात्र्यै ब्रह्माण्यै नमः गन्धं समर्पयामि** इत्यादि।

ॐ **दुर्गे देवि ! समागच्छ, सान्निध्यमिह कल्पय।**
रम्भा-रूपेण सर्वत्र, शान्तिं कुरु नमोऽस्तु ते॥

२ ॐ **कच्व्यधिष्ठात्रि कालिके! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ कच्वधिष्ठात्र्यै कालिकायै नमः गन्धं समर्पयामि** इत्यादि।

ॐ **महिषासुर-युद्धेषु, कच्वी-भूतासि सुव्रते!**
मम चानुग्रहार्थाय, आगताऽसि हरि-प्रिये॥

३ ॐ **हरिद्राधिष्ठात्रि दुर्गे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ हरिद्राधिष्ठात्र्यै दुर्गायै नमः गन्धं समर्पयामि** इत्यादि।

ॐ **हारिद्रे वरदे देवि! उमा-रूपाऽसि सुव्रते!**
मम विघ्न-विनाशाय, पूजां गृह्ण प्रसीद मे॥

४ ॐ **जयन्त्यधिष्ठात्रि कार्तिकि! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह**

सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ जयन्त्यधिष्ठात्र्यै कार्तिक्यै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ निशुम्भ - शुम्भ-मथने! इन्द्रैर्देव-गणैः सह।
जयन्ति! पूजिताऽसि, त्वमस्माकं वरदा भव॥

५ ॐ बिल्वाधिष्ठात्रि शिवे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ बिल्वाधिष्ठात्र्यै शिवायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ महादेव - प्रिय - करो, वासुदेव-प्रियः सदा।
उमा-प्रीति-करो वृक्ष! बिल्व-रूप! नमोऽस्तु ते॥

६ ॐ दाडिम्यधिष्ठात्रि रक्त-दन्तिके! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ दाडिम्यधिष्ठात्र्यै रक्त-दन्तिकायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ दाडिमि! त्वं पुरा युद्धे, रक्त-बीजस्य सम्मुखे।
उमा-कार्यं कृतं यस्मादस्माकं वरदा भव॥

७ ॐ अशोकाधिष्ठात्रि शोक-रहिते! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ अशोकाधिष्ठात्र्यै शोक-रहितायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ हर-प्रीति-करो वृक्षो, ह्यशोकः शोक-नाशनः।
दुर्गा-प्रीति-करो यस्मान्मामशोकं सदा कुरु॥

८ ॐ मानाधिष्ठात्रि चामुण्डे! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखी-कृता भव, ॐ मानाधिष्ठात्र्यै चामुण्डायै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ यस्य पत्रे वसेद् देवी, मान-वृक्षः शची-प्रियः।
मम चानुग्रहार्थाय, पूजां गृह्ण प्रसीद मे॥

९ ॐ धान्याधिष्ठात्रि महा-लक्ष्मि! इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निरुद्धस्व, इह सम्मुखीकृता भव, ॐ धान्याधिष्ठात्र्यै महा-लक्ष्म्यै नमः गन्धं समर्पयामि इत्यादि।

ॐ जगतः प्राण - रक्षार्थं, ब्रह्मणा निर्मितं पुरा।
उमा-प्रीति-करं धान्यं, तस्मात् त्वं रक्ष मां सदा॥

अन्त में **'नव-पत्रिका-वासिन्यै दुर्गायै नमः'** मन्त्र से षोडशोपचार-पूजन कर निम्न मन्त्र से **प्रणाम** करे—

ॐ पत्रिके नव - दुर्गे! त्वं, महादेव-मनोरमे!
पूजां समस्तां संगृह्य, रक्ष मां त्रि-दशेश्वरि॥

आवरण-पूजा

'ॐ आवरण-देवता इहागच्छ' से आवाहन कर **'ॐ दुर्गे हृदयाय नमः'** से पञ्चोपचार-पूजन करे। इसी प्रकार **'ॐ दुर्गे शिरसे स्वाहा नमः, ॐ दुर्गायै शिखायै वषट् नमः, ॐ भूत-रक्षणि कवचाय हुम् नमः, ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि नेत्र-त्रयाय वौषट् नमः, ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि अस्त्राय फट् नमः, ॐ जं जयायै नमः, ॐ विं विजयायै नमः, ॐ कीं कीर्त्यै नमः, ॐ प्रीं प्रीत्यै नमः, ॐ प्रं प्रभायै नमः, ॐ श्रं श्रद्धायै नमः, ॐ**

श्रुं श्रुत्यै नमः, ॐ मं मेधायै नमः, ॐ शङ्खाय नमः, ॐ चक्राय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ चापाय नमः, ॐ शराय नमः' से पूजन कर **'ॐ इन्द्राय सवज्राय सवाहनाय स-परिवाराय नमः'** से और इसी प्रकार **'अग्नये स-शक्तये, यमाय स-दण्डाय, निर्ऋतये स-खड्गाय, वरुणाय स-पाशाय, वायवे सांकुशाय, कुबेराय स-गदाय, ईशानाय स-शूलाय, ब्रह्मणे स-पद्माय, अनन्ताय स-चक्राय नमः'** से पूजन कर मूल-मन्त्र से **पाँच पुष्पाञ्जलियाँ** देकर अष्टोत्तर-सहस्र बार मूल-मन्त्र का **जप** कर **'ॐ गुह्याति०'** से जप-समर्पण कर **'सर्व-मङ्गल०'** इत्यादि से साष्टाङ्ग प्रणाम कर **नीराजन** करे। तब **कल्पारम्भ-घट** में पञ्चोपचार से देवी का **पूजन** करे।

* * *

अष्टमी का कर्म-विधान

प्रातःकृत्य कर आचमन से **न्यास**-पर्यन्त कर्म कर देवी का **'ध्यान'** कर दर्पण के प्रतिबिम्ब में तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर बिल्व-शाखा-रूप दन्त-काष्ठ निम्न मन्त्र से प्रदान करे—

ॐ **आयुर्बलं यशो - वर्चः, प्रजा-पशु-वसूनि च।**
ब्रह्म-विद्यां च मेधां च, त्वन्नो धेहि वनस्पते॥

फिर उष्णोदक— **'ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः'** से निवेदन कर महा-स्नान का सङ्कल्प कर **सप्तमी-पूजा-विधि** के अनुसार स्नान कराए। तब **देवी का ध्यान** कर मानसोपचारों से पूजा कर **विशेषार्घ्य**-स्थापन से **'नव-पत्रिका'-पूजन** तक **सप्तमी-विधान**-वत् कर **देवी की आवरण पूजा** करे।

पूर्व-दल में—**'ॐ उग्र-चण्डे इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं उग्र-चण्डायै नमः'** से पञ्चोपचार पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **उग्र - चण्डा तु वरदा, मध्याह्नार्क-सम-प्रभा।**
सा मे सदाऽस्तु वरदा, तस्यै नित्यं नमो नमः॥

आग्नेय-दल में—**'ॐ प्रचण्डे इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं प्रचण्डायै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **प्रचण्डे पुत्रदे! नित्यं, प्रचण्ड-गण-संस्थिते!**
सर्वानन्द-करे देवि! तुभ्यं नित्यं नमो नमः॥

दक्षिण-दल में—**'ॐ चण्डोग्रे इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं चण्डोग्रायै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **लक्ष्मीस्त्वं सर्व-भूतानां, सर्व-भूताभय-प्रदा।**
देवि! त्वं सर्व-कार्येषु, वरदा भव शोभने॥

नैर्ऋत में— **'ॐ चण्ड-नायिके इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं चण्ड-नायिकायै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **या सिद्धिरिति नाम्ना तु, देवेश-वर-दायिनी।**
कलि-कल्मष-नाशाय, नमामि चण्ड-नायिकां॥

पश्चिम में—**'ॐ चण्डे इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं चण्डायै नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ देवि चण्डात्मिके चण्डि! चण्डारि-विजय-प्रदे!

धर्मार्थ - मोक्षदे दुर्गे! नित्यं मे वरदा भव॥

वायव्य दल में—**'ॐ चण्डवति इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं चण्डवत्यै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **या सृष्टि - स्थिति-संहार-गुण-त्रय-समन्विता।**

या परा शक्तयस्तस्यै, चण्ड-वत्यै नमो नमः॥

उत्तर में—**'ॐ चण्ड-रूपे इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं चण्ड-रूपायै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **चण्ड-रूपात्मिका चण्डी, चण्ड-नायक-नायिका।**

सर्व-सिद्धि-प्रदा देवी, तस्यै नित्यं नमो नमः॥

ईशान में—**'ॐ अति-चण्डिके इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं अति-चण्डिकायै नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **बालार्कारुण-नयना, सर्वदा भक्त-वत्सला।**

चण्डासुरस्य मथनी, वरदास्त्वति-चण्डिका॥

तदनन्तर पद्म के मध्य में—**'ॐ चतुःषष्टि-योगिन्यै इहागच्छत'** से आवाहन कर **'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्माण्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं रौद्र्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं गौर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्राण्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कौमार्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं वैष्णव्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं दुर्गायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं नारसिंह्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कालिकायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चामुण्डायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शिव-दूत्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं वाराह्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कौशिक्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं माहेश्वर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शाङ्कर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं जयन्त्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं सर्व-मङ्गलायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं काल्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कपालिन्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं मेधायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शिवायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शाकम्भर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं भीमायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शान्तायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं भ्रामर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं रुद्राण्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं अम्बिकायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं क्षमायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं धात्र्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं स्वाहायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं स्वधायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं अपर्णायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं महोदर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं घोर-रूपायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं महा-काल्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं भद्र-काल्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं भयङ्कर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं क्षेमङ्कर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं उग्र-चण्डायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं प्रचण्डायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्डोग्रायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्ड-नायिकायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्डायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्ड-वत्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्ड्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं महा-मोहायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं प्रियङ्कर्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं बल-विकरण्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं बल-प्रमथन्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं मनोन्मथन्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं सर्व-भूत-दमन्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं उमायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं तारायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं महा-निद्रायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं विजयायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं जयायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शैल-पुत्र्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चण्डिकायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं चन्द्र-घण्टायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कूष्माण्डायै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं स्कन्द-मात्रे नमः, ॐ ह्रीं श्रीं कात्यायन्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं काल-रात्र्यै नमः, ॐ ह्रीं श्रीं महा-देव्यै नमः।**

फिर पत्रों के अग्र भाग में— **'कोटि-योगिन्य इहागच्छत'**

रे. आवाहन कर **‘ॐ ह्रीं श्रीं कोटि-योगिनीभ्यो नमः’** से पूजन करे।

तब देवी के ईशान में—**‘ॐ ब्रह्माणि इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ ब्रह्माण्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **चतुर्मुखीं जगद्धात्रीं, हंसारूढां वर-प्रदाम्।**
सृष्टि-रूपां महा-भागां, ब्रह्माणीं तां नमाम्यहं॥

वहीं पर **‘ॐ माहेश्वरि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ माहेश्वर्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **माहेश्वरीं शुभां शुभ्रां, त्रिनेत्रां वरदां शिवाम्।**
माहेश्वरीं नमाम्यहं, सृष्टि - संहार-कारिणीम्॥

आग्नेय में—**‘ॐ कौमारि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ कौमार्यै नमः** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **कौमारीं पीत - वसनां, मयूर-वर-वाहनाम्।**
शक्ति-हस्तां सिताङ्गीं तां, नमामि वरदां सदा॥

वहीं पर—**‘ॐ वैष्णवि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ वैष्णव्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **शङ्ख - चक्र-गदा-पद्म-धारिणीं कृष्ण-रूपिणीम्।**
स्थिति-रूपां खगेन्द्रस्थां, वैष्णवीं तां नमाम्यहं॥

नैर्ऋत्य दल में—**‘ॐ वाराहि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ वाराह्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **वाराह - रूपिणीं देवीं, दंष्ट्रोद्धृत-वसुन्धराम्।**
शुभदां पीत-वसनां, वाराहीं तां नमाम्यहम्॥

वहीं पर **‘ॐ नारसिंहि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ नारसिंह्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **नृसिंह - रूपिणीं देवीं, दैत्य-दानव-दर्पहाम्।**
शुभां शुभ-प्रदां शुभ्रां, नारसिंहीं नमाम्यहं॥

वायव्य दल में—**‘ॐ इन्द्राणि! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ इन्द्राण्यै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **इन्द्राणीं गज-कुम्भस्थां, सहस्र-नयनोज्ज्वलां।**
नमामि वरदां देवीं, सर्व-देव-नमस्कृतां॥

वहीं पर **‘ॐ चामुण्डे! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ चामुण्डायै नमः’** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **चामुण्डां मुण्ड-मथनीं, मुण्ड-मालोप-शोभितां।**
अट्टाट्टट-हास-मुदितां, नमाम्यात्म-विभूतये॥

पद्म के मध्य में—**‘ॐ चण्डिके! इहागच्छ’** से आवाहन कर **‘ह्रीं श्रीं ॐ चण्डिकायै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **कात्यायनीं दश-भुजां, महिषासुर-मर्दिनीं।**
प्रसन्न-वदनां देवीं, वरदां तां नमाम्यहम्॥

वहीं पर **‘ह्रीं श्रीं ॐ दुर्गायै नमः’** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **चण्डिके नव - दुर्गे! त्वं महादेव-मनोरमे!**
पूजां समस्तां संगृह्य, रक्ष मां त्रिदशेश्वरि॥

अब निम्न मन्त्र से **भगवती दुर्गा** को **तीन पुष्पाञ्जलियाँ** दे—

एष पुष्पाञ्जलिः **ह्रीं श्रीं ॐ दुर्गायै नमः।**

इसके बाद **'ॐ जयन्त्याद्या! इहागच्छ'** से आवाहन कर **'ह्रीं श्रीं ॐ जयन्त्यै नमः'** एवं इसी प्रकार **ह्रीं श्रीं मङ्गलायै नमः, ह्रीं श्रीं काल्यै नमः, ह्रीं श्रीं भद्रकाल्यै नमः, ह्रीं श्रीं कपालिन्यै नमः, ह्रीं श्रीं दुर्गायै नमः, ह्रीं श्रीं शिवायै नमः, ह्रीं श्रीं क्षमायै नमः, ह्रीं श्रीं धात्र्यै नमः, ह्रीं श्रीं स्वाहायै नमः, ह्रीं श्रीं स्वधायै नमः** से पूजा करे।

अस्त्र-पूजा—१ **'ॐ त्रिशूलाय नमः'** से पूजन कर प्रणाम करे—

ॐ **सर्वायुधानां प्रथमो, निर्मितस्त्वं पिनाकिना।**
शूलात् सारं समाकृष्य, कृत्वा मुष्टि-ग्रहं शुभं॥

२ **'ॐ खड्गाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **असिर्विशसनः खड्ग! तीक्ष्ण-धारो दुरासदः।**
श्रीगर्भे विजयश्चैव, धर्म-पाल! नमोऽस्तु ते॥

३ **'ॐ सुदर्शन-चक्राय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **चक्र! त्वं विष्णु-रूपोऽसि, विष्णु-पाणौ सदा स्थितः।**
देवी - हस्त - स्थितो नित्यं, सुदर्शन! नमोऽस्तु ते॥

४ **'ॐ तीक्ष्ण-वाणाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **सर्वायुधानां श्रेष्ठोऽसि, दैत्य-सेना-निसूदनः।**
भयेभ्यः सर्वतो रक्ष, तीक्ष्ण-वाण! नमोऽस्तु ते॥

५ **'ॐ शक्तये नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **शक्तिस्त्वं सर्व-देवानां, गुहस्य च विशेषतः।**
शक्ति-रूपेण सर्वत्र, रक्षां कुरु नमोऽस्तु ते॥

६ **'ॐ खेटकाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **यष्टि - रूपेण खेट! त्वमरि-संहार-कारकः।**
देवी-हस्त-स्थितो नित्यं, मम रक्षां कुरुष्व॥

७ **'ॐ पूर्ण-चापाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **सर्वायुध महामात्र, सर्व - देवारि - सूदन!**
चाप! मां सर्वतो रक्ष, साकं सायक-सत्तमैः॥

८ **'ॐ नाग-पाशाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **पाश! त्वं नाग-रूपोऽसि, विष-पूर्णो विषोदरः।**
शत्रूणां दुस्सहो नित्यं, नाग-पाश! नमोऽस्तु ते॥

९ **'ॐ अंकुशाय नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **अंकुशोऽसि नमस्तुभ्यं, गजानां नियमः सदा।**
लोकानां सर्व - रक्षार्थं, विधृतः पार्वती-करे॥

१० **'ॐ घण्टायै नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **हिनस्ति दैत्य - तेजांसि, स्वनेनापूर्य या जगत्।**
सा घण्टा पातु नो देवि! पापेभ्यो नः सुतानिव॥

११ **'ॐ परशवे नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **परशो! त्वं महा - तीक्ष्णः, सर्व-देवारि-सूदनः।**
देवी-हस्त-स्थितो नित्यं, शत्रून् क्षय नमोऽस्तु ते॥

१२ **'ॐ दुर्गायै सर्वायुध-धारिण्यै नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **सर्वायुधानां श्रेष्ठानि, यानि यानि त्रिपिष्टपे।**
तानि तानि दधत्यैः ते, चण्डिकायै नमो नमः॥

अब तीन पुष्पाञ्जलियाँ **'एष पुष्पाञ्जलिः ह्रीं श्रीं ॐ दुर्गायै नमः'** से प्रदान करे।

तदनन्तर **'ॐ किरीटादिभ्यो देव्यङ्ग-प्रत्यङ्ग-भूषणेभ्यो नमः'** से एकत्र ही सब आभूषणों में पूजा करे।

फिर **'ॐ वज्र-नख-दंष्ट्रायुधाय महा-सिंहाय हुं फट् नमः'** से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **आसनं चासि दुर्गाया, नानालङ्कार-भूषितं।**
मेरु-शृङ्ग-प्रतिकाश, सिंहासन! नमोऽस्तु ते॥

'ॐ महिषासुराय नमः' से पूजा कर प्रणाम करे—

ॐ **महिष! त्वं महावीर, सर्वाभीष्ट-प्रदायकः।**
विनाशय महा-शत्रून्, धर्मराज-पदालय॥

इसके बाद **'ॐ बटुका इहागच्छत'** से आवाहन कर **'ह्रीं श्रीं'** वीजों से प्रत्येक का पञ्चोपचार से पूजन करे। यथा—**'ह्रीं श्रीं ॐ सिद्ध-पुत्र-बटुकाय नमः।' 'ह्रीं श्रीं ज्ञान-पुत्र-बटुकाय नमः।' 'ह्रीं श्रीं सहज-पुत्र-बटुकाय नमः।' 'ह्रीं श्रीं समय-पुत्र-बटुकाय नमः।'**

तदनन्तर **'ॐ क्षेत्रपाला इहागच्छत'** इत्यादि से आवाहन कर प्रत्येक का पञ्चोपचार-पूजन करे। यथा—

'ह्रीं श्रीं ॐ हेतुकाय **क्षेत्रपालाय** नमः। **ह्रीं श्रीं ॐ त्रिपुरघ्नाय क्षेत्रपालाय** नमः। **ह्रीं श्रीं ॐ अग्नि-जिह्वाय क्षेत्रपालाय नमः। ह्रीं श्रीं ॐ अग्नि-वेतालाय क्षेत्र-पालाय नमः। ह्रीं श्रीं ॐ कालाय क्षेत्रपालाय नमः। ह्रीं श्रीं ॐ करालाय क्षेत्रपालाय नमः। ह्रीं श्रीं ॐ एक-पादाय क्षेत्रपालाय नमः। ह्रीं श्रीं ॐ भीषणाय क्षेत्रपालाय नमः।**

तब **'ॐ भैरवा इहागच्छत'** इत्यादि से आवाहन कर प्रत्येक का पञ्चोपचार-पूजन करे। यथा— **'ॐ असिताङ्गाय भैरवाय नमः।'** इसी प्रकार— **'ॐ रुरवे भैरवाय नमः, ॐ चण्डाय भैरवाय नमः, ॐ क्रोधाय भैरवाय नमः, ॐ उन्मत्ताय भैरवाय नमः, ॐ कपालिने भैरवाय नमः, ॐ भीषणाय भैरवाय नमः, ॐ संहाराय भैरवाय नमः।'**

इसकी बाद **सप्तमी-विधान**-वत् **दिक्-पालों की पूजा** कर बलिदान कर, पुष्पाञ्जलि आदि दे।

सन्धि-पूजा (अष्टमी-नवमी-सन्धि)

अष्टमी-नवमी के सन्धि-काल में आचमन कर विष्णु-स्मरण-पूर्वक **सामान्यार्घ्य-स्थापन** से **भूत-शुद्धि** तक कर्म कर **'ह्रीं श्रीं'** इस मन्त्र से तीन प्राणायाम कर **'ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः'** इत्यादि से **कराङ्ग-षडङ्ग-न्यास** कर निम्न ध्यान करे—

ॐ **काली कराल-वदना, विनिष्क्रान्तासि-पाशिनी।**
विचित्र - खट्वाङ्ग - धरा, नर-माला-विभूषणा॥
द्वीपि - चर्म-परीधाना, शुष्क-मांसाति-भैरवा।
अति - विस्तार-वदना, जिह्वा ललन-भीषणा॥
निमग्ना रक्त-नयना, नादापूरित-दिङ्-मुखा॥

इस प्रकार ध्यान कर अपने शिर पर पुष्प देकर मानसोपचारों से पूजन कर **विशेषार्घ्य** स्थापित कर **गणेशादि पञ्च देवताओं, आदित्यादि नव-ग्रहों** और **इन्द्रादि दिक्-पालों का पञ्चोपचार-पूजन** करे।

फिर **'नव-पत्रिका-वासिन्यै दुर्गायै नमः ॐ सर्व-देवताभ्यो**

नमः' से पूजा कर देवी का ध्यान कर **'ॐ चामुण्डे! इहागच्छ'** इत्यादि से आवाहन कर **'ह्रीं श्रीं ॐ चामुण्डायै नमः'** से षोडशोपचार पूजन करे।

तब **'ॐ चतुःषष्टि-योगिनीभ्यो नमः, ॐ कोटि-योगिनीभ्यो नमः, ॐ अष्ट-नायिकाभ्यो नमः, ॐ अस्त्रेभ्यो नमः, ॐ भूषणेभ्यो नमः, ॐ प्रतिमास्थ-देवताभ्यो नमः, ॐ चित्रस्थ-देवताभ्यो नमः'** से पञ्चोपचार-पूजन कर नवमी दण्ड में बलिदान कर दीप-माला सजाकर **'एते गन्ध-पुष्पे एतस्यै दीप-मालाय नमः, एतदधिपतये ॐ अग्नये नमः, एतत् सम्प्रदानाय ॐ चामुण्डायै नमः, एषा दीप-माला ह्रीं श्रीं ॐ चामुण्डायै नमः'** से देकर तैजसाधार भोज्यासन शय्यादिक प्रदान करे।

अन्त में **पुष्पाञ्जलि** देकर **आरती** कर **'ॐ सर्व-मङ्गल०'** इत्यादि से प्रणाम करे।

* * *

नवमी का कर्म-विधान

अष्टमी-विधान में **आवाहन** छोड़कर सभी कर्म करे। दन्त-काष्ठ हेतु अपामार्ग दे। **आरती** के बाद **दीप-माला** का पूर्व-वत् पूजन कर **'एषा दीप-माला ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः'** से निवेदन कर स्व-शाखोक्त विधि से **वह्नि-संस्थापन** कर **'ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा'** से अष्टोत्तर-शत साज्य-तिल-बिल्व-पत्रों से **होम** करे। प्रत्यक्ष देवता-होम के स्थल में—**'ॐ नव-पत्रिका-वासिन्यै दुर्गायै स्वाहा। ॐ लक्ष्म्यै स्वाहा। ॐ सरस्वत्यै स्वाहा। ॐ कार्तिकेयाय स्वाहा। ॐ वज्र-नख-दंष्ट्रायुधाय महा-सिंहाय हुं फट् स्वाहा। ॐ महिषासुराय स्वाहा। ॐ नाग-पाशाय स्वाहा। ॐ मूषिकाय स्वाहा। ॐ मयूराय स्वाहा। ॐ शिवाय स्वाहा। ॐ विष्णवे स्वाहा'** से प्रत्येक को साज्य-तिलों की आहुति दे।

कुमारी-पूजा

होम के बाद **कुमारी** को लाकर **देवी-बुद्धि** से पूजा करे— **'विष्णुरोमद्य'** इत्यादि **वार्षिक-शरत्कालीन दुर्गा-महा-पूजादि-कर्मणः परिपूर्ण-फल-प्राप्ति-कामः कुमारी-पूजनमहं करिष्ये (परार्थे करिष्यामि)'**—इस प्रकार सङ्कल्प कर **'ऐं एतज्जलं ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, ह्रीं एतत् पाद्यं ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, श्रीं इदमर्घ्यं ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, हुं एष गन्धः ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, ऐं एतत् पुष्पं ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, ह्सौः एष धूपः ॐ अमुक-कुमार्यै नमः, ह्सौः एष दीपः ॐ अमुक-कुमार्यै नमः'** इस प्रकार पूजन कर षडङ्ग-पूजन करे। यथा—

एते गन्ध-पुष्पे ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्सौः कुल-कुमारिके हृदयाय नमः, ह्रैं वैं ह्रैं ऐं स्वाहा शिरसे स्वाहा नमः, ऐं ह्रीं शिखायै वषट् नमः, ऐं वागीश्वरि कवचाय हुम् नमः, ऐं कुलेश्वरि नेत्र-त्रयाय वौषट् नमः, ह्रीं अस्त्राय फट् नमः।

तदनन्तर **'ऐं सिद्ध-जयाय पूर्व-वक्त्राय नमः, ऐं जयाय**

उत्तर-वक्त्राय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं कुब्जिके पश्चिम-वक्त्राय नमः, ऐं कालिके दक्ष-वक्त्राय नमः' से पूजन करे।

फिर कुमारी को वस्त्र पहना कर भोजन कराकर तीन बार उसकी प्रदक्षिणा कर उसे दक्षिणा प्रदान करे। यथा—अद्येत्यादि वार्षिक शरत्कालीन-दुर्गा-पूजादि-परिपूर्ण-फल-प्राप्ति-कामनया कृतैतत्-कुमारी-पूजा-कर्मणः साङ्गतार्थं दक्षिणामिदं स्वर्णं मौक्तिकं वा श्रीविष्णु-दैवतं यथा-सम्भव-गोत्र-नाम्न्यै अमुक-कुमार्यै तुभ्यमहं सम्प्रददे।

तब मूल-दक्षिणा दे। यथा—विष्णुरोमित्यादि श्रीदुर्गा-प्रीति-कामनया कृतैतत् वार्षिक-शरत्कालीन-दुर्गा-महापूजा-कर्मणा साङ्गतार्थं दक्षिणामिदं काञ्चन-मूल्यं श्रीविष्णु-दैवतं यथा-सम्भव-गोत्र-नाम्न्यै श्रीदुर्गा देव्यै तुभ्यमहं सम्प्रददे।

इसके बाद हाथ जोड़कर निम्न मन्त्र पढ़े—ॐ कृतैतद्-वार्षिक-शरत्कालीन-दुर्गा-महापूजा-कर्माच्छिद्रमस्तु। ब्राह्मणः ॐ अस्तु।

तब 'विष्णुरोमद्येत्यादि दुर्गा-महापूजा-कर्मणि यद्-वैगुण्यं जातं तद्-दोष-प्रशमनाय श्रीविष्णु-स्मरणमहं करिष्ये' इस प्रकार सङ्कल्प कर 'ॐ विष्णुः' मन्त्र का दश बार जप करे। अन्त में निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ अज्ञानाद् यदि वा मोहात्, प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः, सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

ॐ यदसाङ्गं कृतं कर्म, जानता वाप्यजानता।
साङ्गं भवतु तत् सर्वं, हरेर्नामानुकीर्तनात्।।

जल-गण्डूष लेकर—

ॐ प्रीयतां पुण्डरीकाक्षः, सर्व-यज्ञेश्वरो हरिः।
तस्मिंस्तुष्टे जगत्तुष्टं, प्रीणिते प्रीणितं जगत्।।

ॐ एतत् कर्म श्रीकृष्णाय अर्पितमस्तु।

यह कहकर भूमि पर छोड़ दे।

* * *

दशमी का कर्म-विधान

आचमन कर सामान्यार्घ्य-स्थापनादि कर गणेशादि देवताओं की पूजा, देवी का ध्यान, पञ्चोपचार-पूजन कर निवेदन करे—

एतत् दधिकरम्बं ह्रीं दुर्गायै नमः।

तथा हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

ॐ विधि-हीनं क्रिया-हीनं, भक्ति-हीनं यदर्चितं।
पूर्णं भवतु तत्सर्वं, त्वत्प्रसादान्महेश्वरि।।

ॐ अर्घ्यं पुष्पं च नैवेद्यं, माल्यं मलय-वासिनि!
गृहाण वरदे देवि! कल्याणं कुरु मे सदा।।

ॐ ग्रहीतुं शारदीं पूजां, मर्त्त-मण्डल-संस्थिता।
चण्डिके! त्वां नमाम्यद्य, स्वयमर्घ्यादि गृह्यतां।।

ॐ राज्यं तस्य प्रतिष्ठा च, लक्ष्मीस्तस्य सदा स्थिरा।
प्रभुत्वं तस्य सामर्थ्यं, यस्य त्वं मस्तकोपरि।।

ॐ **निर्वीर्यो निर्गुणो वापि, सत्याचार-विवर्जितः।**
नरः पौरुषमाप्नोति, यस्य त्वं मस्तकोपरि॥

ॐ **स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः, स कुलीनः स बुद्धिमान्।**
स शूरः स च विक्रान्तो, यस्त्वया देवि वीक्षितः॥

ॐ **धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं, सफलं जीवितं मम।**
आगताऽसि यतो दुर्गे, माहेश्वरि! मदाश्रमं॥

अब **नीराजन** कर **योनि-मुद्रा** दिखा कर **'ॐ दुर्गे देवि परिवार-गण-सहिते! क्षमस्व'** से **घट का सम्प्रोक्षण** कर उसे कुछ हिलाकर **'संहार'-मुद्रा** से एक पुष्प उठाकर सूंघे और मन्त्र पढ़े—

ॐ **उत्तरे शिखरे देवि! भूम्यां पर्वत-वासिनि!**
ब्रह्म-योनि-समुत्पन्ने, गच्छ देवि! ममान्तरं॥

फिर सुषुम्ना से तत्-तेज को अपने हृदय में लाकर ईशान कोण में एक **अधो-मुख त्रिकोण-मण्डल** बना उस पर **'ॐ चण्डेश्वर्यै नमः'** से निर्माल्य छोड़े। हाथ जोड़कर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ **उत्तिष्ठ देवि चामुण्डे! शुभां पूजां प्रगृह्य च।**
कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह॥

ॐ **गच्छ गच्छ परं स्थानं, स्व-स्थानं परमेश्वरि!**
यत्पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे॥

ॐ **गच्छ गच्छ परं स्थानं, यत्र देवो महेश्वरः।**
शत्रु - दर्प - विनाशाय, पुनरागमनाय च॥

ॐ **गच्छ देवि! यथा-स्थानं, दत्वा मे विपुलां श्रियं।**
आयुरारोग्य - सम्पत्तीः, सर्वदा वरदा भव॥

ॐ **गच्छ गच्छ परं स्थानं, स्व-स्थानं परमेश्वरि!**
सम्वत्सरे व्यतीते तु, पुनरागमनाय च॥

ॐ **देवि! त्वं सर्व-भूतानां, भोगदा कामदा सदा।**
दत्वा मे सर्व-सौख्यं च, गच्छ देवि! यथेच्छया॥

इसके बाद **'ॐ व्रज त्वं स्रोतसि जले तिष्ठ गेहे च भूतये'** इस मन्त्र से **देवी-प्रतिमा** और **नव-पत्रिका** को कुछ हिलाकर उसे दर्पण में प्रति-बिम्बित जल में स्थापित कर निम्न मन्त्र पढ़े —

ॐ **निमज्जाम्भसि देवि! त्वं पत्रिका-सहिताम्बिके!**
पुत्रायुर्धन-वृद्ध्यर्थं, स्थापिताऽसि मया जले॥

ॐ **क्षमस्व वरदे देवि! मङ्गल्ये परमेश्वरि!**
सर्वगे शुभगे देवि! दृष्टादृष्ट-फल-प्रदे॥

ॐ **कृता पूजा मया भक्त्या, नव-दुर्गे सुरार्चिते!**
भुक्तवा भोगान् वरं दत्वा, कुरु क्रीडां यथा-सुखं॥

ॐ **जले तिष्ठ महामाये! नृणां सन्ताप-नाशिनि!**
यत एवागता देवि! तत्रैव प्रति-गम्यताम्॥

तदन्तर **गणेश-घट**, **कल्पारम्भ-घट** और **बोधन-घट** को **'क्षमस्व'** से **विसर्जित** करे।

अपराह्न में **अपराजिता का पूजन** करे; यथा—

स्वस्तिवाचन कर **'विष्णुरोमद्येत्यादि क्षेम-कामः**

अपराजिता-पूजनमहं करिष्ये' इस प्रकार **सङ्कल्प** करे। फिर **'आं अंगुष्ठाभ्यां नमः'** इत्यादि से न्यासादिक कर **ऋष्यादि-न्यास** करे—

शिरसि ॐ वेदव्यासाय नमः। मुखे ॐ अनुष्टुभे छन्दसे नमः। हृदि ॐ अपराजितायै नमः। गुह्ये ऐं बीजाय नमः। पादयोः ॐ ह्रीं शक्तये नमः। सर्वाङ्गे ॐ ऐं कीलकाय नमः।

फिर **'घट'-स्थापन** कर **गणेशादि-पूजन** कर ध्यान करे। यथा—

ॐ नीलोत्पल-दल-श्यामां, भुजगाभरणोज्ज्वलां।
बालेन्दु-मौलिनीं देवीं, नयन-त्रितयान्वितां॥
शङ्ख-चक्र-धरां देवीं, वरदां भय-नाशिनीं।
पीनोत्तुङ्ग-स्तनां श्यामां, वर-पद्म-सुमालिनीं॥

अब मानसोपचार-पूजन कर पुनः ध्यान-पूर्वक **'ॐ अपराजिते! इहागच्छ'** से आवाहन कर षोडशोपचार-पूजन करे। फिर **'ॐ सर्व-मङ्गल०'** इत्यादि से प्रणाम कर दक्षिणा प्रदान करे।

राजा हेतु **सङ्कल्प-प्रार्थना** निम्न प्रकार से करे—

ॐ हारेण तु विचित्रेण, भास्वत्कनक-मेखला।
अपराजिता भद्र-रता, करोतु विजयं मम॥

पुष्पाञ्जलि-मन्त्र

ॐ आयुर्देहि यशो देहि, भाग्यं भगवति! देहि मे।
पुत्रान् देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे॥
एष पुष्पाञ्जलिः ॐ दुर्गायै नमः।

ॐ हर पापं हर क्लेशं, हर शोकं हरासुखम्।
हर रोगं हर क्षोभं, हर मारीं हर-प्रिये॥

ॐ कायेन मनसा वाचा, कर्मणा यत् कृतं मया।
ज्ञानाज्ञान - कृतं पापं, दुर्गे! त्वं हर दुर्गतिम्।

श्रीदुर्गा-स्तुति

ॐ दुर्गां शिवां शान्ति-करीं, ब्रह्माणीं ब्रह्मणः प्रियां।
सर्व - लोक-प्रणेत्रीं च, प्रणमामि सदा शिवाम्॥
मङ्गलां शोभनां शुद्धां, निष्कलां परमां कलां।
विश्वेश्वरीं विश्व-मातां, चण्डिकां प्रणमाम्यहम्॥
सर्व - देव - मयीं देवीं, सर्व - रोग-भयापहां।
ब्रह्मेश - विष्णु-नमितां, प्रणमामि सदा उमां॥
विन्ध्यस्थां विन्ध्य-निलयां, दिव्य-स्थान-निवासिनीं।
योगिनीं योग-मातां च, चण्डिकां प्रणमाम्यहम्॥
ईशान - मातरं देवीमीश्वरीमीश्वर - प्रियां।
प्रणतोऽस्मि सदा दुर्गां, संसारार्णव - तारिणीं॥
य इदं पठति स्तोत्रं, शृणुयाद् वापि यो नरः।
स मुक्तः सर्व - पापस्तु, मोदते दुर्गया सह॥

* * *

कुमारी-पूजा

*** 'कुल-वाणी-रत्न' पं० सतीशकुमार उपाध्याय, 'चण्डी-धाम', प्रयाग**

'कुमारी-पूजा' से भगवती सद्य: प्रसन्न होती हैं। **'कुमारी-पूजा'** में जाति-भेद नहीं माना गया है। चारों वर्णों की कुमारियों की पूजा, जिनका फल भी भिन्न-भिन्न है, शास्त्र द्वारा निर्दिष्ट है। **'मेरु-तन्त्र'** में लिखा है कि **'ब्राह्मण-कुमारी'** के पूजन से सर्व-इष्ट, **'क्षत्रिय-कुमारी'** के पूजन से यश, **'वैश्य-कुमारी'** के पूजन से धन तथा **'शूद्र-कुमारी'** के पूजन से पुत्र का लाभ होता है। **'स्कन्द-पुराण'** के मत से विपत्ति-काल में **'अन्त्यजा कुमारी'** का पूजन करना चाहिए।

'कुमारी-पूजा' में हेय और काम-बुद्धि अनिष्ट-कारक होती है। अत: सावधान होकर **'कुमारी-पूजा'** करनी चाहिए। **'यामल'** के मत से दो वर्ष से ऊपर की **'कुमारी'** का पूजन विहित है क्योंकि एक-वर्षीया कुमारी की गन्ध, पुष्प, वस्त्र और नैवेद्य के प्रति रुचि नहीं होती। वैसे अन्य ग्रन्थों में **एक वर्ष से षोडश वर्ष** तक की कन्याएँ भिन्न-भिन्न देवतात्मिका कही गई हैं। **'वाडवानलीय तन्त्र'** के अनुसार, **'कुमारी-पूजा'** का उत्तम कल्प-**सात, आठ** और **नौ वर्षीया,** मध्यम कल्प— **पाँच, छः** और **दस-वर्षीया** एवं अधम कल्प—**एक, दो, तीन** और **चार वर्षीया** कुमारी का पूजन है।

'नवरात्र' में **'कुमारी-पूजा'** का महत्त्व बहुत अधिक है। कुमारिकाएँ माँ के प्रत्यक्ष विग्रह हैं। अत: माँ के समान इनका पूजन कल्याण-कारी है। **'प्रतिपदा'** से **'नवमी'** तक कुमारियों को दुर्गा-स्वरूपा मानकर पूजा करनी चाहिए। यदि प्रति-दिन **'कुमारी-पूजा'** सम्भव न हो, तो **'व्रत'** के पारण के दिन **'अष्टमी'** या **'नवमी'** को **'कुमारी-पूजा'** अवश्य करनी चाहिए।

'कुमारी-पूजा' में **'गणेश'** और **'बटुक'** के साथ **सात, पाँच, तीन** या **एक 'कुमारी'** की पूजा करनी चाहिए।। **'गणेश'** और **'बटुक'** की पूजा के लिए छोटे लड़कों को लेना चाहिए। आसन बिछाकर पहले **'गणेश', फिर 'बटुक'**, उसके बाद **'कुमारी-पूजा'** करनी चाहिए।

'गणेश' की पूजा के लिए **'ॐ गं गणपतये नमः'** मन्त्र से १. पाद्य, २. अर्घ्य, ३. गन्ध, ४. दीप, ५.वस्त्र-नैवैद्य आदि से पूजा करे। **'बटुक'** की पूजा के लिए **'ॐ वं वटुकाय नमः'** मन्त्र से १. पाद्य, २.अर्घ्य, ३. गन्ध, ४. दीप और ५. वस्त्र-नैवेद्य आदि से पूजा करे। **'कुमारी-पूजा'** के लिए पहले दोनों हाथों में पुष्प लेकर प्रार्थना करे। यथा—

मन्त्राक्षर - मयीं लक्ष्मीं, मातृणां रूप-धारिणीं ।
नव - दुर्गात्मिकां साक्षात्, कन्यामावाहयाम्यहं ।।
जगत् - पूज्ये जगद् - वन्द्ये, सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि !
पूजां गृहाण कौमरि ! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ।।

उक्त प्रकार **'प्रार्थना'** कर हाथ में लिए पुष्पों को **'कुमारी के चरणों'** पर रखकर प्रणाम करे। फिर **'ॐ कुमार्यै नमः'** मन्त्र से **'कुमारी'** की १. पाद्य, २. अर्घ्य, ३. गन्ध, ४. दीप और ५. वस्त्र-नैवेद्य आदि से पूजा करे। **'पूजा'** करने के बाद सबको **'पुष्प-माला'** पहनाकर भोजन कराए। जब वे भली प्रकार तृप्त हो जाएँ, तब उनका हाथ-मुँह-पैर धुलाकर उनके हाथ में **'दक्षिणा'** प्रदान करें और उन्हें **प्रणाम** करें।

'कुमारी-पूजा' की विस्तृत पूजा-विधि **'नवरात्र-कल्पतरु'** नामक ग्रन्थ में प्रकाशित है। यदि सम्भव हो तो **'कुमारी-पूजा'** कर **'कुमारी-कवच'**, **'कुमारी-स्तोत्र'**, **'कुमारी-सहस्र-नाम'** का पाठ करे।

चैत्रादि मासों, प्रतिपदादि-तिथियों एवं रवि-वारादि दिनों में देवी-नैवेद्य

[किस तिथि में, किस वार में, कौन-सा 'नैवेद्य' लगाना चाहिए, इसकी तालिकाएँ यहाँ दी जा रही है। श्रद्धालु-जन इनके अनुसार यथा-सम्भव पूजन कर विशेष लाभ प्राप्त कर सकते हैं। ये तालिकाएँ **'श्रीमद्-देवी-भागवत'** के आधार पर हैं। 'भारत' के ऋषियों द्वारा यहाँ के वातावरण के अनुरूप निर्दिष्ट इन तालिकाओं का महत्त्व स्वतः स्पष्ट है। हम सभी को इन्हें अपनाकर सहज रूप में लाभ उठाना चाहिए। — सं०]

१. चैत्र आदि मासों में देवी-नैवेद्य

मास	वस्तुएँ एवं पदार्थ
चैत्र	गो-घृत के ५ व्यञ्जन
वैशाख	गुड़
ज्येष्ठ	मधु
आषाढ़	मक्खन या महुआ-रस
श्रावण	दही
भाद्रपद	शक्कर
आश्विन	खीर (पायस)
कार्तिक	दूध
मार्गशीर्ष	फेनी
पौष	लस्सी
माघ	गो-घृत
फाल्गुन	नारिकेल

२. रवि-वार आदि में देवी-नैवेद्य

वार	वस्तु
रवि	खीर
सोम	दूध
मङ्गल	केला
बुध	मक्खन
गुरु	खाँड
शुक्र	चीनी
शनि	गो-घृत

३. प्रतिपदा आदि तिथियों में देवी-नैवेद्य

तिथि	वस्तु	फल
प्रतिपदा	गो-घृत	नीरोगता
द्वितीया	शक्कर	दीर्घायु
तृतीया	दूध	दुःखों से निवृत्ति
चतुर्थी	माल-पूआ	विघ्नों का नाश
पञ्चमी	केला	बुद्धि का विकास
षष्ठी	मधु	सुन्दर व्यक्तित्व
सप्तमी	गुड़	शोक से मुक्ति
अष्टमी	नारिकेल	सन्ताप का निवारण
नवमी	धान का लावा	उभय सुख
दशमी	काले तिल	मृत्यु से निर्भयता
एकादशी	दही	देवी की प्रसन्नता
द्वादशी	चिउड़ा	देवी की प्रसन्नता
त्रयोदशी	चना	सन्तान-प्राप्ति
चतुर्दशी	सत्तू	शङ्कर की भक्ति
पूर्णिमा	खीर	पितर-उद्धार
अमावास्या	खीर	पितरों का उद्धार

★ ★ ★

शरत् - पूर्णिमा : 'लक्ष्मी - इन्द्र - कुबेर - पूजन'

'आश्विन पूर्णिमा' में 'प्रदोष-लक्ष्मी-पूजन'

• *'कुल - वाणी - रत्न' पं० रविशङ्कर मिश्र, चण्डी- कार्यालय, प्रयागराज*

सायं-काल यथा-शक्ति पूजा-सामग्री को एकत्र कर पवित्र आसन पर बैठे। आचमन कर दाएँ हाथ में जल-अक्षत-पुष्प लेकर **'सङ्कल्प'** करे। यथा — **'ॐ अस्यां रात्रौ आश्विन-मासे शुक्ल-पक्षे पूर्णिमायां तिथौ अमुक-गोत्रस्य अमुक-शर्मा (वर्मा/दासः) मम सकल-दुःख-दारिद्र्य-निरास-पूर्वक लक्ष्मी-इन्द्र-कुबेर-पूजनं अहं करिष्यामि (करिष्ये)।**

इसके बाद **'पूजा-स्थान'** के द्वार पर एक **'अष्ट-दल-कमल'** बनाए और उस पर पुष्प-अक्षत चढ़ाकर **'द्वार-देवताभ्यो नमः'** कहकर पूजा करे। फिर गन्ध-पुष्प-अक्षत छोड़कर — **'ॐ द्वारोर्ध्व-भित्तिभ्यो नमः'** कहे। **'ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ वास्तु-पुरुषाय नमः'** से पुनः पुष्पाक्षत चढ़ाए। तब **'ॐ भूर्भुवः स्वः हव्य-वाहन! इहागच्छ इह तिष्ठ!'** कहकर **'अग्नि का आवाहन'** करे। पुनः थोड़ा-सा जल, अक्षत, पुष्प लेकर — **'इदं पाद्यं, इदं अनुलेपनं, इदं अक्षतं, एतानि गन्ध-पुष्पाणि, इदं धूपं, इदं दीपं, इदं ताम्बूलं, इदं नैवेद्यं, एते यव-चूर्ण-घृत-शालि-तण्डुलाः, इदमाचमनीयं, एष पुष्पाञ्जलिः। ॐ हव्य-वाहनाय नमः'** कहकर अर्पित करे।

अब **'चन्द्र-पूजा'** हेतु पहले चन्द्र-देव का **'आवाहन'** करे — **'भो पूर्णेन्दो! इहागच्छ इह तिष्ठ, एषोऽर्घ्यः इन्दवे नमः। एतानि पाद्यानि ॐ पूर्णेन्दवे नमः।'** कहकर थोड़ा-सा गन्धाक्षत, पुष्प जल में डालकर **'पाद्य'** के लिए अर्पित करे। फिर **'इदमनुलेपनं, इदं अक्षतं, इमानि पुष्पाणि, इदं गन्धं, इदं धूपं, इदं दीपं'** और इसके बाद दूध और खीर लेकर **'इदं नैवेद्यं'** कहते हुए पूजा-सामग्री को चन्द्र-देव को अर्पित करे। तब **'इदं ताम्बूलं, इदं दक्षिणा-द्रव्यं, प्रदक्षिणां समर्पयामि'** कहकर भक्ति-सहित **'प्रणाम'** करे।

फिर भार्या के सहित रुद्र का पूजन करे। पहले **'आवाहन'** करे — **'ॐ सभार्य-रुद्र! इहागच्छ इह तिष्ठ'** कहकर पूजा-स्थान पर पुष्प और अक्षत छोड़े। फिर **'एतानि पाद्यादीनि समर्पयामि'** एवं **'ॐ सभार्य-रुद्राय नमः'** कहकर गन्ध-पुष्प चढ़ाए। **'एते माष-तिल-तण्डुलाः ॐ सभार्य-रुद्राय नमः'** कहकर पूर्वोक्त विधि से धूप-दीप आदि अर्पित करे।

तब **'स्कन्दाय नमः'** कहकर स्कन्द-देव की पूजा करे। **'इदं गन्धं, इदं पुष्पं, इदं धूपं, इदं दीपं, इदं नैवेद्यं, इदं ताम्बूलं, इदं दक्षिणा-द्रव्यं, एते माष-तिल-तण्डुलाः ॐ स्कन्दाय नमः'** कहकर पूजा-सामग्री अर्पित करे।

पुनः नन्दीश्वर की पूजा करने हेतु — **'ॐ नन्दीश्वर- मुने! इहागच्छ, इह तिष्ठ, एतानि पाद्यादीनि समर्पयामि। एते माष-तिल-तण्डुलाः ॐ नन्दीश्वर-मुनये नमः'** ऐसा कहकर उपलब्ध पूजा-सामग्री नन्दीश्वर को अर्पित करे।

इसके बाद **'ॐ गोमति! इहागच्छ, इह तिष्ठ'** कहकर **'आवाहन'** करे तथा **'एतानि पाद्यादीनि समर्पयामि, ॐ गोमत्यै नमः'** से पूर्व की भाँति पूजा करे।

'ॐ सुरभि! इहागच्छ, इह तिष्ठ' कहकर **'आवाहन'** करे। **'एतानि पाद्यानि ॐ सुरभ्यै नमः'** से पूजा-सामग्री अर्पित करे। फिर **'ॐ निकुम्भ! इहागच्छ, इह तिष्ठ'** से अक्षत-पुष्प देकर **'एतानि पाद्यादीनि समर्पयामि ॐ निकुम्भाय नमः'** से पूजा कर माष-तिल-तण्डुल (उड़द, तिल, चावल) दे। इसी प्रकार छाग्-वाहन **'हुताशन'** (अग्नि-देव), मेष-वाहन **'वरुण'**, हस्ति-वाहन **'विनायक'**, अश्व-वाहन **'रेवन्त'** का आवाहन कर उनकी पूजा करे। प्रत्येक को उड़द, तिल, चावल का नैवेद्य अर्पित करे।

अब दाएँ हाथ में पुष्प-अक्षत लेकर भगवती लक्ष्मी का ध्यान करे। यथा —

ॐ या सा पद्मासनस्था, विपुल-कटि-तटी, पद्म-दलायताक्षी।
गम्भीरावर्त-नाभिः, स्तन-भर-नमिता, शुभ्र - वस्त्रोत्तरीया॥
लक्ष्मी दिव्यैर्गजेन्द्रैः, मणि-गज-खचितैः, स्नापिता हेम-कुम्भैः।
नित्यं सा पद्म-हस्ता, मम वसतु गृहे, सर्व-माङ्गल्य-युक्ता॥

उक्त प्रकार ध्यान कर 'आवाहनादि-पूजन' करे —

ॐ भूर्भुवः स्वः लक्ष्मि! इहागच्छ इह तिष्ठ, एतानि पाद्याद्याचमनीय-स्नानीयं, पुनराचमनीयम्।

फिर **'लक्ष्मी की प्रतिमा'** अथवा **'लक्ष्मी-यन्त्र'** की पूजा करे। पहले स्नान कराए —

ॐ मन्दाकिन्या समानीतैः, हेमाम्भोरुह-वासितैः स्नानं कुरुष्व देवेशि! सलिलं च सुगन्धिभिः॥
ॐ लक्ष्म्यै नमः॥

तदनन्तर **'इदमनुलेपनं, इदं सिन्दूरं, इदमक्षतं'** से पूजन कर लक्ष्मी देवी को पुष्प-माला और पुष्प अर्पित करे। यथा —

'ॐ मन्दार-पारिजाताद्यैः, अनेकैः कुसुमैः शुभैः। पूजयामि शिवे! भक्त्या, कमलायै नमो नमः॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः, पुष्पाणि समर्पयामि।'

इसके बाद **'इदं रक्त-वस्त्रं, इदं विल्व-पत्रं, इदं माल्यं, एष धूपः, एष दीपं, एतानि नाना-विधि-नैवेद्यानि, इदमाचमनीयं। एतानि नाना-विध-पक्वान्न-सहित-नारिकेलोदक-सहित-नाना-फलानि, ताम्बूलानि, आचमनीयं समर्पयामि'** से पूजा करे।

अन्त में लक्ष्मी जी को तीन पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान कर **'प्रणाम'** करे —

ॐ नमस्ते सर्व-भूतानां, वरदाऽसि हरि-प्रिये! या गतिस्त्वत्-प्रपन्नानां,
सा मे भूयात् त्वद्-दर्शनात्। एष पुष्पाञ्जलिः॥ ॐ महा-लक्ष्म्यै नमः॥

लक्ष्मी जी के पूजन के बाद **'इन्द्र-देव'** का **'ॐ इन्द्राय नमः'** कहकर एवं **'कुबेर'** का **'ॐ कुबेराय नमः'** कहकर गन्धादि से पूजन करे। फिर हाथों में पुष्प लेकर **'ॐ इन्द्राय नमः'**, **'ॐ कुबेराय नमः'** कहकर प्रणाम करे —

ॐ धनदाय नमस्तुभ्यं, निधि-पद्माधिपाय च। भवन्तु त्वत्-प्रसादान्ने, धन-धान्यादि-सम्पदः॥

* * *

श्रीदुर्गा-देव्यै नमो नमः

श्रीचतुर्भुजी दुर्गा

श्रीदश-भुजी दुर्गा

श्रीजगद्धात्री दुर्गा

श्रीअष्ट-भुजी दुर्गा

श्रीमहा-काली

श्रीमहा-लक्ष्मी

श्रीमहा-सरस्वती

जगत् -स्वरूपा श्रीदुर्गा अनन्त स्वरूपोंवाली हैं।
'ज्ञान-कर्म-भक्ति' द्वारा उनको जानने के लिए
हमारे यहाँ उनके कुछ विशिष्ट स्वरूपों का वर्णन हुआ है। यथा-
चतुर्भुजी, अष्ट-भुजी, दश-भुजी, जगद्धात्री,
महा-काली, महा-लक्ष्मी, महा-सरस्वती।
उक्त स्वरूपों को मन-ही-मन देखते हुए पहले उनमें क्रमशः तन्मय होना होता है।
फिर विभिन्न आयुधों से समन्वित विशिष्ट स्वरूप को सदैव सन्मुख रखकर
अपने अन्दर व बाहर स्थित आसुरी प्रवृत्तियों से युद्ध करना होता है और अन्त में
जगत् -स्वरूपा श्रीदुर्गा देवी की शक्ति से
विजयी होकर आत्मोन्नति करनी होती है।

श्री श्रीदुर्गा-देवी

प्रकृति-पुरुषात्मक जगत्-स्वरूपा
आनन्द और अनानन्द-स्वरूपा
विज्ञान और अविज्ञान-रूपा
अखिल जगत्-स्वरूपा
ब्रह्म-स्वरूपा

ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र को धारण करनेवाली
ज्ञान से जगमगानेवाली, दीप्ति-मती
कल्याण-कर्त्री, मङ्गल-मयी देवी
असुरों का नाश करनेवाली
सम्पूर्ण जगत् की ईश्वरी